₹ 30/-

साहित्य अमृत

दिसंबर 2020 • साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक • मासिक • ISSN 2455-1171

VISIT…

साहित्य अमृत

मार्गशीर्ष-पौष, संवत्-२०७७ ❖ दिसंबर २०२० **मासिक**

वर्ष-२६ ❖ अंक-५ ❖ पृष्ठ ८४ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

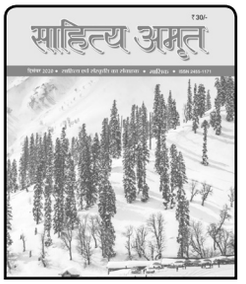

इस अंक में

✍ **संपादकीय**

नए क्षितिज बुलाते हैं… ४

✍ **प्रतिस्मृति**

स्वर्ग और पृथ्वी/ *धर्मवीर भारती* ६

✍ **कहानी**

पोर्ट्रेट की कीमत/ *पुष्पा सक्सेना* १२

काकी/ बसंत कुमार ३६

आहट/ *आलोक यात्री* ४४

दरवाजे/ *लवलेश दत्त* ६०

परछाईं/ *स्वाति गौतम* ६८

✍ **आलेख**

भारत की सांस्कृतिक अस्मिता और जातीय सभ्यता की संवाहिका संस्कृत/ *विनोद कुमार मिश्र* ९

देश की प्रशासनिक व्यवस्था के भारतीयकरण के सूत्रधार सरदार पटेल/ *नलिन चौहान* २४

उत्तर-पूर्व भारत की सांस्कृतिक एकात्मता/ *रसाल सिंह* ३०

फणीश्वरनाथ 'रेणु' का कथेतर साहित्य और उसकी व्यापकता/ *विजय कुमार मिश्र* ३८

बिन पानी सब सून/ *राहिला रईस* ५४

✍ **लघुकथा**

ट्रेन में नशा / *केदारनाथ 'सविता'* २६

चढ़ावा/ *मथुरा कलौनी* ३५

चतुर रिखलाड़ी और जज्बात/ *लता कादंबरी गोयल* ४७

धर्मयुग/ *भगवती लाल सोनी* ५०

लघुकथाएँ/ *रेनू सैनी* ५२

खरा सोना/ *माधव नागदा* ७७

✍ **कविता**

चार गजलें/ *ओमप्रकाश यती* १९

इंतजार करना होगा/ *शशींद्र अग्निहोत्री* ५१

गजल/ *ऋषिपाल धीमान 'ऋषि'* ५६

मौलिक गीत/ *गरिमा सक्सेना* ६७

✍ **राम झरोखे बैठ के**

मौसम के बदलते संकेत/ *गोपाल चतुर्वेदी* २७

✍ **स्मरण**

लोक-जीवन की आस्थाओं की चितेरी नायिका/ *कुमुद शर्मा* २०

जो अनुपम था, कोई उसे ढूँढ़ो/ *अरुण तिवारी* ४८

✍ **व्यंग्य**

तुम कब जाओगे, कोरोना/ नरेंद्र कुमार कुलमित्र ५८

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

कहना नहीं चाहते जो/ *मनमोहन* ५७

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

निर्वाचन/ *मैरी रस्सल मिटफोर्ड* ७१

✍ **यात्रा-वृत्तांत**

सोमनाथ मंदिर : दिव्यता कण-कण में व्याप्त है/ सुमन बाजपेयी ७५

✍ **बाल-संसार**

पानी रे पानी/ *ललित शौर्य* ७४

मन्नत और लड्डू/ *अमिताभ शंकर राय चौधरी* ७८

✍ **पाठकों की प्रतिक्रियाएँ** ७९

✍ **वर्ग-पहेली** ८०

✍ **साहित्यिक गतिविधियाँ** ८१

पोर्ट्रेट की कीमत

• पुष्पा सक्सेना

"हेलो समीर, कहाँ हो? अच्छा जनाब अभी तक सो रहे हैं, अंकल-आंटी मंदिर चले गए तो पूरे दिन सोने की आजादी मिल गई।" समीर को रूम में सोता देख सीमा नाराज हो उठी।

"ऐ सीमा की बच्ची, क्यों सवेरे-सवेरे शोर मचा रही है? संडे को भी चैन से नहीं सोने देती। आज कौन सी आफत आ गई?" आँखें खोलता समीर झुँझला रहा था।

"अच्छा जरा घड़ी तो देखो, साढ़े दस बजे हैं। हम ही मूर्ख हैं, जो सबसे पहला कार्ड देने तुम्हें भागे आए।"

"क्या तेरी शादी का कार्ड है, जो भागी आई है।" समीर ने परिहास किया।

"वाह! क्या बात कही है। अरे, हमारी शादी के कार्ड बाँटने की जिम्मेदारी तो तुम्हारी होगी। जैसे भी हो, पर भाई का फर्ज तो निभाना ही होगा। हम तो तुम्हें अपने हिंदी डिपार्टमेंट के वार्षिकोत्सव यानी एन्युएल फंक्शन का कार्ड देने आए थे।" सीमा ने जवाब दिया।

"तब तो सचमुच तूने अपना और मेरा भी समय बरबाद किया है। भला तेरे हिंदी-साहित्य के वही पौराणिक या पुराने जमाने के नाटक देखने क्यों जाऊँगा?"

"देखो समीर, हमारे हिंदी-साहित्य के विषय में कुछ मत बोलना। तुम जानते ही कितना हो, विज्ञान के विद्यार्थी तो कठोर सत्य में जीते हैं, उन्हें राग-अनुराग के बारे में ज्ञान कैसे होगा। वैसे भी इस बार का नाटक और दूसरे कार्यक्रम देखकर लोग दंग रह जाएँगे।"

"क्यों क्या इस बार बॉलीवुड से कैथरीना कैफ आ रही है?" समीर ने चिढ़ाया।

"अरे, कैथरीना कैफ तो उसके अभिनय के सामने पानी भरेगी। अगर विश्वास न हो तो चलो शर्त रही, अगर तुम्हें प्रोग्राम पसंद नहीं आया तो हम तुम्हें ट्रीट देंगे और अगर पसंद आया तो तुम हमें ट्रीट दोगे, वह भी किसी अच्छे होटल में।" सीमा ने यकीन से कहा, "ठीक है, अगर तुम हारने को तैयार हो तो मुझे शर्त मंजूर है।"

"यह लो कार्ड, इसे सँभाल के रखना वरना बिना कार्ड के एंट्री नहीं मिलेगी। एक और खास बात, ठीक समय पर पहुँच जाना वरना बैठने की जगह नहीं मिलेगी।"

अब तक ९५ कहानी-संग्रह, ५ उपन्यास, ७ बाल पुस्तकें सहित ३१ पुस्तकें प्रकाशित। लगभग तीन सौ कहानियाँ, आलेख, यात्रा-वृत्तांत, प्रतिष्ठित भारतीय व अंतरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। अनेक सम्मानों से अलंकृत व अनेक टीवी सीरियलों के लिए लेखन।

"वाह, इसका मतलब तुम लड़कियों ने अपने प्रोग्राम का अच्छा प्रचार किया है, देखें, कितनी सच्चाई है।"

"वह तो देख ही लोगे, और हमारी जीत के लिए तैयार रहना। अब जा रही हूँ और बहुत से काम हैं। अंकल-आंटी को नमस्ते कह देना।" समीर को कार्ड थमा सीमा चली गई।

समीर और सीमा चचेरे-तयेरे भाई-बहिन थे, पर दोनों के बीच भाई-बहिन से ज्यादा दोस्ती का रिश्ता था। दोनों एक-दूसरे के साथ दिल खोलकर बातें किया करते। समीर के एस.पी. पिता अपने एकमात्र मेधावी बेटे को आई.एएस. बना देखना चाहते थे, पर समीर ने एम.एससी. फिजिक्स में टॉप करके यूनिवर्सिटी में टीचिंग जॉब ही पसंद किया। सीमा भी इस वर्ष हिंदी विषय में एम.ए. फाइनल कर रही थी। समीर की माँ अपने बेटे की नौकरी लगी देख उसके लिए एक सुंदर अच्छी बहू लाने के सपने देख रही थी, पर समीर अभी विवाह के लिए तैयार नहीं था।

नियत दिन फिर सीमा ने फोन करके समीर को प्रोग्राम में ठीक समय पहुँचने की याद दिला दी थी। समीर ने ठीक समय में जाने में ही भलाई समझी, वरना सीमा उसे आसानी से नहीं छोड़ेगी। हिंदी विभाग दूर से ही चमक रहा था। कार्यक्रम के लिए बड़ा सा हॉल विद्युत् लड़ियों और रंगीन फूलों से सजाया गया था। वार्षिक कार्यक्रम में नगर के सभी गण्यमान्य व्यक्ति आमंत्रित थे। द्वार पर दो लड़कियाँ अतिथियों को गुलाब के फूल देकर स्वागत कर रही थीं। धन्यवाद कहते हुए मुसकरा के समीर ने फूल लिये थे। हॉल के भीतर जाने पर समीर को सीमा की कथन की सत्यता ज्ञात हो गई। लोगों की उपस्थिति से हॉल लगभग भर चुका था। सौभाग्यवश एक अच्छी जगह पर समीर को बैठने के लिए एक चेयर मिल गई।

ठीक समय पर दीप प्रज्वलन के बाद सरस्वती वंदना के साथ कार्यक्रम शुरू हुआ था। एक के बाद एक कार्यक्रम समय पर शुरू हो रहे थे, व्यर्थ की प्रतीक्षा की आवश्यकता नहीं थी। समूह नृत्य और गीत सभी मनभावन थे। कार्यक्रमों की गुणवत्ता से यह स्पष्ट था, प्रतिभागियों ने बहुत मेहनत की थी। बीच-बीच में संचालिका मनोरंजक बातें करके खुशियाँ बिखेर रही थीं। हँसी की फुलझड़ियों के रूप में हास्य कविताओं ने भी दर्शकों का अच्छा मनोरंजन किया।

अब अंतिम कार्यक्रम की उद्घोषणा की जा रही थी। आचार्य चतुरसेन की लेखनी से निखरी अपने युग की प्रसिद्ध 'वैशाली की नगर वधू' की नायिका आम्रपाली स्टेज पर नूपुर की मधुर ध्वनि के साथ हलके कदमों से स्टेज पर आ रही थी। जैसे-जैसे मंच का हल्का प्रकाश आम्रपाली के मंच पर आने के साथ तेज होता गया, लोग उस प्रकाश में आम्रपाली के सौंदर्य से अभिभूत होते गए। मंच पर बनाए गए दरबार में आम्रपाली के नृत्यों ने ही नहीं उसके अभिनय ने भी सबको विस्मित कर दिया। इतने सुंदर और स्वाभाविक अभिनय और मनोहारी नृत्य ने मानो उस युग को साकार कर दिया था। समीर ने याद किया उस लड़की का नाम पूजा ही अनाउंस किया गया था। सीमा से उसके बारे में पूछना होगा।

दूसरे दिन समीर ने अपनी हार मानते हुए सीमा से कहा—

"यह तो उस लड़की पूजा का कमाल था, जो तू शर्त जीत गई। तुझे ट्रीट तो दूँगा, पर मेरी भी शर्त है कि तुझे अपने साथ पूजा को भी ट्रीट के लिए ले चलना होगा।"

"क्यों, क्या पूजा का जादू चल गया है, आंटी को बता दूँ, वह तेरा प्रपोजल भिजवा देंगी।" सीमा ने कहा।

"खबरदार जो ऐसा किया, मैं तो उसकी परफॉर्मेंस पर उसे बधाई देना चाहूँगा।"

"उसमें क्या मुश्किल है, पूजा मेरी फ्रेंड है, कल ही उसके घर चलते हैं, वहीं बधाई दे देना। पूजा तो हमारे विभाग की शान है। हमेशा टॉप करती है। तुम्हारी साइंस फैकल्टी के लड़के भी उसे देखने आते हैं।"

"नॉ वे, उसके घर जाकर बधाई नहीं देनी है, कहीं बाहर जैसे अचानक मिल कर बधाई देना चाहूँगा।"

"अगर ऐसा है तो पूजा हर संडे सवेरे योग के लिए रवींद्र पार्क जाती है। तुम क्या सवेरे जल्दी उठ सकोगे? तुम तो संडे को छुट्टी मनाते हो।" सीमा ने बात बनाई।

"अरे, एक दिन जल्दी उठना इतना मुश्किल तो नहीं है। तो पक्का रहा, हम साथ चलेंगे।"

"समझ गई, तीर निशाने पर लगा है। मुझे तो बस अपनी ट्रीट चाहिए।"

"संडे को योग क्लास समाप्त कर के आती पूजा पार्क में सीमा को देखकर चौंक गई। आश्चर्य से बोली—

"अरे सीमा, तू यहाँ, क्या तू भी योग क्लास ज्वॉइन करेगी?"

"हम तो नहीं, पर यह मेरा कजिन समीर सोच रहा है। टॉपर है, अभी यूनिवर्सिटी में लैक्चाररशिप ली है। मेरे चाचाजी तो इसे एडमिनिस्ट्रेटिव जॉब में भेजना चाहते थे, पर इसने टीचिंग लाइन पसंद की है।"

"पता नहीं क्यों, हमारे पापा भी यही चाहते हैं कि एम.ए. कंप्लीट करके कंपटीशन में ट्राय करें, पर हमें तो टीचिंग लाइन ज्यादा पसंद है।"

"यह जान कर खुशी हुई आप भी ऐसा ही सोचती हैं, वरना ज्यादातर लड़कियाँ प्रशासनिक सेवा को प्रिफर करती हैं।" समीर के चेहरे पर खुशी थी।

"समीर, तुम पूजा को बधाई देना चाहते थे, पर उससे मिलकर भूल ही गए।"

"सॉरी, पूजाजी, आपको बहुत-बहुत बधाई। आपका अभिनय बहुत अच्छा था। आपकी वजह से मैं सीमा से शर्त हार गया, अब आपके साथ इसे भी ट्रीट देनी है।"

"मेरी वजह से आप शर्त क्यों हार गए?" पूजा विस्मित थी।

"समीर को विश्वास नहीं था, हमारे विभाग का कार्यक्रम खास तौर पर तेरा अभिनय इतने कमाल का होगा। बस हमने शर्त लगाई थी, अगर इसे प्रोग्राम पसंद आया तो सबसे अच्छी प्रस्तुति देने वाले के साथ हम दोनों होटल में पार्टी करेंगे। हम जीत गए अब हम दोनों को समीर होटल में डिनर देगा।"

"नहीं, यह तो अन्याय है, कार्यक्रम की सफलता में सभी कलाकारों का हाथ है, तब तो सबको पार्टी के लिए ले जाना होगा।" पूजा ने न्यायोचित बात कही।

"सच्चाई यह है कि समीर ने पहले ही कह दिया था, जो बेस्ट परफॉर्मेंस देगा, बस उसी को पार्टी दी जाएगी। देख पूजा, तू मेरा चांस मिस नहीं करा सकती। तुझे तो मेरे लिए चलना ही होगा।"

"हमें माँ से पूछना होगा, पता नहीं वह परमीशन देंगी या नहीं।" पूजा शंकित थी।

"तुझे सोचने की जरूरत नहीं है, हम आंटी से परमीशन ले लेंगे।" सीमा ने यकीन से कहा।

"तो तय रहा शर्त हारने के उपलक्ष्य में इस शनिवार की शाम को सात बजे डिनर के लिए आपको इनवाइट कर रहा हूँ। पूजाजी, आपको हम पिक-अप कर लेंगे।" खुशी से समीर ने कहा।

समीर को शनिवार का बेसब्री से इंतजार था। सीमा से पहले ही पता कर चुका था कि उसने पूजा की माँ से डिनर में जाने की इजाजत ले ली है। पहली बार समीर अपने कपड़ों के लिए कंसर्न था। अंततः अपनी फेवरिट ब्लू शर्ट उसने चुनी थी। उसे स्वयं आश्चर्य था, क्यों न वह पूजा के प्रति जो इतना आकृष्ट था?

शनिवार को सीमा के साथ पूजा को पिक-अप करके वे शहर के नामी होटल पारिजात पहुँचे थे।

"कमाल है समीर, आज बड़े दरियादिल बन रहे हो। हमें तो तुम कॉफी हाउस से आगे कहीं ले ही नहीं गए। यह समीर महा कंजूस है, पूजा। आज तुझे इंप्रेस करने के लिए इस होटल में लाया है।"

"जो जिस लायक होगा, उसे वही तो मिलेगा। आज तो एंज्वॉय कर। फिर कभी चांस मिले या नहीं।"

सबके बैठ जाने पर वेटर ने मेनू-कार्ड थमाया था। समीर ने पूजा से कहा, "आज आप चीफ गेस्ट हैं, आप ही ऑर्डर कीजिए।"

"माफ कीजिए, हम पहले कभी इस होटल में नहीं आए हैं, हमें यहाँ की स्पेशलिटीज के बारे में कुछ पता नहीं है, आप ही ऑर्डर कर दीजिए।" पूजा ने सच्चाई की सादगी से कहा, "अगर आप नॉनवेज पसंद करती हों तो यहाँ का चिकन···"

"नहीं-नहीं, हम तो वेजीटेरियन हैं, पर आप अपनी पसंद का नॉनवेज ऑर्डर कर दीजिए, हमारे पापा भी नॉनवेज पसंद करते हैं। हमें कोई ऑब्जेक्शन नहीं होगा।"

समीर को वेजीटेरियन डिनर का ऑर्डर करते देख पूजा संकुचित थी, पर समीर ने कहा, "आप परेशान न हों, घर में माँ के साथ वेजीटेरियन खाना ही पसंद करता हूँ।" डिनर समाप्त हो जाने के बाद समीर ने पूजा से पूछा, "आपको यहाँ का खाना कैसा लगा, कहीं ऊँची दूकान और फीके पकवान वाली बात तो नहीं थी?"

"जी नहीं, डिनर बहुत अच्छा था, पर यहाँ के सुंदर फूलों की सजावट ने मुझे मुग्ध किया है। फूलों के इतने रंग और वैरायटी पहले कभी नहीं देखी। काश! इन फूलों को इनकी शाखों पर हवा में झूलता देख पाती।" पूजा की सपनीली आँखें फूलों पर निबद्ध थीं।

"आपने ठीक कहा, कई लोग, विशेषकर पर्यटक इस होटल में इन फूलों की सजावट देखने आते हैं।"

"लगता है, पूजा की आज की कविता में ये फूल जरूर आ जाएँगे। फूलों से इसे बेहद प्यार है। जानते हो, समीर हमारी पूजा कवयित्री है। यूनिवर्सिटी में अकसर इसका कविता-पाठ होता है।"

"अगर आप फूलों को इनकी शाखों पर झूलते देखना चाहती हैं, तब तो आपको नूरी बाग चलना होगा। कार से दो-ढाई घंटों में पहुँच जाएँगे। वहाँ रंग-बिरंगे नायाब फूलों का मेला देखने कितने ही लोग जाते हैं।"

"सच यह तो अपूर्व अनुभव होगा, इतने सारे फूल एक साथ, एक जगह।" पूजा जैसे सपना देख रही थी।

"ग्रेट, मुझे एक मैगजीन के लिए फूलों पर एक लेख देना है। पूजा फूलों का मेला देखेगी और हम अपना लेख पूरा कर लेंगे। चलेगी न, पूजा?" सीमा ने पूजा से पूछा।

अंतत: इतवार की प्रात: नूरी बाग जाने का प्रोग्राम तय कर लिया गया। इतवार की सवेरे नूरी बाग जाने के लिए सीमा और पूजा को पिकअप करके समीर ने कार में गीत लगा दिया।

"आपको म्यूजिक से कोई परेशानी तो नहीं है?" पूजा से समीर ने पूछा।

"जी नहीं, संगीत मुझे बहुत प्रिय है। सोते समय भी गीत सुनना मेरी हॉबी है।"

सौभाग्य से मौसम बेहद खुशगवार हो गया था। बदली के साथ हलकी हवा अच्छी लग रही थी। दूर से ही नूरी बाग के रंग-बिरंगे फूलों को हवा में झूलते देख पूजा विस्मय से कह उठी—"ऐसा लग रहा है रंगीन धागों से बुना गया किसी का रेशमी आँचल हवा में लहरा रहा है।"

"आपकी कल्पना भी आपकी तरह से ही सुंदर है, पूजाजी।" अचानक समीर कह गया।

पार्किंग में कार खड़ी कर के समीर के साथ सब बाग में पहुँच गए।

"हम तो बाग के मुख्य अधिकारी के पास बाग की जानकारी लेने जा रहे हैं, वैसे भी हम तो समीर के साथ कई बार इन फूलों से मिल चुके हैं। तुम दोनों फूलों की दुनिया देखो। वैसे समीर तुम्हारे लिए इस बार नया अनुभव होगा। ठीक कहा न समीर?" समीर को देख मुसकराती सीमा चली गई।

"चलिए पूजाजी, हम बाग के इस भाग से फूलों का सौंदर्य देखते हैं।"

"सबसे पहली बात प्लीज, हमें आप सिर्फ पूजा कहें, हम आपसे छोटे हैं। पूजाजी और अपने लिए आप, सुनकर लगता है, हम उम्र में बहुत बड़े हैं।"

"ठीक है, अगर आपकी मेरा मतलब, सॉरी, अगर आपकी इसी में खुशी है तो आज से नहीं अभी से सिर्फ पूजा कहूँगा?" समीर हँस पड़ा।

"थैंक्स, समीरजी!"

फूलों को देखती पूजा जैसे दूसरी ही दुनिया में पहुँच गई थी। अपने कैमरे में फूलों को कैद करती वह अपने को भूल गई थी। कहीं कोई फूलों वाला कोई हिस्सा छूट न जाए। उसे पता नहीं था, उसकी बेध्यानी में समीर उसके कितने ही चित्र खींचता जा रहा था। शाम दस्तक दे रही थी। समीर ने पूजा से कहा, "काफी देर हो गई है, चलिए कुछ स्नैक और कोल्ड ड्रिंक ले लें।"

"माफ कीजिए, हम तो सबकुछ भूल ही गए थे।" पूजा संकुचित थी।

"वह तो देख ही रहा था। सामने ही छोटा सा स्नैक बार है, चलें?"

कुछ स्नैक और कोल्ड ड्रिंक लेकर दोनों ताजगी महसूस कर रहे थे। एक कॉर्नर में एक आदमी फूलों के सुंदर गुलदस्ते बेच रहा था। एक छोटा लड़का फूलों की डंडी काटकर गुलदस्ते बनाने के लिए तैयार कर रहा था। पूजा अब उन तरह-तरह के फूलों वाले गुलदस्तों के चित्र खींच रही थी। समीर ने चुपचाप उस लड़के से एक बहुत सुंदर सुर्ख गुलाब खरीद लिया।

पूजा को गुलाब थमाकर समीर सहास्य बोला, "फूलों की प्रेमिका के लिए सप्रेम यह गुलाबी राजा, भेंट स्वीकार करें।" समीर ने परिहास किया।

"ओह, यह गुलाब कितना सुंदर है, काश इसे इसकी शाख पर खिला देख पाती। शाख पर यह गुलाब कितने गर्व से मुसकराता।" पूजा मायूस दिखी।

"सॉरी, मुझे पता नहीं, किसने इसे इसकी शाख से अलग किया। इस गुलाब ने अगर आपका दिल दुखाया है तो गलती के लिए माफी चाहूँगा।"

"अरे नहीं, यह तो हमारी गलती है जो ऐसी उलटी-सीधी बात कह दी। इस सुंदर गुलाब को तो हम हमेशा अपने पास रखेंगे। सूख जाने पर भी इसे अपनी कविता की किताब में हमेशा रखेंगे।" पूजा भावुक हो उठी।

"थैंक्स, यह मेरी खुशकिस्मती है।" समीर ने गंभीरता से कहा।

घर लौटने का समय आ पहुँचा था। सीमा भी अपने लेख की जानकारी लेकर वापस आ गई थी।

"उम्मीद करती हूँ, तुम दोनों ने साथ में खूब एंज्वॉय किया होगा। हमारा भी काम पूरा हो गया।"

"यहाँ से लौटने का तो मन नहीं है, पर हर अच्छी चीज हमेशा स्थायी तो नहीं हो सकती।" सीमा ने कहा।

"ऐसा क्यों सोचती हो, जब फिर आना चाहोगी, समीर तुम्हें इस फूलों की दुनिया में ले आएगा, ठीक कह रही हूँ न समीर?" सीमा शरारत से मुसकराई।

"नहीं, एक बार ही क्या इनका इतना समय व्यर्थ नहीं किया है? फिर परेशान करना उचित नहीं होगा।"

थैंक्स देकर पूजा अपने घर उतर गई। उसके जाने के बाद समीर ने सीमा से कहा, "तेरी फ्रेंड पूजा तो बहुत भावुक और कोमल दिल वाली है, उसे फूल को तोड़े जाने पर भी दुःख होता है।"

"सच कहो समीर, तुम्हें पूजा पसंद है न? कहो तो आंटी को तुम्हारी पसंद बता दूँ? वैसे इतना तो विश्वास दिला सकती हूँ, पूजा बहुत अच्छी लड़की है। वह सिर्फ मेधाविनी ही नहीं है, वरन् बहुत सच्ची-स्नेही, उदार और बड़ों के आदर-सम्मान में विश्वास रखने वाली लड़की है। उसका पति बहुत लकी होगा।"

"मेरी पसंद से ही तो बात नहीं बनेगी, उसकी भी तो पसंद-नापसंद होनी चाहिए।" समीर ने कहा।

समीर को पूजा अच्छी जरूर लगी थी, पर पूजा का मन जाने बिना वह कोई निर्णय नहीं लेना चाहता था। वह लड़कियों की आजादी में पूरा यकीन रखता था।

"क्यों, क्या मेरे भाई समीर में कोई कमी है? समीर हैंडसम है, बुद्धिमान है, टॉपर है, अच्छी नौकरी में लगा हुआ है, शिक्षित संपन्न परिवार का एकमात्र बेटा है। सबसे बड़ी बात सच्चा और चरित्रवान है। जो लड़की उसकी पत्नी बनेगी, वह भाग्यवान होगी।" सीमा दृढ़ता से समीर से बोली।

"आज पता लगा, मेरी बहिन मुझे इतना प्यार करती है। वरना तो हमेशा मुझ पर रोब ही जमाती है।" समीर ने प्यार से कहा।

दिन बीत रहे थे। समीर अपनी क्लासेज में व्यस्त था, पर जब भी समय मिलता, अपने कंप्यूटर पर सेव की गई पूजा की फोटो अवश्य देख लेता। उसे यही दुःख था फंक्शन के दिन मोबाइल से आम्रपाली के सुंदर रूप में पूजा की फोटो क्यों नहीं खींच ली थी। अचनाक फोन पर सीमा की चहकती आवाज सुनकर समीर चौंक गया।

"समीर, एक खुशखबरी है, कुछ देने का वादा कर तो बताऊँ?"

"देख सीमा अपनी सौदेबाजी की आदत छोड़ दे, बताना है तो बता, वरना आगे भी कभी कुछ नहीं दूँगा।"

"कोई बात नहीं, नुकसान तुम्हारा ही होगा, बाद में मत पछताना। फोन रखती हूँ।"

"ओके, ठीक है बता, कौन सी खबर है, जिसके लिए कुछ देना पड़ेगा।" समीर ने सौदा मान लिया।

"सुनेगा तो खुशी से पागल हो जाएगा। कल शाम पूजा ने हम दोनों को उसके साथ न्यू भारत रेस्टोरेंट में इनवाइट किया है।"

"क्यों क्या कोई खास बात है? कहीं पूजा की सगाई तो नहीं हो गई है?"

"वाह क्या सोच है? अपनी सगाई में तुम्हें क्यों बुलाएगी, तुम उसके उम्मीदवार का मर्डर नहीं कर दोगे?" सीमा ने मजाक में कहा।

"हो सकता है, उसका जन्मदिन हो। उस स्थिति में कोई अच्छी गिफ्ट तो ले जानी चाहिए।"

"उसे फूल बहुत पसंद हैं, एक अच्छा सा बुफे ले चलेंगे।" सीमा ने सलाह दी।

"बिल्कुल नहीं, उसे फूलों को तोड़ा जाना पसंद नहीं है।" समीर को उसे अपना दिया गुलाब याद हो आया।

"वाह, कुछ ही समय में तुम उसके बारे में इतना जान गए। फिर तुम ही सोचो।"

"ठीक है, कुछ सोचता हूँ, तू परेशान मत हो।" कुछ देर सोचने के बाद समीर के ओठों पर मुसकान आ गई।

हाँ, यही गिफ्ट ठीक होगा। एक गोल्डन कलर की फुल साइज सुंदर डायरी के पृष्ठों के कोनों में अपने खीचें हुए पूजा के फोटो लगाने से डायरी खिल उठी। खाली पृष्ठों पर पूजा अपनी कविताएँ लिख सकेगी।

दूसरी शाम सीमा को साथ लेकर समीर रेस्टोरेंट पहुँचा था। उसे कोई गिफ्ट न लाते देख सीमा नाराज हो उठी।

"हम खाली हाथ जाएँगे, कम-से-कम जो कहा था एक बुके ही ले लेते, मेरी बदनामी कराओगे।"

आसमानी परिधान में सज्जित पूजा ने उनका खुशी से स्वागत किया।

"वाह आज तो तू आसमानी परी दिख रही है। बता, आज क्या बात है जो हमें बुलाया है?" सीमा ने पूछा।

"अपनों के साथ खुशी शेयर करने के लिए क्या कोई खास अवसर होना चाहिए?" पूजा ने कहा।

"चलिए, आपने हमें अपना तो माना। हम तो गेस कर रहे थे, शायद आपका जन्मदिन है।" समीर बोला।

"जी नहीं, आपने नूरी बाग दिखाकर हमारा अनगिनत रंगों वाले सुंदर फूलों से परिचय कराया, उसके लिए केवल धन्यवाद शब्द तो बहुत कम है। उस रात हमने दो कविताएँ लिखीं, एक लाल गुलाब पर दूसरी नूरी बाग पर। यही खुशी आपके साथ शेयर करना चाहते थे।" हलकी मुसकान के साथ पूजा ने रहस्य खोला।

"वाह, तब तो आपका नूरी बाग जाना सफल हो गया, आपकी लाल गुलाब कविता में तो दर्द होगा, बेचारे को उसकी शाख से अलग जो कर दिया।"

"जी नहीं, वह तो किसी की भेंट है, बहुत सँभालकर रखा है।" पूजा अचानक कह गई।

"किसकी भेंट है, पूजा? यह तो कोई प्रेम-प्रसंग लग रहा है।" सीमा उत्सुक हो उठी।

"अरे नहीं, हमें तो बस फूलों से प्यार हो गया था। जी चाह रहा था, सारे फूल वैसे ही शाखों पर खिले मुसकराते रहें। समीरजी हमारी उसी कही बात की हँसी बना रहे हैं।" पूजा ने बात बनाई।

खाना खाते हुए हास-परिहास चलता रहा। वापसी के पहले समीर ने कहा, "मेरा एक जरूरी सामान कार में छूट गया है, अभी लेकर आता हूँ।"

समीर ने पूजा के हाथों में सुनहरे कागज में लाल रिबन से बाँधी गई डायरी जब पूजा को दी तो वह चौंक गई। "यह क्या है, आपने व्यर्थ तकल्लुफ किया।" पूजा संकुचित थी।

"खोलकर तो देखो, आपके काम की चीज है।" समीर ने कहा।

डायरी के पृष्ठ खोलते ही पूजा खुशी से कह उठी—"ये सुंदर डायरी तो नूर बाग के फूलों की मेरी यादों को अमर कर देगी, पर आपने मेरी फोटो कब लीं?" डायरी में लगी फूलों के साथ अपनी फोटोज देखकर पूजा विस्मित थी।

"जब आप फूलों से दोस्ती करने में मुझे भूल गई थीं।" समीर ने मजाक में कहा।

"बहुत थैंक्स, इस पर अपनी कविताएँ लिखूँगी।" खुशी से पूजा का सुंदर चेहरा और भी कमनीय हो उठा।

"तब तो आपसे एक वादा चाहिए, जब डायरी के सारे पृष्ठों पर कविताएँ होंगी, तब हम आपकी कविताएँ सुनकर वह दिन सेलीब्रेट करेंगे। कहिए मंजूर है?" समीर ने अपनी मुग्ध दृष्टि पूजा पर निबद्ध की थी।

"ठीक है, कोशिश करूँगी वादा पूरा कर सकूँ।" हलकी मुसकान के साथ पूजा न कहा।

"वाह समीर भाई, तुम तो छिपे रुस्तम निकले। उसके दिल में जगह बनाने के लिए क्या नायाब गिफ्ट दी है।" लौटते हुए सीमा ने समीर को छेड़ा।

"मानती है न मेरे दिमाग को, तेरा बुके दो दिन में सूख जाता, पर मेरी गिफ्ट हमेशा उसके पास रहेगी, मुझे ऐसे याद नहीं करती, पर मेरी गिफ्ट उसे हमेशा मेरी याद दिलाती रहेगी।" गंभीरता से समीर बोला।

"तुम्हारे दिमाग को तो पढ़ लिया, अब जल्दी ही कुछ करना होगा।" सीमा ने मन में तय कर लिया।

सीमा ने फिर देर नहीं की थी, समीर की माँ की खुशी का ठिकाना नहीं था। उनका सपना पूरा होने वाला था। सीमा ने पूजा की तारीफों के पुल बाँध दिए थे। इतना ही नहीं, खुद जाकर पूजा की माँ से समीर के बारे में सारी जानकारी देकर पूजा और समीर के विवाह की बात भी कर ली थी। अंतत: इस संबंध में सीमा के दो लाभ थे। एक तो समीर से बड़ी गिफ्ट मिलने वाली थी। दूसरी, उसकी सहेली पूजा उसकी भाभी बनने वाली थी। पूजा के पेरेंट्स भी उसके विवाह के लिए कोई अच्छा संबंध ढूँढ़ रहे थे। सीमा ने समीर की जो जानकारी दी, वह पूजा के पेरेंट्स के मनोनुकूल थी।

दोनों परिवार आपस में मिल लिये कहीं कोई कमी नहीं थी। सगाई का दिन निश्चित कर लिया गया। सबकुछ इतनी जल्दी तय हो गया। खुशी की बात यह थी कि पूजा ने समीर के साथ अपने विवाह के लिए आपत्ति नहीं की, निश्चित था उसे भी समीर पसंद था और समीर के दिल में तो पूजा ने पहले दिन से ही जगह बना ली थी।

धूमधाम से सगाई की रस्म पूरी हुई थी। लाल साड़ी में पूजा का सौंदर्य और अधिक खिल उठा था। सिल्वर कलर की शेरवानी में समीर भी किसी राजकुमार से कम नहीं लग रहा था। हीरे की अँगूठी पहनाते समीर की निगाह पूजा से हट ही नहीं रही थी। सीमा ने चिढ़ाया—

"समीर भाई, अभी शादी के लिए इंतजार करना होगा। पूजा की शर्त है, शादी उसकी एम.ए. फाइनल की परीक्षा के बाद ही होगी। इंतजार तो कर सकोगे?"

"पूजा के लिए तो पूरी जिंदगी इंतजार कर सकता हूँ, इन कुछ दिनों की क्या बात है।?"

दोनों परिवार आधुनिक विचारधारा के पोषक थे, अत: सगाई के बाद पूजा और समीर को मिलने की आजादी मिल गई थी। साथ में पिक्चर जाना, रेस्त्राँज में डिनर लेने के अलावा समीर पूजा को दर्शनीय स्थानों की सैर कराने भी ले जाता। उनके साथ कभी-कभी सीमा भी होती, पर अकसर वह साथ जाना टाल जाती। दिन खुशी के साथ बीत रहे थे। इन सबके बीच पूजा अपनी पढ़ाई के लिए भी कंसर्न थी, उसे टॉप जो करना था।

दिल्ली में पूजा की मौसी के बेटे रोहित की शादी में पूजा के परिवार को खास इनवीटेशन था। पूजा की माँ की बस यही एक बहिन थी। मौसी की बड़ी बेटी की शादी दो साल पहले हुई थी। रोहित और पूजा में खूब बनती थी। एक साल पहले रोहित लंदन में पी-एचडी. करने चला गया था। रोहित ने पूजा के साथ समीर को खास निमंत्रण दिया था। पूजा को लिखा था—"तेरी पसंद के हीरो समीर से खास मिलना है। देखना है, मेरी बहिन की टक्कर का है या नहीं? मेरी पूजा तो बहुत खास है, अपने साथ समीर को जरूर लाना। दोनों से मिलने का इंतजार है।"

"समीर, तुम्हें भी हमारे साथ दिल्ली चलना होगा, वरना रोहित नाराज हो जाएगा।" पूजा ने खुशी से कहा।

"मुझे रोहित से मिलकर बहुत खुशी होती, पर उसकी शादी के समय मेरे डिपार्टमेंट में इंटरनेशनल कॉन्फ्रेंस है, मुझे कई जिम्मेदारियाँ दी गई हैं। मेरी तरफ से रोहित से माफी माँग लेना, अब रिश्ता हो रहा है तो भविष्य में तो जरूर मिलेंगे।" अंतत: उदास मन से पूजा दिल्ली गई थी।

पूजा के बिना समीर को दिन काटने कठिन लग रहे थे। फोन पर बातें करके मन नहीं भरता था। शादी की धूमधाम में पूजा खुश थी, पर समीर की याद आनी स्वाभाविक थी। सात-आठ दिनों का समय बीत गया था। वापिसी के पहले पूजा का फोन आया था, आवाज में खुशी थी—

"हम वापस आ रहे हैं। तुम्हारे लिए एक खास भेंट ला रहे हैं, देखकर विश्वास नहीं कर पाओगे।"

"कहीं दिल्ली से कोई नया ब्वॉय फ्रेंड तो नहीं ला रही हो?" समीर ने मजाक किया।

"क्या करूँ, तुमने उसके लिए कोई जगह ही कहाँ छोड़ी है, वरना कई दीवाने हैं।" पूजा ने जवाब दिया।

दोनों हँस पड़े। अब बस दोनों को मिलने का इंतजार था।

पूरे आठ दिनों बाद पूजा अपने पेरेंट्स के साथ वापस आई थी। समीर उन्हें रिसीव करने स्टेशन गया था। कुली के हाथ में एक बड़े से चौकोर फ्रेम में कागज में पैक किया गया किसी पेंटिंग या चित्र जैसा सामान देखकर समीर ने कहा, "लगता है दिल्ली से कोई कलात्मक पेंटिंग लाई हो।" समीर जानता था पूजा की फूलों में ही नहीं, सुंदर पेंटिंग्स में भी बहुत रुचि थी। उसके कमरे में प्रसिद्ध कलाकारों की पेंटिंग्स सजी हुई थीं।

घर में पेंटिंग के ऊपर पैक किए गए कागज को हटाते ही पूजा का एक बेहद सुंदर पोर्ट्रेट देखकर समीर विस्मित रह गया। पोट्रेट में मुसकराती

पूजा इतनी सजीव लग रही थी, मानो अभी कुछ बोल उठेगी।

"देखा, चौंक गए न? शादी में लंदन से रोहित भैया का एक आर्टिस्ट फ्रेंड साइमन आया था। असल में शादी के बहाने वह दिल्ली घूमने आया था। मुझे देखते ही उसके अंदर का आर्टिस्ट जाग गया। रोहित भैया से मेरा पोर्ट्रेट बनाने की जोरदार तरीके से परमीशन माँगी थी।"

"इतनी ब्यूटीफुल इंडियन लड़की का पोर्ट्रेट नहीं बनाया तो मेरा आर्ट बेकार है। रोहित, प्लीज पूजा का पोर्ट्रेट बनाने की परमीशन दे दे।"

रोहित भैया को तो एतराज नहीं था, पर बात समय की थी। शादी के घर में अपना चित्र बनवाना कैसे संभव हो? साइमन रोहित के घर के सामने वाले होटल में ठहरा था। साइमन ने तरीका निकाल लिया।

"दिन भर तो दिल्ली की रोमांटिक गलियाँ छानूँगा, होटल में सवेरे सात बजे से दो-ढाई घंटे पोर्ट्रेट बना सकता हूँ। ज्यादा टाइम नहीं लूँगा, पूजा को कैनवास पर उतारना बहुत आसान होगा, दिमाग में तो तस्वीर उतर गई है। अगर पूजा दो घंटों का समय दे दें तो वादा करता हूँ, तीन-चार दिनों में पोर्ट्रेट बना लूँगा।"

"तू मेरी शादी अटैंड करने आया है या बस दिल्ली घूमेगा और पोर्ट्रेट बनाएगा?" रोहित भैया ने पूछा।

तेरे और तेरी पत्नी के साथ तो जिंदगी भर लंदन में रहना है, पर ये तेरी दिल वालों की दिल्ली और एक इंडियन ब्यूटी दोबारा कहाँ मिलेगी। हाँ, तुझे मुझ पर यकीन तो है, पोर्ट्रेट बनवाने के लिए पूजा को होटल आने में कोई बाधा तो नहीं होगी?"

"बिल्कुल नहीं, तुझ पर अपने से ज्यादा यकीन है।" रोहित भैया ने विश्वास से कहा।

सवेरे का समय देने की बात पूछने पर पोर्ट्रेट बनवाने की खुशी में पूजा ने खुशी से स्वीकृति दी थी।

"क्या यह पोर्ट्रेट सिर्फ तीन-चार दिनों में बनाया गया है?" समीर विस्मित था।

"हाँ तय हुआ था ज्यादा-से-ज्यादा चार दिनों तक दो घंटों का समय पोर्ट्रेट बनाने के लिए दिया जा सकता है। सवेरे सात बजे का समय साइमन को दे देते थे और देखो उसका कितना अच्छा परिणाम आया है। साइमन इस पोर्ट्रेट का फोटो ले गया है, कहता था लंदन में इसे कैनवास पर उतारेगा।"

"सच में बहुत सुंदर चित्र है, पर मेरी पूजा इससे बहुत ज्यादा सुंदर है। गनीमत है साइमन तुम्हें अपने साथ नहीं ले गया, वरना मैं बेमौत मारा जाता। वैसे पोर्ट्रेट में तुमने कमाल का कलात्मक पोज दिया है।"

"उसमें मेरी कोई तारीफ नहीं है, साइमन अपने हाथों से मेरा पोज ठीक करता था।"

"इसी बहाने उसने मजे लिये, ये गोरे सीधे नहीं होते।" समीर जैसे ईर्ष्या कर रहा था।

"बेकार जल रहे हो, बेचारा मुझे सिस्टर कहता था, कभी कोई लाभ उठाने की कोशिश भी नहीं की।

बातों के बीच अचानक अपने घर से आए फोन से समीर घबरा गया। "पापा को हास्पिटल ले जाया गया है, मुझे जाना होगा।" तेज कार चलाकर समीर हॉस्पिटल पहुँचा था।

हॉस्पिटल में समीर के पापा सुरेंद्र प्रतापजी को आई.सी.यू. में रखा गया था। डॉक्टर ने बताया उन्हें मैसिव हार्ट अटैक पड़ा है। बहुत परवाह की जरूरत है। माँ को रोते देख समीर ने सांत्वना दी थी—"घबराने की कोई बात नहीं है, पापा ठीक हो जाएँगे। डॉक्टर नाथ बहुत बड़े हार्ट स्पेशलिस्ट हैं।"

पूजा के फोन पर समीर ने उसे हास्पिटल आने को मना कर दिया था। "तुम अभी दिल्ली से लौटी हो, आराम करो। यहाँ का हाल बताता रहूँगा। डॉक्टर ने लोगों को आई.सी.यू. में न आने के सख्त आदेश दिए हैं।"

दो-तीन दिन बीत गए सुरेंद्र प्रतापजी की स्थिति अभी भी गंभीर बनी हुई थी। समीर पूरे समय हॉस्पिटल में ही रहता था। इस बीच पूजा के पेरेंट्स हॉस्पिटल में समीर से मिलने आए थे। उन्होंने बताया पूजा को खाँसी-जुकाम हो गया है। समीर को परेशान देख पूजा की माँ ने कहा—

"परेशान होने की बात नहीं है, दिल्ली में नवंबर के आखिरी हफ्ते में काफी सर्दी थी, लड़कियों का फैशन तो जानते हो, ऊनी कपड़े नहीं पहने, ठंड लग गई। दो-चार दिनों में ठीक हो जाएगी। हॉस्पिटल आने की जिद कर रही थी, मुश्किल से रोका है।"

"आपने ठीक किया, हॉस्पिटल में तरह-तरह के मरीज होते हैं, उसे ठीक होने तक घर में ही रहने दीजिए। पापा की स्थिति बेहतर होने पर मैं खुद ही मिलने आ जाऊँगा। अभी फोन पर बात करना ही ठीक है।"

पूजा रोहित से मिलने को बेचैन थी, पर शहर में चीन से आई महामारी कोरोना के मरीजों की संख्या भारत में बढ़ने लगी थी। उस दिन फोन पर बात करते हुए समीर को खाँसते हुए सुनकर पूजा चिंतित हो उठी थी। समीर ने भी मजाक में पूजा से कहा था—"लगता है मुझे कोरोना हो गया है। अगर मैं न रहूँ तो किसी सुपात्र से विवाह जरूर कर लेना वरना मेरी आत्मा को दुख होगा"। समीर की फिर बनावटी खाँसी सुनकर पूजा व्याकुल हो उठी, "भगवान् के लिए ऐसा मत कहो, समीर, हम मर जाएँगे। हम अभी तुम्हारे पास आ रहे हैं।"

पूजा की व्याकुलता पर समीर हँस पड़ा। "माफ करना, तुम्हें डरा दिया? जिस पूजा का अपनी जिंदगी में फूलों से सजी डोली में आने का बेसब्री से इंतजार कर रहा हूँ, भला उसे अकेली छोड़कर इस दुनिया से जा सकता हूँ क्या?"

"अब फिर कभी ऐसा मजाक करोगे तो तुमसे बात नहीं करूँगी।" पूजा ने मन भरे स्वर में कहा।

"क्या बात है, आज तुम्हारी आवाज कुछ भारी सी लग रही है, ठीक तो हो? क्या तुम्हारा खाँसी-जुकाम अभी ठीक नहीं हुआ है?" समीर की आवाज मे कंसर्न था।

"कुछ खास नहीं, बस सर्दी-जुकाम के साथ हल्का बुखार हो गया है। डॉक्टर अंकल ने कहा, यह फ्लू का मौसम है। दवा ले रही हूँ। बुखार उतरते ही तुमसे मिलने और अंकल को देखने आऊँगी।"

अचानक समीर के पास दिल्ली से पूजा के कजिन रोहित का फोन आया था—"समीर, ध्यान से मेरी बात सुनो, पूजा ने बताया होगा, मेरे आर्टिस्ट फ्रेंड साइमन ने मेरी परमीशन लेकर पूजा का पोर्ट्रेट बनाया है। साइमन एक सप्ताह बाद लंदन लौट गया था। जब तक वह इंडिया में

था, सामान्य दिखता रहा, पर लंदन पहुँचने के कुछ दिनों बाद उसमें दिखने वाले सिमटम के टेस्ट्स में उसे कोरोना पॉजिटिव पाया गया। पूजा कुछ समय तक उसके संपर्क में रही है, अच्छा हो, तुम उसका कोरोना टेस्ट करा लो। मौसी को बताने से वह डर जाएँगी। मैं अभी इंडिया में हूँ, भगवान् से प्रार्थना है, पूजा का टेस्ट नेगेटिव निकले, पूजा का रिजल्ट फोन से बताना।"

समीर संज्ञाशून्य सा हो रहा था, नहीं उसकी पूजा को कोरोना नहीं हो सकता। पिछले कुछ दिनों से कोरोना के चीन के अलावा दूसरे देशों में फैलने की खबरें आ रही थीं। भारत में तो अभी तक कुछेक केसेज छोड़कर सब सामान्य सा चल रहा था। समीर समझ नहीं पा रहा था, कैसे वह पूजा के पापा से बेटी का कोरोना का टेस्ट कराने को कहे।

अभी वह अपने पापा के लिए चिंतित था, अब पूजा के लिए परेशान हो गया। नहीं पूजा को कुछ नहीं होगा, पूजा की माँ ने बताया है, जुकाम की वजह से पूजा के गले में हलकी खराश थी, हॉस्पिटल मे गंभीर हालत में पापा और माँ को अकेले छोड़कर जाना मुश्किल था। अंतत: समीर ने पूजा के पापा से बेटी को अस्पताल ले जाने पर जोर दिया था।

कुछ ही दिनो में पूजा का खाँसी-जुकाम ठीक होने की जगह बिगड़ने लगा, उसे साँस लेने में तकलीफ होने लगी थी। अंतत: उसके पापा ने पूजा को अस्पताल ले जाने का निर्णय लिया था। मामूली सर्दी-जुकाम और बुखार अब सामान्य कष्ट जैसा नहीं रह गया था। पूजा के चेहरे पर दर्द दिखने लगा था। बोलने में कष्ट होता। हॉस्पिटल ले जाने की बात सुनकर पूजा चैतन्य सी हो गई।

"हॉस्पिटल नहीं···समीर।" कठिनाई से पूजा कह सकी।

"हाँ बेटी, समीर आता होगा। तुम परेशान मत हो।" पापा ने तसल्ली दी।

"लाल···गुलाब···डायरी···वादा···"

पूजा क्या कह रही थी, पूरी तरह समझ पाना कठिन था। कैसा लाल गुलाब, कौन सी डायरी?

हॉस्पिटल ले जाने पर जिस सत्य का सामना करना पड़ा, वह बेहद भयावह था पूजा के सिंपटम देखकर डॉक्टरों को कोराना संक्रमण का संदेह हुआ था। यह वह समय था, जब भारत में कोरोना के अधिक मरीज नही थे। पूजा का टेस्ट करने के लिए पूजा के माँ-बाप को दूसरे कमरे में भेज दिया गया था। टेस्ट से भय सत्य में बदल गया। पूजा उस हॉस्पिटल की पहली कोरोना पॉजिटिव युवती थी। पूजा के माता-पिता तो जड़ हो गए। टेस्ट में पूजा अंतिम स्टेज में कोरोना पॉजिटिव निकली थी।

"हमें दु:ख है, आपने मरीज को लाने में बहुत देर कर दी, यकीन रखिए, हम पूरी कोशिश करेंगे, इतनी यंग लड़की कोरोना से हार नहीं मान सकती। आप लोग प्रार्थना कीजिए।" डॉक्टर्स पूजा की चिकित्सा में जुट गए थे।

पूजा के माँ-बाप को अलग कमरे में रहने को विवश कर दिया गया था। जब तक उनके टेस्ट नहीं हो जाते, वे अलग ही रहने को मजबूर थे। माँ अपनी बेटी को छोड़कर जाने को तैयार नहीं थी, पर कोई दूसरा विकल्प नहीं था।

डॉक्टरों की हर कोशिशों के बावजूद बंद होती आँखों में लाल गुलाब और सुनहरी डायरी के साथ समीर का सपना देखती पूजा ने हॉस्पिटल में दूसरे ही दिन आधी रात में हमेशा के लिए आँखें मूँद लीं।

माँ पछाड़ खाकर गिर पड़ी। पिता सूनी आँखों से शून्य में निहारते रह गए। रात का अँधेरा उनके जीवन में हमेशा के लिए गहरा अंधकार कर गया था।

रात के दो बजे अचानक समीर बेहद बेचैन हो उठा। नर्स से कुछ देर के लिए बाहर जाने की अनुमति लेकर कार पूजा के हॉस्पिटल की तरफ दौड़ा दी थी। हॉस्पिटल में सन्नाटा पसरा हुआ था। पूजा के पेरेंट्स का पता नहीं था। नाइट ड्यूटी के डॉक्टर से जो सूचना मिली, उसने समीर को बेजान सा कर दिया। उसकी पूजा उसे छोड़कर कैसे जा सकती है। आँखों के आगे अँधेरा छा गया था। बहुत विनती करने पर डॉक्टर ने समीर को पूजा के पेरेंट्स से दूर से बात करने की इजाजत दी थी।

"हमारी पूजा हमें छोड़कर चली गई। जाते-जाते तुम्हें याद कर रही थी।" आँसू पोंछते पूजा के पापा ने कहा।

"पूजा के बिना हमें नहीं जीना है, हम कैसे जिएँ?" माँ का करुण क्रंदन दिल चीर गया।

"नहीं आंटी, पूजा कहीं नहीं गई है। अपने पोर्ट्रेट में वह हमेशा अपने घर में आपके साथ रहेगी।" बात कहते समीर की आवाज रुँध गई।

"पूजा तुम्हारे नाम के साथ किसी लाल गुलाब और डायरी के बारे में कुछ कहना चाहती थी; डायरी में कुछ लिखकर कोई वादा पूरा करना चाहती थी। क्या तुम जानते हो, पूजा कौन सा वादा पूरा करना चाहती थी?" कुछ शांत होकर पूजा के पापा ने पूछा।

"मैं जानता हूँ, उसका लाल गुलाब और डायरी मुझे जीने का संबल देगी। काश उसकी पुकार सुन पाता। विश्वास रखिए, वह हमेशा मेरे साथ रहेगी।" नम आँखों के साथ समीर ने जैसे अपने से वादा किया।

एक पोर्ट्रेट की कीमत पूजा की जान से नहीं चुकाई जा सकती। यह अन्याय है। समीर स्तब्ध था।

सवेरे पूजा की हॉस्पिटल से अंतिम विदाई नियत की गई थी। कोरोना से मृत शरीर को अधिक देर नहीं रखा जा सकता था।

"डाक्टर पूजा की अंतिम यात्रा में मुझे साथ जाने की इजाजत दे दीजिए, वह मेरी होने वाली पत्नी थी।" डॉक्टर से अनुरोध करते समीर का कंठ भर आया।

"ठीक है, पर उसके लिए आपको हर सावधानी बरतनी होगी और दूर से ही पूजा को विदा करना होगा।"

"मुझे मंजूर है।"

कब सोचा था, समीर के सपनों की राजकुमारी पूजा की अंतिम विदाई एंबुलेंस में होगी? उसे तो नूरी बाग के फूलों से सजी डोली में विदा होना था। बेरंग फूलों से पूजा को अंतिम विदाई देकर समीर ने आँसू हथेली से पोंछ लिये।

13819 NE 37TH PI
Bellevue, WA 98005,
USA
Telephone 001 425 869 5679

चार गजलें

• ओमप्रकाश यती

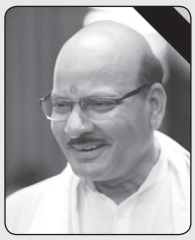

अब तक 'बाहर छाया भीतर धूप', 'सच कहूँ तो', 'सरोकारों के रंग', 'कुछ नया मौसम तो हो' सहित १०० गजलों का संग्रह प्रकाशित, जिनमें लोक, ग्राम्य जीवन और रिश्ते-नाते प्रमुखता से चित्रित हुए हैं। अखिल भारतीय कला मंच, मेरठ का 'दुष्यंत स्मृति सम्मान-२०११' से सम्मानित।

: एक :

काम आती है हमारे उम्र भर मिट्टी।
कह दिया बेकार चीजों को मगर मिट्टी।
बीज पौधा बन सके यह है बड़ा मुश्किल
है नहीं चारों तरफ उसके अगर मिट्टी।
जान है इसमें तभी इनसान है यह देह
बाद में आती है ये सबको नजर मिट्टी।
जब बहुत दिन बाद वह परदेश से लौटा
रो पड़ा अपने वतन की देखकर मिट्टी।
गाँव में अब भी हमारे दृश्य हैं ऐसे
खेत मिट्टी, राह मिट्टी और घर मिट्टी।
गाँव से गमले में तुलसी ले के आई माँ
कर के आई तब बहुत लंबा सफर मिट्टी।
उनसे बनवाती है कैसे-कैसे बरतन ये
देखती है जिनके हाथों में हुनर मिट्टी।

: दो :

जहाँ मन हो बिछा लेते हैं बिस्तर लेके चलते हैं।
वो घर-परिवार, बरतन, नून-शक्कर लेके चलते हैं।
यहाँ तो डर लगा रहता है बुलडोजर का ही हरदम
चलो भाई यहाँ से टीन-टप्पर लेके चलते हैं
अब उनके पास दौलत है, अब उनके पास रुतबा है,
अकेले क्यों चलेंगे लाव-लश्कर लेके चलते हैं
बिना मजमा लगाए काम चलता ही नहीं उनका,
मदारी हैं वो हरदम अपने बंदर लेके चलते हैं।
भले ही क्रोध के अंगार लेकर आ रहे हैं वो,
हम उनके पास अपने ढाई आखर लेके चलते हैं।
न जाने किस जगह कब आईनों से भेंट हो जाए,
वो जब चलते हैं तो दो-चार पत्थर लेके चलते हैं।
दिलों में खाइयाँ लेकर पड़े हैं चुप्पियाँ ओढ़े
हम उनके बीच कुछ संवाद के स्वर लेके चलते हैं।

: तीन :

चेहरे पे कोई और न चेहरा दिखाई दे।
अंदर से जैसा है जो वो वैसा दिखाई दे।
सुनता हूँ आदमी वो नहीं दिल का है बुरा
अच्छा मगर वो है तो फिर अच्छा दिखाई दे।
देखा है दूर से ही उसे मैंने आज तक
नजदीक से पता न वो कैसा दिखाई दे।
डर दूर भाग जाएगा, कर लेना माँ को याद
जब राह में कहीं भी अँधेरा दिखाई दे।
रिश्तों की कद्र कर ही नहीं सकता वो कभी
जिसको हर एक चीज में पैसा दिखाई दे।
इनसान हैं तो ये भी जरूरी है, आप में
औरों के काम आने का जज्बा दिखाई दे।
मुंसिफ के फैसलों से ये उम्मीद है जरूर
इनसाफ हो रहा है तो होता दिखाई दे।

: चार :

जो दिखाई देते हैं संकीर्णता के पक्ष में।
ऐसे लोगों से नहीं मैं मित्रता के पक्ष में।
बंधनों में रह के जीना चाहता कोई नहीं
हैं सभी स्वाधीनता-स्वच्छंदता के पक्ष में।
जिससे कविता को समझ पाना ही हो जाए कठिन
कौन होगा आज ऐसी विद्वत्ता के पक्ष में।
आपसी सद्भाव खतरे में नजर आता है तब
जब खड़े होते हैं हम धर्मांधता के पक्ष में।
नाम पर हम आधुनिकता के भले दें तर्क कुछ
पर जरूरी है कि हों वो सभ्यता के पक्ष में।
हम मुसीबत में भी अपनी आस्था खोते नहीं
बोलते रहते हैं अपने देवता के पक्ष में।
जहर था भाषण में उनके जानते थे सब मगर
आ गए कुछ लोग उनकी धृष्टता के पक्ष में।
चीज ऐसी है सियासत अच्छे-अच्छे लोग भी
बोलने से डर रहे हैं योग्यता के पक्ष में।

साअ
एच-८९, बीटा-२,
ग्रेटर नोएडा-२०१३०८ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९९९०७५९४२

लोक-जीवन की आस्थाओं की चितेरी नायिका

• कुमुद शर्मा

जिन्हें जिंदगी मुसकराती सी दिखती थी और जीवन सुंदर लगता था, वह मृदुलाजी अब नहीं रहीं, यह मानने को मन तैयार नहीं है। कुछ दिन पहले ही तो उनसे मिलकर आई थी। प्रफुल्लित, उत्साहित मृदुलाजी ने बातचीत में अपनी सक्रियता का जीवंत एहसास कराया था। कोरोना-काल पर उपन्यास के शीघ्र प्रकाशित होने और गोवा की राज्यपाल के रूप में अपने संस्मरणों और अनुभवों पर पुस्तक के तैयार होने की जानकारी दी थी। नहीं जानती थी कि यह उनसे अंतिम भेंट होगी।

(२७-११-१९४२—१८-११-२०२०)

उन पर लिखते हुए उनसे जुड़ी अनगिनत स्मृतियाँ दस्तक दे रही हैं। उनसे मेरा मिलना 'प्रभात प्रकाशन' में स्व. श्यामसुंदरजी और पंडित विद्यानिवास मिश्रजी की उपस्थिति में सन् १९९६ के दौरान हुआ था। पहली ही मुलाकात में उन्होंने बताया था कि वे श्यामसुंदरजी को राखी बाँधती हैं और पंडितजी को जीजाजी मानती हैं। प्रभातजी उन्हें 'बुआजी' कहते हैं। तब मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ था कि प्रेम व स्नेह की ज्योति और संबंधों की ऊष्मा स्त्री के कारण ही बनती है।

'साहित्य अमृत' की विशेष नीति लोक-संपदा को सहेजने की रही। लोक-संस्कृति, लोक-साहित्य, लोक-पर्व और उत्सव पर जब भी कुछ विशेष देना होता तो पंडितजी तुरंत कहते, "मृदुला सिन्हा से लिखवा लो।" मैं मृदुलाजी को फोन करती तो स्नेह और आत्मीयता से भरा स्वर सुनाई पड़ता—"हाँ कुमुद! कब तक चाहिए? ठीक है, मैं लिख देती हूँ।" तय समय से पहले ही लेख मिल जाता, साथ ही फोन भी आता—"ठीक लगा। कुछ सुधार करना हो, संशोधन करना हो तो कर लेना।" इतनी सहजता और विनम्रता मैंने अन्य लेखक-लेखिकाओं में नहीं देखी। एक कहानी छपते ही आज कहानीकार अपने को साहित्य की अग्रिम पंक्ति का दावेदार समझने लगता है।

अकसर उनसे भेंट होने लगी। १९९७ में उनके द्वारा संपादित राजमाता विजयाराजे सिंधिया की आत्मकथा 'राजपथ से लोकपथ पर' प्रकाशित हुई। उपन्यास की तरह रोचक और इतिहास की तरह प्रामाणिक यह पुस्तक बहुत सराही गई। इस पुस्तक के लोकार्पण समारोह में पुस्तक-परिचय देने और मंच-संचालन का दायित्व मुझे मिला। राजमाता विजयाराजे सिंधिया के साथ माननीय सुदर्शनजी, माननीय अटलजी और माननीय आडवाणीजी मंच पर विराजमान थे। मृदुलाजी की लेखनी से और राजनीति में उनकी स्थिति से मेरा वास्तविक परिचय इस समारोह के दौरान हुआ। फिर मृदुलाजी से अकसर मिलना होता। जब वे केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड की अध्यक्ष बनीं, तब उनकी कर्मठता के साथ-साथ स्त्रियों, वंचितों, वृद्धों के लिए उनकी चिंताएँ और सरोकार भी मैंने देखे। उनके साथ यात्राएँ भी कीं। आगे चलकर उनके साथ मंच भी साझा किया। धीरे-धीरे उनके व्यक्तित्व के कई और रंग भी खुलते चले गए।

मैंने जाना कि मृदुलाजी लोक से गहरे जुड़ी हुई हैं। लोक-मन, लोक-दृष्टि की विशिष्टता है—पूर्णता में सार्थकता की तलाश। लोक-संस्कृति की सामूहिकता और जीवंतता ने ही उनके व्यक्तित्व को साझेदारी की प्रणाली सौंपी थी। एक बार इंदौर में आयोजित हिंदी साहित्य सम्मेलन के दौरान अचानक मृदुलाजी के साथ महाकाल के दर्शन के लिए इंदौर से उज्जैन की यात्रा का कार्यक्रम बन गया। उस यात्रा में उन्होंने जीवन की गहरी संपृक्तता को विस्तार देनेवाले लोकगीतों, लोकोक्तियों और कहावतों को पिरोते हुए जीवन और मानवीय व्यवहार की बहुत सारी बारीकियाँ साझा कीं। उनके परिचय के दायरे में आनेवाले लोग इस बात से जल्दी ही अवगत हो जाते कि लोक-जीवन की गहरी समझ के कारण ही वैविध्यपूर्ण भारतीय जीवन के व्यवहार की सहजता में उनका अटूट विश्वास था। उन्होंने लोक-जीवन के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करते हुए कहा भी कि "मैं लोकगीतों, लोकोक्तियों, लोक-कहावतों में ही सोचती हूँ। मानव मन, उसकी विशेषताओं, हास-परिहास, संस्कार और व्यथा को समझने के लिए लोक-साहित्य के ही पन्ने पलटती हूँ।"

लोक से जुड़कर संख्य-असंख्य रिश्तों में बँधकर उन्होंने अपनी उदारता, कोमलता, विनम्रता, सदाशयता और करुणा के उदाहरण दिए।

लेखिका, समीक्षक, मीडिया विशेषज्ञ और स्त्री विमर्शकार। स्त्री विमर्श और मीडिया पुस्तकों पर भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार, साहित्यश्री सम्मान, बालमुकुंद गुप्त साहित्य सम्मान तथा प्रेमचंद रचनात्मक सम्मान से सम्मानित। 'साहित्य अमृत' की पूर्व संयुक्त संपादक। संप्रति दिल्ली विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्रोफेसर तथा निदेशक, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

उन्होंने भारतीय संस्कृति की उस प्रकृति को आत्मसात् किया हुआ था, जिसके लोक की अवधारणा में समस्त विश्व समा जाता है, संबंधों के वैविध्य का सौंदर्य प्रकट होता है, जहाँ प्रकृति भी रिश्तों की आत्मीय परिधि में आती है। बरगद और पीपल दादा बन जाते हैं, चंदा मामा बन जाते हैं, नदी माँ बन जाती है, पर्वत हमारे पूर्वज बन जाते हैं और कंकड़-कंकड़ में हम शंकर देखने लग जाते हैं। प्रकृति और मनुष्य के साथ अपने हर रिश्ते को मृदुलाजी आत्मीयता के संस्पर्श से सींचती रहीं। सदियों की मानव-यात्रा के साथ विकसित हुई साहचर्य प्रणाली की वकालत करती रहीं। वे समाज में निरंतर पारिवारिक संबंधों के छीजने और दरकने के दर्द को महसूस करती थीं। भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार की जो अवधारणा रही है, उसे साकार करने की आकांक्षा पालती रहीं, उसके लिए निरंतर प्रयत्नशील रहीं। इसी आकांक्षा से सकारात्मक संदेश देने के लिए उन्होंने समाज कल्याण बोर्ड की टेली फिल्म की पटकथा लिखीं। जिसमें संगीतमय नारे के रूप में इस्तेमाल की गईं ये पंक्तियाँ फिल्म देखने के बाद भी लंबे अरसे तक मेरे मन में गूँजती रहीं—'संग चले जब तीन पीढ़ियाँ, चढ़े विकास की सभी सीढ़ियाँ।' तीन पीढ़ियों के संग चलने की साध से ही उन्होंने 'दादी माँ की पिकनिक' जैसी कई कहानियाँ लिखीं।

मृदुलाजी के व्यक्तित्व में बहुत सी ऐसी बातें थीं, जो उन्हें अपने समय के राजनीतिक, सामाजिक कार्यकर्ताओं और लेखक-लेखिकाओं के बीच अलग पहचान देती थीं। आपसी साहित्यिक चर्चा में मैंने उन्हें अपने समय की लेखिकाओं से बिल्कुल भिन्न पाया। निंदा रस से कोसों दूर, अपने काम में एकाग्र, सीखने और सिखाने का गुण, लोगों से जुड़ने एवं अपने से लोगों को जोड़ने की आकांक्षा उनका वैशिष्ट्य था। जो भी उनसे मिलता, मृदुलाजी अपनी मृदुलता से उसे अपना बना लेतीं। उनके स्वभाव में कृत्रिमता नहीं होती, बल्कि मिलन का सहज उछाह और उत्साह होता। मृदुलाजी ने अपने परिश्रम, लगन और मेहनत के बल पर जो हासिल किया, उसको लेकर कभी कोई दंभ नहीं पाला। गोवा की राज्यपाल बनने के बाद भी उनके व्यवहार का समीकरण एवं संबंधों का व्याकरण नहीं बदला और न ही साहित्य सृजन के प्रति उनकी उत्कंठा कम हुई। संवैधानिक पद पर अपने प्रशासनिक दायित्वों के बावजूद उनके लेखन का क्रम बाधित नहीं हुआ। जितना मैंने मृदुलाजी को जाना-समझा, साथ ही, राजनीति, समाज और साहित्य जगत् में उनकी जो पहचान बनी, उस आधार पर कह सकती हूँ कि उनका व्यक्तित्व परिवार, समाज, राजनीति में कई-कई भूमिकाओं का निर्वाह करते हुए अनेक छवियों में ढला और सार्वजनिक अनुमोदन पाकर सार्थक बना।

उन्होंने भारतीय संस्कृति की उस प्रकृति को आत्मसात् किया हुआ था, जिसके लोक की अवधारणा में समस्त विश्व समा जाता है, संबंधों के वैविध्य का सौंदर्य प्रकट होता है, जहाँ प्रकृति भी रिश्तों की आत्मीय परिधि में आती है। बरगद और पीपल दादा बन जाते हैं, चंदा मामा बन जाते हैं, नदी माँ बन जाती है, पर्वत हमारे पूर्वज बन जाते हैं और कंकड़-कंकड़ में हम शंकर देखने लग जाते हैं। प्रकृति और मनुष्य के साथ अपने हर रिश्ते को मृदुलाजी आत्मीयता के संस्पर्श से सींचती रहीं।

देश, समाज और साहित्य के लिए उनकी निष्ठा और समर्पण प्रेरणादायी है। जीवन के अंतिम दिनों तक राजनीति और साहित्य—दोनों में ही अपनी सक्रियता भरी उपस्थिति दर्ज की। उनकी रचनाओं में अनुस्यूत आत्मकथ्य इस बात के प्रमाण हैं कि जीवन की विपरीत परिस्थितियों में भी उन्होंने अपने दायित्वबोध से मुँह नहीं मोड़ा। केवल मृत्यु ही उन्हें कार्य-मुक्त कर पाई। सामाजिक कार्यकर्ता, राजनीतिक चिंतक, लेखक व संपादक जैसी तमाम भूमिकाओं में उन्होंने देश और समाज की सेवा की। उनके लिए 'लेखन, समाज-सेवा, राजनीति और गृहस्थी—सभी एक ही लक्ष्य के भिन्न-भिन्न आयाम' थे। यह उनकी कर्मठता ही थी कि राजनीति में इतनी सक्रियता के बावजूद उनके लेखन में नैरंतर्य बना रहा। उनका संवेदनशील मन अपनी राजनीतिक यात्राओं के दौरान भी साकांक्ष भाव से लोगों से निरंतर संवाद स्थापित करता रहा। गाँव, शहर, समाज के लोगों की दुःख-तकलीफ, सुख-दुःख, हर्ष-विषाद से जुड़ता रहा और अपने रचनात्मक संसार के लिए अंतर्वस्तु समेटता रहा। सहज, निर्मल, निश्छल भारतीय मन लिये जीवन को सही अर्थों में जीनेवाली मृदुलाजी ने जैसा जिया, वैसा लिखा। इसीलिए हिंदी जगत् में उनकी विशिष्ट पहचान बनी। राजनीतिक और सामाजिक जीवन में व्यस्तता के बावजूद वे साहित्य की विपुल संपदा सौंप गई हैं।

देश की माटी से जुड़ा मृदुलाजी का बहुआयामी व्यक्तित्व जीवन जीने की सार्थकता को व्यंजित करता रहा। लोक-जीवन से संपृक्ति ने उनकी रचनाशीलता को विविध आयाम दिए। उनका लेखन वैविध्यमय संसार के विविध पक्षों की अभिव्यक्ति का माध्यम बना। राजनीति हो या साहित्य, दोनों के माध्यम से ही उनका प्रयत्न रहा—महिलाओं और गरीबों का सशक्तीकरण तथा भारतीय जीवन-मूल्यों की प्रतिष्ठापना। भारतीय संस्कृति उनके साहित्यिक और राजनीतिक जीवन का रचनात्मक एवं भावात्मक आधार है। मृदुलाजी ने साहित्य की कई विधाओं में लिखा, लेकिन उनकी पहचान बनी कथा लेखिका के रूप में। उनका समूचा कथा लेखन एक सांस्कृतिक कर्म है। सृजन को 'निराकार आकांक्षा को साकार करने का प्रयत्न' माना गया है। सकांक्ष भाव के साथ भारतीय रूप, रस, गंध को अपने में समेटने और सँजोनेवाली मृदुलाजी ने संस्कृति की उत्सवधर्मिता और सनातन सरोकार को अपने रचनात्मक फलक

पर ढालकर लोकधर्मी भाषिक संरचना में मानव जीवन की मार्मिक व्यथा-कथा को बुना। साहित्य और साहित्यकार की भूमिका को लेकर उनकी दृष्टि अलग थी। वे साहित्य को मात्र समाज का दर्पण नहीं मानती थीं, बल्कि संतुलित और सही दृष्टि का रूपायन भी मानती थीं। उनका मानना था कि साहित्यकार मकड़ा नहीं हो सकता, उसे 'मधुमक्खी' की भूमिका में होना चाहिए। जो साहित्यकार समाज की विभिन्न क्यारियों से पराग इकट्ठा करते हैं, उनका साहित्य (मधु) उसी समाज-जीवन के लिए स्वास्थ्यवर्धक होता है।"

मृदुलाजी ने दस वर्षों तक अपने बेटे की विकलांगता के साथ जिया। उस त्रासदी और यातना की जमीन से उपजा उनका पहला उपन्यास 'ज्यों मेहँदी को रंग'। संभवत: विकलांग समस्या पर हिंदी में लिखा पहला उपन्यास है, जो विकलांग बेटे की माँ की यातना का मार्मिक दस्तावेज बन गया है।

पूरे उपन्यास में उनकी चिंता का स्वर है पति-पत्नी के बीच एकता के सूत्र के सिद्धांत कैसे गढ़े जाएँ। वे पति-पत्नी के संबंधों में 'प्रकृति प्रदत्त संवेग के व्यवहारीकरण का स्वप्न' देखती हैं। 'दांपत्य की धूप-छाँह' में दांपत्य संबंधों को मजबूती प्रदान करनेवाला सूत्र थमाते हुए हुए वे कहती हैं–'चार पाँवों पर चलते हुए कभी आगे बढ़ने की दौड़ में नहीं फँसे। कदम मिलाकर चलते हुए एक-दूसरे का सहयोग और सम्मान करते रहे। दोनों का अटूट और अनुराग भरा संबंध हो तो बादल छँट जाते हैं। धूप खिल जाती है।'

आज बाजार-मूल्य के चलते ऐसा लगता है, जैसे देहवाद की कथा रचती लेखिकाओं ने पाश्चात्य देशों की 'एंद्रियभोगमूलक' संस्कृति के प्रचार-प्रसार का झंडा उठा रखा हो। ऐसे परिदृश्य में मृदुलाजी का लेखन बिल्कुल अलग जमीन पर खड़ा है। वर्तमान के संदर्भ में मिथकीय या पौराणिक स्त्री चरित्रों का पुनराख्यान मृदुलाजी के लेखन का वैशिष्ट्य है। मिथकीय और पौराणिक चरित्रों को आत्मकथात्मक औपन्यासिक कृति में ढालना एक श्रमसाध्य कार्य है। पौराणिक और मिथकीय नारी-चरित्रों के विविध पक्षों में आज के वस्तुसत्य का समायोजन एक अतिरिक्त रचनात्मक कौशल की माँग भी करता है। यह कौशल मृदुलाजी में भरपूर था। इसका परिचय पाठकों को 'विजयिनी', 'परितप्त लंकेश्वरी' और 'सीता पुनि बोली' जैसी औपन्यासिक कृतियों में मिलता है। इन कृतियों की खास बात यह है कि इसमें मिथक के नए अर्थों का संधान किया गया है। सीता, सावित्री, मंदोदरी और अहल्या के चरित्र में सामाजिक अर्थ संकेतों को भरकर आज के संदर्भ में इन चरित्रों की अर्थवत्ता एवं प्रासंगिकता की संगति बिठाई गई है। इनमें पौराणिक घटनाओं और कथा का निरूपण मृदुलाजी का साध्य नहीं रहा। उनका साध्य था— पौराणिक नारी पात्रों का गठन, इन चरित्रों की मानवीय धरातल पर अभिव्यक्ति। इनमें नारी के जीवनव्यापी संघर्ष को चिरकालिक, सर्वयुगीन मानवीय परिप्रेक्ष्यों में देखा गया है। नारी-मन का ऊर्जस्वित विचार प्रवाह इक्कीसवीं सदी की नारी के लिए प्रेरणादायक है। मानवीय उत्कर्ष को मृदुलाजी रचना का उद्देश्य मानती रहीं। सीता, सावित्री, मंदोदरी और अहल्या की आत्मकथा में भारतीय नारी की सामर्थ्य व क्षमता के विविध रूपों को उकेरा। भारतीय नारी की तेजस्विता के इतिहास को पुन: गढ़ा। मानवीय जीवन की समृद्धि में उनकी भूमिका को रेखांकित कर वर्तमान नारी के समक्ष व्यवहार और आचरण का आदर्श प्रस्तुत किया। ये कृतियाँ भारतीय नारी के शाश्वत प्रतिमानों को सामने रखती हैं।

आज के भौतिकतावादी युग में जब संबंधों पर व्यावसायिकता का दबाव बढ़ रहा है, तब परिवार और विवाह जैसी सामाजिक संस्था कैसे सुदृढ़ हो, परिवारों को बिखरने से कैसे बचाया जाए, यह मृदुलाजी के लेखन की मूलभूत चिंताओं में से प्रमुख चिंता थी। 'अतिशय' उपन्यास देवयानी-ययाति के पौराणिक कथानक पर आधारित है। इस उपन्यास की कथावस्तु तीन पीढ़ियों के संघर्षों को रेखांकित करते हुए समस्याओं के समाधान के बीज भारतीय संस्कृति की कोख से ढूँढ़ लाती है। भारत भोग-भूमि नहीं रही, कर्मभूमि रही है। इसी सूत्र से भोगपरक मूल्यों के स्थान पर संतोष और संयम जैसे मूल्यों की प्रतिष्ठापना से संतुलित और सही दिशा का संकेत कर देती हैं। उपन्यास की भूमिका में वह कहती हैं—"अतिशय की कथा के माध्यम से मैंने सनातन समाज के शाश्वत जीवन मूल्यों को आधुनिकतावादी रूप में तलाशने का प्रयास किया है।"

'अहल्या उवाच' में दांपत्य के संवेगों को खँगालते-खँगालते वे बड़ी सहजता से, बड़ी सरलता से मौजूदा समय के दांपत्य पर पड़नेवाले, दबावों, उसमें उत्पन्न तनावों को भी तान कर खोल देती हैं। पूरे उपन्यास में उनकी चिंता का स्वर है पति-पत्नी के बीच एकता के सूत्र के सिद्धांत कैसे गढ़े जाएँ। वे पति-पत्नी के संबंधों में 'प्रकृति प्रदत्त संवेग के व्यवहारीकरण का स्वप्न' देखती हैं। 'अहल्या उवाच' और 'दांपत्य की धूप-छाँह' जैसी उनकी कृतियों को आदर्श दांपत्य जीवन की पाठशाला कहा जा सकता है। उनकी ये कृतियाँ दांपत्य जीवन के सिद्धांत और व्यवहार की पुस्तकें हैं। 'दांपत्य की धूप-छाँह' में दांपत्य संबंधों को मजबूती प्रदान करनेवाला सूत्र थमाते हुए हुए वे कहती हैं—'चार पाँवों पर चलते हुए कभी आगे बढ़ने की दौड़ में नहीं फँसे। कदम मिलाकर चलते हुए एक-दूसरे का सहयोग और सम्मान करते रहे। दोनों का अटूट और अनुराग भरा संबंध हो तो बादल छँट जाते हैं। धूप खिल जाती है।'

आज देहवाद ने स्त्री अस्मिता को बिकाऊ बना दिया है। ऐसे में प्रश्न यह पैदा होता है कि लेखक का दायित्व क्या है? साहित्य को हम नैतिक आचारसंहिता न मानें, लेकिन उसे नैतिक संवेदन की अंतर्दृष्टि का रूपायन जरूर माना जाएगा। पाठक रचनाकार से मानवीय संवेग और विवेक की उम्मीद करता है। 'अहल्या उवाच' हो, 'परितप्त लंकेश्वरी' या फिर 'सीता पुनि बोली' जैसी कृतियों ने नैतिक संवेदना की अंतर्दृष्टि, मानवीय संवेग और विवेक के महत्त्वपूर्ण पहलुओं को छुआ है। 'अहल्या उवाच' में मिथकीय अहल्या की आत्मकथा, बाजारोन्मुखी मूल्यों से नहीं, बल्कि भारतीय मूल्यों से रची गई है।

लेखिका के रूप में, सामाजिक कार्यकर्ता की भूमिका में तथा

राजनीतिक क्षेत्रों में संगठनात्मक दायित्व को सँभालते हुए उन्होंने सदैव भारतीय नारी के उत्पीड़न और सबलीकरण के प्रश्नों को केंद्र में रखकर स्त्री के संपूर्ण विकास के लिए पत्नीत्व और मातृत्व की भूमिकाओं में उसे संस्कारित करने के लिए सार्थक मूल्यों की खोज की। 'पुरानी नींव, नया निर्माण' का मॉडल सामने रखा। भीतर के चैतन्य से ऊर्जावान नारी की सुरक्षा, और उसके संपूर्ण विकास के लिए समाज और राष्ट्र के दायित्व को भी सुनिश्चित करने का प्रयत्न किया। 'अहल्या उवाच' में वर्तमान संदर्भों को पिरोते हुए लिखती हैं—'अत्याचार सहते रहने पर नारी का स्वत्व मर जाता है। वह तेजस्विनी नहीं रह पाती, और न अपनी भूमिका निभा पाती है। जहाँ ऐसी नारियों की अधिकता है, उस समाज का पतन होता है।'

देश के प्रति, समाज के प्रति, मनुष्य के प्रति गहरे दायित्वबोध ने मृदुलाजी के चिंतन को दिशा भी दी और उनके मन में व्यग्रता, बेचैनी भी पैदा की। उनकी लिखी कहानियों और उपन्यासों में उनके पात्र विपरीत परिस्थितियों में जीने का हौसला भारतीय मूल्यों से ही प्राप्त करते हैं। अँधेरे में उजाले की तलाश करते हैं। आस्था, संकल्प और विश्वास के दीये से दीवाली करने का संकल्प भी उनके मन में जगता है।

अपनी औपन्यासिक कृतियों में चित्रित नारी-चरित्रों को अस्मिता की रोशनी के साथ परिवार, समाज और समूचे राष्ट्र की उन्नति एवं प्रगति से जोड़ती रहीं। उनके लिए वही विचार मूल्यवान बने, जो अपनी संस्कृति और राष्ट्र की अस्मिता का संरक्षण कर सकते थे। अपने नारी-चरित्रों को भीतर के चैतन्य से ऊर्जावान बनाकर परिवार, समाज और देश में उनके योगदान की, उनके अवदान की पाठिका तैयार करती रहीं। अस्मिताबोध के रूप में जागा उनके नारी-चरित्र का चैतन्य भारतीय-बोध से जुड़कर अपना आकार ग्रहण करता है। उनकी नारी परिवार और समाज को तोड़ने वाली नारी नहीं है। मृदुलाजी का कहना था कि 'मैं नारी को पुरुष, परिवार और समाज से अलग करके नहीं खड़ा करना चाहती। इसलिए उनकी समस्याओं और समाधान के विमर्श पर जोर अवश्य देती हूँ। उस समाधान में पुरुष, परिवार और सरकार की भागीदारी को आवश्यक मानती हूँ। विकास की राह पर आगे बढ़ती हुई युवतियों को उनके घर-आँगन से अलग करके चौराहे पर खड़ा नहीं करना चाहती। पुरुष और परिवार से अलग तो बिल्कुल नहीं। स्त्री के ऊपर दोहरी जिम्मेदारियों को बाँटना पुरुषों का भी दायित्व है। उनका भी संस्कार आवश्यक है।'

आज स्त्री स्वयं को भोग के उपकरण में तब्दील किए जाने में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहभागिता कर रही है। मृदुलाजी की पुस्तक 'मात्र देह नहीं है औरत' के चिंतनपरक लेख यह सिद्ध करते हैं कि नारी में देह के सौंदर्य की जगह आत्मिक शक्ति का तेज भी है। उसको नजरअंदाज नहीं करना चाहिए। पत्नीत्व और मातृत्व आज भी भारतीय स्त्री के अंतस्तल का बेहद मजबूत कोना है, जिसे स्त्री विमर्श के विदेशी, आयातित फॉर्मूलों से मजबूत नहीं किया जा सकता। उन्होंने अपने संबोधनों में सफलता के कई सोपानों को पार करती नारी को मातृत्व की शक्ति और सौंदर्य से परिचित कराते हुए कहा कि "तुम जल, थल, नभ पर जाओ, तुम्हारे लिए सभी दिशाएँ खुली हैं। मात्र स्मरण रखना है कि माँ तुम्हें ही बनना है। प्रकृति ने नारी को ही यह जिम्मेदारी दी है।" मृदुलाजी का समूचा व्यक्तित्व इस तथ्य को प्रमाणित करता था कि नारी में 'माँ ही सत्य, वात्सल्य ही शिव और ममता ही सुंदर है।'

दांपत्य संबंधों में तथा पारिवारिक रिश्तों में मिठास और सरसता बनाए रखने के लिए लोक-संस्कृति में रचे-बसे, मगर स्वार्थपरकता पर टिकी उपभोक्तावादी संस्कृति के चलते भुला दिए गए सूत्रों को वे बटोरती रहीं। सहअस्तित्व, समन्वय और सामंजस्य की भूमि पर स्त्री स्वत्व के संरक्षण की पुख्ता भूमि अर्जित की जा सकती है, इस विश्वास के साथ अपनी कृतियों के माध्यम से, अपने भाषणों के माध्यम से निरंतर सबसे संवाद स्थापित करती रहीं—'कहीं शिक्षिका की तरह, कहीं माँ की तरह तो कहीं मित्र बनकर'।

'सीता पुनि बोली', 'अहल्या उवाच' जैसी कृतियों को पढ़कर हमारी युवा पीढ़ी यह समझ सकती है कि 'कर्तव्यों की लागत लगाकर स्वाभिमान का तेज और स्वाभिमान का अधिकार कैसे अर्जित किया जा सकता है? महत्त्वाकांक्षा के पीछे अंधी दौड़ लगाती युवा पीढ़ी, जो अधिक-से-अधिक कमाना जीवन का ध्येय समझ बैठी है, उसे संदेश देती रहीं कि वे मात्र पैसा कमाने की मशीन बनकर न रह जाएँ, बल्कि अच्छे मानुष बनें। योग्य बनें। दूसरों के लिए जी-जीकर जरूरतमंदों के लिए थोड़ा समय, साधन और खर्च करके वे समृद्ध होंगे।" उन्होंने 'परिवार सशक्तीकरण' की जरूरत पर बल दिया। 'नारी न कठपुतली, न उड़नपरी' पुस्तक में लिखा कि 'समय तेजी से बदल रहा है, इसलिए समय की धार को समझकर बहुत कुछ करना है। व्यक्ति नहीं, बल्कि परिवार को प्रमुखता देनी है और व्यक्ति से नहीं, बल्कि परिवार से समाज बनाना है।'

देश के प्रति, समाज के प्रति, मनुष्य के प्रति गहरे दायित्वबोध ने मृदुलाजी के चिंतन को दिशा भी दी और उनके मन में व्यग्रता, बेचैनी भी पैदा की। उनकी लिखी कहानियों और उपन्यासों में उनके पात्र विपरीत परिस्थितियों में जीने का हौसला भारतीय मूल्यों से ही प्राप्त करते हैं। अँधेरे में उजाले की तलाश करते हैं। आस्था, संकल्प और विश्वास के दीये से दीवाली करने का संकल्प भी उनके मन में जगता है।

आदर्श जीवन और आदर्श सृजन के संयोग से निर्मित मृदुलाजी का व्यक्तित्व और कृतित्व भारतीय स्त्रियों के लिए प्रेरणा व शक्ति है। जाते-जाते मृदुलाजी 'विजयिनी' उपन्यास में जड़ी अपनी इस सूक्ति की पुष्टि कर गईं कि 'जीवन के किसी क्षेत्र के लिए आदर्श एक दिन में नहीं गढ़े जाते हैं। युगों-युगों तक जिए गए कोई संकल्प, व्यवहार और व्यक्तित्व आदर्श बनते हैं।'

साअ

१८८ नेशनल मीडिया सेंटर
एन.एच.-८, गुरुग्राम-१२२००२

देश की प्रशासनिक व्यवस्था के भारतीयकरण के सूत्रधार सरदार पटेल

• नलिन चौहान

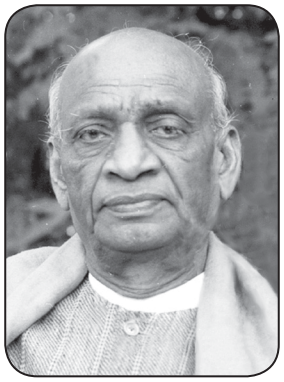

सरदार वल्लभभाई पटेल की अगस्त १९४७ में स्वतंत्र हुए भारतीय संघ के एकीकरण में निभाई भूमिका तो सर्वज्ञात है, पर यह बात थोड़ी कम जानी जाती है कि सरदार पटेल ही अंग्रेजी राज की स्टील फ्रेम कही जानेवाली इंडियन सिविल सर्विस की निरंतरता को कायम रखनेवाले निर्णायक व्यक्ति थे। उल्लेखनीय है कि आधुनिक भारत ने अंग्रेजों की औपनिवेशिक विरासत के रूप में नगर उन्मुख विकास, केंद्रीकृत योजना और राज के स्टील फ्रेम यानी सिविल सेवा के स्वरूप को बनाए रखा।

वर्ष १९४६ में अंग्रेज वाइसरॉय आर्किबाल्ड पेर्सियल वेवेल की अंतरिम सरकार में पटेल गृह सदस्य थे। इस दायित्व के नाते, जब उनके पास भारत सचिव द्वारा एक संदेश आया, जिसमें आई.सी.एस. में आगे की भरती रोकने के आदेश जारी किए गए थे, जिसे द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान रोक दिया गया था, ऐसा होना संवैधानिक परिवर्तनों से पहले ही उनका सेवाओं से संपर्क टूटने का एक संकेत था। भारत-सचिव के इस निर्णय ने गंभीर उलझनें पैदा कर दीं। प्रतिकूल राजनीतिक परिस्थितियों में प्रशासनिक विभाग में शून्यता की स्थिति पैदा होने पर सत्ता के हस्तांतरण में बड़ी परेशानियाँ उठानी पड़तीं। इस बात को भाँपते हुए पटेल ने प्रशासनिक अव्यवस्था का अनुमान लगाते हुए निर्भीकतापूर्वक बयान दिया कि "जितनी जल्दी भारत-सचिव के नियंत्रण को खत्म करके मौजूदा ढाँचे को परिसमाप्त कर दिया जाए, उतना ही अच्छा होगा।"

अंग्रेज सरकार की चालबाजियों से मिले इस अनुभव के आधार पर पटेल ने दो स्तरों पर काम करने का निर्णय लिया। पहला, इंडियन सिविल सर्विस (आई.सी.एस.) के भारतीय सदस्यों का विश्वास जीतना और दूसरा, आई.सी.एस. के उत्तराधिकारी के रूप में नई सेवा के निर्माण का आदेश देना—भारतीय प्रशासनिक सेवा। दोनों के दो भिन्न उपयोग थे, आई.सी.एस. का काम था—उत्तराधिकारियों (कांग्रेस) की ओर सत्ता का हस्तांतरण लागू करना और भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) का काम था—स्वतंत्रता के बाद प्रशासनिक एकता के जरिए इतने विशाल देश को जोड़कर रखना।

तब भारत-सचिव के संदेश के दो दिनों बाद पटेल ने मुख्यमंत्रियों (उस समय प्रीमियर कहलानेवाले) का सम्मेलन बुलाया और भारतीय प्रशासनिक सेवाओं के निर्माण की घोषणा कर दी। पटेल के इस निर्णय से कुछ मुख्यमंत्री खुश नहीं थे, इनमें कांग्रेस कार्यकारी समिति के प्रतिष्ठित सदस्य, संघ प्रदेश (तब संयुक्त प्रांत और बाद में उत्तर प्रदेश) के गोबिंद बल्लभ पंत भी सम्मिलित थे। ये सब क्षेत्रीय/राज्य प्रशासनिक सेवा शुरू करने के हित में थे, जिनके सदस्य इनके नियंत्रण में रहते और जिससे इनकी वशवर्ती (सिविल अधिकारियों के प्रांतीय नेताओं का अनुकरण) निश्चित हो जाती।

सरदार पटेल ने अंतरिम सरकार के अपने पूर्ववर्ती अनुभवों को स्मरण रखते हुए १० अक्तूबर, १९४९ को भारतीय संविधान सभा की बहस में कहा, "मैं इस सभा के रिकॉर्ड के लिए यह कहना चाहता हूँ कि यदि गत दो या तीन वर्षों में सिविल सेवाओं के अधिकारियों ने देशभक्ति की भावना और निष्ठा से काम नहीं किया होता तो यह संघ समाप्त हो गया होता। आप सभी प्रांतों के प्रीमियरों से पूछिए। क्या कोई भी प्रीमियर सिविल सेवा अधिकारियों के बिना काम करने को तैयार है? वह तत्काल त्याग-पत्र दे देगा। उसका गुजारा नहीं है। हमारे पास सिविल सेवा के बचे हुए कुछ ही अधिकारी थे। हमने उन थोड़े से व्यक्तियों के साथ बहुत कठिन कार्य चलाया है। यदि कोई जिम्मेदार व्यक्ति इस सेवा के बारे में इस लहजे में बोले तो उसको इस बात का निर्णय करना होगा कि क्या उसके पास कोई विकल्प है और फिर वह जिम्मेदारी ले ले।"

उल्लेखनीय है कि सरदार पटेल ने प्रशासन की स्थिरता, उसे पुन: सबल बनाने का कार्य तथा सिविल सेवाओं के मनोबल को ऊँचा रखने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कदम उठाए। जबकि तब भी अनेक कांग्रेसी नेताओं की, जिनमें पंडित जवाहर लाल नेहरू भी शामिल थे, वृत्ति सिविल सेवा अधिकारियों (आई.सी.एस.) की खुली निंदा करने की तथा सेना के बारे में कुछेक प्रशंसा के वचन कहने की रहती थी। स्वाधीनता के पहले पंडित नेहरू दोनों की कड़ी टीका करते थे; और उनका यह रुख थोड़े परिवर्तन के साथ उस समय भी बना रहा, जब वे केंद्रीय सरकार के मुखिया बन गए। दूसरी ओर सरदार ने अपने संगठन-कार्य के अनुभव से हमेशा कार्यक्षम सेवाओं के संगठन की कीमत को समझा

था। विभाजन-कौंसिल (अंतरिम सरकार) में तथा गृह मंत्रालय और देशी राज्य मंत्रालय में उन्हें अपने अधिकारियों का कीमती सहयोग प्राप्त हुआ था। अधिकारियों का विवेकपूर्ण चुनाव करके तथा उन्हें अपने विश्वास और प्रोत्साहन देकर सरदार ने सहयोग के इस क्षेत्र को अपने मंत्रालयों तथा चीफ-कमिश्नरों के प्रांतों तक, जिनका चार्ज सरदार के ही हाथ में था, फैलाया।

यही कारण था कि पटेल ने संविधान सभा में सिविल सेवकों की प्रशंसा करते हुए कहा था, "वे ऐसे लोग हैं, जो सम्मान, गौरव, प्रतिष्ठा चाहते हैं और जनता के प्यार के पात्र हैं। ऐसे लोग बहुत कम होंगे, जो देश के शत्रु कहलाने के लिए सेवा करेंगे।"

सरदार पटेल बिना समय गँवाए शीघ्रता से देश के केंद्रीय प्रशासनिक ढाँचे को मजबूत बनाने के काम में जुट गए। उन्होंने २१ अप्रैल, १९४७ को दिल्ली के मेटकाफ हाउस में, जब देश में सत्ता का हस्तांतरण तकरीबन चार महीने दूर था और अभी इस विषय पर कोई निर्णय नहीं हुआ था, अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा प्रशिक्षण स्कूल के पहले परीक्षार्थियों के समूह को संबोधित किया। पटेल ने कहा, "आप भारतीय सेवा के अग्रणी हैं और इस सेवा का भविष्य आपके कार्यों, आपके चरित्र और क्षमताओं सहित आपकी सेवा भावना के आधार से रखी नींव और स्थापित परंपराओं पर निर्भर करेगा।"

दिल्ली की यमुना नदी के किनारे बने इस स्कूल में प्रशिक्षण लेनेवाले भारतीय प्रशासनिक सेवा के चौबीस और भारतीय विदेश सेवा के नौ परिवीक्षकों को पटेल ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "शायद आप पिछली सिविल सेवा, जिसे इंडियन सिविल सर्विस के नाम से जाना जाता है, को लेकर भारत में प्रचलित एक कहावत से परिचित हैं, जो न तो भारतीय है, न ही सिविल है और उसमें सेवा की भावना का भी अभाव है। सही मायने में, यह भारतीय नहीं है, क्योंकि भारतीय सिविल सेवा के अधिकारी अधिकतर अंग्रेजीदाँ हैं, उनका प्रशिक्षण विदेशी जमीन पर हुआ था और उन्हें विदेशी आकाओं की चाकरी करनी थी। इस कारण प्रभावी रूप से यह पूरी सेवा भारतीय न होने, न ही नागरिकों के प्रति शिष्ट होने और न ही सेवा भावना से ओतप्रोत होने के लिए जानी जाती थी। फिर भी इसकी पहचान भारतीय सिविल सेवा के रूप में होती थी। अब यह बात बदलने जा रही है।"

महजबी आधार पर राष्ट्र-विभाजन ने राजनीतिक परिदृश्य को पूरी तरह से परिवर्तित कर दिया। वर्ष १९४६ में राज्य-प्रमुखों की बैठक में पारित प्रस्ताव भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा के लिए घोषणा-पत्र बन गया। भारतीय प्रशासनिक सेवा में भरती के लिए पहली प्रतियोगी परीक्षा जुलाई १९४७ में आयोजित हुई। इससे पूर्व इंडियन सिविल सर्विस के लिए चयनित लेकिन वास्तव में उस सेवा में नियुक्त नहीं किए गए व्यक्तियों को भी भारतीय प्रशासनिक सेवा में सम्मिलित कर दिया गया।

यह सरदार पटेल की पहल का ही परिणाम था कि केंद्रीय गृह मंत्रालय ने १ अक्तूबर, १९४७ को प्रशासनिक तंत्र का भारतीय नामकरण करते हुए अंग्रेजों की इंडियन सिविल सर्विस और इंडियन पुलिस को 'भारतीय प्रशासनिक सेवा' (आई.ए.एस.) और 'भारतीय पुलिस सेवा' (आई.पी.एस.) के रूप में नामित करने की सार्वजनिक घोषणा की। उससे पहले, आई.सी.एस. और आई.पी. को अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा और अखिल भारतीय पुलिस सेवा के रूप में परिवर्तित कर दिया गया।

विगत अठारह वर्षों से दिल्ली सरकार के सूचना एवं प्रचार निदेशालय में, संप्रति उपनिदेशक के पद पर तैनात। इससे पहले करीब छह साल जी.टी.वी. समूह के 'सिटी केबल', 'इंडिया टुडे' (हिंदी) पत्रिका और पी.टी.आई. भाषा में काम। गत तीन वर्षों से 'दैनिक जागरण' में दिल्ली के इतिहास पर एक नियमित साप्ताहिक कॉलम लेखन के लिए इस वर्ष स्तंभकार के रूप में 'नारद सम्मान' से सम्मानित।

१८ जनवरी, १९४८ को बंबई के शिवाजी पार्क में हुई एक सार्वजनिक सभा में सरदार पटेल ने अंग्रेजों की गुलामी से लेकर देश की आजादी तक की प्रशासनिक व्यवस्था के परिवर्तन को देशवासियों के सामने रखा। उन्होंने कहा, "कितने ही सालों से अंग्रेजों ने हमारी हुकूमत चलाने के लिए एक तंत्र बनाया था, जिसको 'लोहे की चौखटी' यानी 'स्टील फ्रेम' कहते हैं। यह वज्र का बना हुआ एक फ्रेम था, जिसको सिविल सर्विस कहते हैं। यह कोई पंद्रह सौ आदमियों की एक सर्विस थी। यह पंद्रह सौ अफसर सारे हिंदुस्तान का राज्य चलाते थे। बहुत साल से और बड़ी मजबूती से यह राज्य चला रहे थे। जब यह फैसला हुआ, तब हमारे पास पंद्रह सौ अफसर थे। उसमें २५ फीसदी अंग्रेज थे। वे सभी तो भागकर चले गए। कोई दो-तीन फीसदी रहे हों, तो वे भी चलते चले गए। तो वह जो फ्रेम था, आधा तो टूट गया। अब जो बाकी रहा, उसमें से जितने मुसलमान थे, वह सब भी चले गए। उनमें से चंद लोग यहाँ रहे, बाकी बस चले गए। आजादी प्राप्त कर लेने के बाद हमारा और मुल्कों के साथ व्यवहार शुरू हुआ और बड़े-बड़े देशों में हमें अपने एलची (राजदूत) भेजने पड़े। नतीजा यह हुआ कि आज हमारे पास पुरानी सर्विस के लोगों का सिर्फ चौथा हिस्सा बच रहा है, और इसी २५ फीसदी सर्विस से हम हिंदुस्तान का सारा कारोबार चला रहे हैं। नई सर्विस तो हमारे पास कोई है नहीं। वह तो हमें बनानी पड़ेगी। इस तरह से तो लोग मिलते नहीं, और जिसके पास अनुभव नहीं है, जिसने कभी काम नहीं किया, वैसे आदमियों को ले लेने से तो काम चलता नहीं है। राज चलाने के तंत्र का तीन हिस्सा टूट गया। सिर्फ चौथा हिस्सा बाकी रहा है, और उसी से हम काम चला रहे हैं। इस पर भी पिछले चार-पाँच महीनों में हमने इतना काम कर लिया।"

पटेल ने सिविल सेवा को अलगावों से ग्रसित एक देश को प्रशासनिक रूप से एकजुट करनेवाली एक शक्ति रूप में देखा। वे एक एकीकृत सिविल सेवा के मुखर प्रवक्ता थे, जबकि अनेक भारतीय रियासतों ने अपने खुद की सिविल सेवा को प्राथमिकता दी थी। दूरदर्शी पटेल को स्पष्ट था कि एक नव-स्वतंत्र राष्ट्र को एकता के सूत्र में बाँधे रखने और किसी भी प्रकार के विखंडन को थामने के लिए एक शक्तिशाली अखिल भारतीय सिविल सेवा का होना महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने इसी बात को तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू को २७ अप्रैल, १९४८ को

भेजे पत्र में रेखांकित करते हुए लिखा, "मेरे लिए इस बात पर जोर देना शायद ही जरूरी हो कि कार्यक्षम, अनुशासनबद्ध तथा संतुष्ट अधिकारी, जिन्हें अपने परिश्रमपूर्ण और प्रामाणिक कार्य के फलस्वरूप उन्नति का आश्वासन प्राप्त है—लोकतांत्रिक शासन-पद्धति में स्थिर शासन के लिए निरंकुश शासन की अपेक्षा अधिक अनिवार्य है।"

जब तक वर्तमान भारत और उसकी प्रशासनिक व्यवस्था जीवित है, सरदार पटेल का नाम वर्तमान भारत के ऐसे राष्ट्र निर्माता के रूप में सदा स्मरण किया जाता रहेगा, जिन्होंने सभी देशी रियासतों का एक भारतीय संघ और उसके राजकाज को कायम रखने के लिए भारतीय सिविल सेवा की व्यवस्था को बनाया। उनके ये कार्य हमारे देश के एकीकरण और उसके तंत्र को अक्षुण्ण रखने की दिशा में स्थायी योगदान थे। इस विषय में उनके कार्यों को हम कभी विस्मरण नहीं कर सकते। जब तक भारत जीवित है, वर्तमान भारत के निर्माता के रूप में उनका नाम सदा स्मरणीय रहेगा।

संदर्भ—

१. सरदार पटेल, चुना हुआ पत्र-व्यवहार १९४५-१९५०, खंड-१, संपादक : वी. शंकर, अनुवादक : सोमेश्वर पुरोहित (नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, २०११)
२. भारत की एकता का निर्माण, सरदार वल्लभभाई पटेल के भाषण (प्रकाशन विभाग, १९५४)
३. पत्र सूचना कार्यालय की ओर से समय-समय पर जारी केंद्रीय गृह मंत्रालय के प्रेस नोट

बी-४, दिल्ली सरकार अधिकारी आवास
ट्रांजिट हॉस्टल, १-ए बैटरी लेन,
राजपुर रोड, सिविल लाइंस, दिल्ली
दूरभाष : ९८९९८१८६१६

लघुकथा

ट्रेन में नशा

● **केदारनाथ 'सविता'**

रवि कानपुर अपनी साली की पुत्री की शादी में गया था। शादी बहुत धूम-धाम के साथ संपन्न हुई। दूसरे दिन वह कानपुर से अपने घर प्रयागराज वापस आने के लिए दोपहर में कानपुर सेंट्रल रेलवे स्टेशन पहुँचा। कालका-हाबड़ा सुपर फास्ट ट्रेन में वह जनरल टिकट लेकर स्लीपर द्वितीय श्रेणी की बोगी में चढ़ गया।

उस बोगी में नीचे के कई बर्थ खाली थे। उसी में वह एक बर्थ पर बैठ गया। दिन का समय था। तीन घंटे की यात्रा थी। उसने देखा कि एक व्यक्ति गेट के पास वाले बर्थ पर ५-६ अटैची रखकर बैठा था। वह मोबाइल से किसी से कुछ बात कर रहा था।

रवि ने पूछा, "आप यहीं उतरेंगे क्या?"

उसने "हाँ" में जवाब दिया।

थोड़ी देर में दो व्यक्ति उसे रिसीव करने आए और उसकी दो-दो अटैची लेकर उसे लेकर चले गए।

ट्रेन चल दी। रवि ने देखा कि एक झोला वहीं नीचे वाले बर्थ पर टिका कर रहा था। ऊपर के आमने-सामने के दो बर्थ पर दो यात्री सोए थे। रवि ने उन्हें जगाकर पूछना चाहा कि वह झोला उनका हो तो उसे अपने पास ऊपर बर्थ पर रख लें नहीं तो चोरी हो सकता है। पर वे दोनों गहरी नींद में थे। नहीं उठे, बेहोशी की हालत में थे।

बोगी में यात्रियों की संख्या बहुत कम थी। रवि डर गया कि इस झोले में कोई विस्फोटक या आपत्तिजनक सामग्री होगी तो वह फंस जाएगा। पुलिस उस झोले को उसी का सामान बताकर उसे गिरफ्तार कर लेगी। उसने देखा कि ऊपर के बर्थ पर सोए दोनों व्यक्तियों के पास कोई सामान अटैची, बैग आदि नहीं था। रवि को समझते देर नहीं लगा कि वे दोनों यात्री जहर खुरानों के शिकार हो गए हैं। ट्रेन पूरी रफ्तार से दौड़ रही थी।

तभी ट्रेन में गश्त करते पुलिस के दो जवान आते दिखाई दिए। रवि ने उन्हें रोककर उसे झोले व उन दोनों लेटे यात्रियों के बारे में बताया। पुलिस ने उस झोले का सारा सामान बाहर निकाल कर देखा। उसमें केवल मुड़े-तुड़े, लिपटे हुए पुराने अखबार भरे पड़े थे। फिर पुलिस ने बर्थ पर सो रहे उन दोनों यात्रियों को खींचकर नीचे उतारा। वे दोनों अर्धचेतनावस्था में थे। पूछने पर कुछ बोल नहीं पा रहे थे। दोनों को पुलिस वाले बोगी में लैट्रिन के पास ले गए। उनकी सहायता करने के बाजय उन्हें डांटने लगे—"ट्रेन में नशा करके चलते हो? जेब में कितना रुपया रखे हो? निकालो।"

नींद में ही दोनों कुछ लड़खड़ाती जबान से बोल रहे थे, पर समझ में नहीं आ रहा था। स्पष्ट था कि उन्हें खाने-पीने की किसी चीज में नशीला पदार्थ मिलाकर दे दिया गया था और उनका सामान अटैची आदि कानपुर में वह यात्री लेकर उतर गया था। सामान तो चला ही गया था। जेब में बचा-खुचा रुपया भी पुलिस वालों ने लेकर उन्हें डाँटकर कहा, "जाकर सो जाओ। आइंदा से नशा करके ट्रेन में मत चलना।"

फिर डंडा हिलाते हुए दोनों सिपाही दूसरी बोगी में चले गए।

पुलिस चौकी रोड, लालडिग्गी
सिंहगढ़ गली (चिकाने टोला)
मीरजापुर-२३१००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९३५६८५०६८

राम झरोखे बैठ के

मौसम के बदलते संकेत

● गोपाल चतुर्वेदी

मौसम में बदलाव के संकेत स्पष्ट हैं। रोजमर्रा की सड़क फैशन प्रतियोगिता प्रारम्भ हो गई है। कुछ है जो सर्दी से बचने के लिए नए-नए जिरह-बख्तर से सजे हैं। कुछ नए पुलोवर में फबते हैं, तो कुछ नए सूट में। प्रदर्शन की होड़ है। नए सूट और पुलोवर पुरानों को हेय दृष्टि से ताकते हैं। ''कैसा जोकर है कि इसके पुलोवर में छेद है और इसे खबर ही नहीं है।'' अथवा ''देखिए तो कहने को सूट डाँटे हैं और यह शऊर भी नहीं है कि पिछले साल कहीं खाना गिरा लिया था, तब से कोट में दाग है, ड्राई-क्लीन ही करवा लेते।'' कोई इनको कैसे समझाए कि कुछ के पास जीवन में एक ही सूट है जो शादी के दहेज की लूट में मिला था। अगर ड्राई क्लीनिंग 'अफोर्ड' कर पाते तो अब तक दूसरा सूट ही सिलवा लेते!

सबकी अपनी-अपनी आर्थिक मजबूरियाँ हैं, वास्तविकता को स्वीकार करने का साहस सब में नहीं है। कुछ कहते हैं कि ''भैया? हम तो राष्ट्रीय परिधान यानी बंडी वगैरह से काम चला लेते हैं, कोन पश्चिम के आयातित नखरे झेले?'' एक अन्य तर्क मौसम का है। सूट-बूट पहनने वाले देशों में सर्दी का आधिक्य है, हिंदुस्तान में नहीं। परिधान मौसम पर निर्भर है। तीन-चार महीने की शीत ऋतु के खातिर क्यों कोई, विदेशी फैशन की प्रतियोगिता करे? पर भारत में यही हो रहा है। क्या इसी को मानसिक गुलामी कहते हैं? शक्ल-सूरत से अंग्रेज तो बन न पाए, तो काले अंग्रेज ही सही। वैसा सोच, वैसी पोशाक, पहनने से, किसने रोका है?

हम तो जानते हैं पिछले साल का पुलोवर है, नया खरीदना संभव होता तो खरीद न लेते? एकाध छेद ही है, तो हो। पत्नी को कभी फुरसत मिली तो 'रफू' कर देगी वरना हमें छेददार पुलोवर से कोई आपत्ति नहीं है। उल्टे, बातचीत करने में इससे सुविधा ही है। कोई गंभीर चर्चा के दौरान यदि सोचने की मुद्रा अपनानी हो तो पुलोवर के छेद में, उँगली घुसा कर, चिंतन का नाटक कर लिया। सबके सोचने के अलग-अलग तरीके हैं। कुछ सिगरेट का धुआँ उड़ाकर सोचते हैं, कुछ पान की पीक जमाकर, तो कुछ ठुड्डी को हाथ में पकड़कर। यों पुलोवर के छेद में उँगली घुमाकर चिंतन, एक मौलिक अंदाज है। इसे वही अपना सकते हैं जिनके पुलोवर में छेद है और जो विवश हैं, इसे बाहर पहनने को। यों तो ऐसो की संख्या काफी है पर ऐसे साहसी कम हैं जो ऐसे शीत के हथियार का घर के बाहर प्रयोग करें। इस लिहाज से हम, अल्पसंख्यकों की गिनती में, आते हैं। पर सरकार हमें कोई राहत देने को प्रस्तुत नहीं है। लिहाजा हमें अपनी पत्नी की व्यस्तता कम होने की प्रतीक्षा है। कभी ऐसा दुर्लभ अवसर आए तो पुलोवर का काया-कल्प हो वरना हमें डर है कि समय के साथ पुलोवर मरम्मत योग्य नहीं रहेगा। फिर किसी उधार का इंतजार लाजमी है कि नए की खरीद हो।

हमें कभी-कभार लगता है कि अपने और अपने ऐसों के जीवन का बड़ा हिस्सा ऐसे ही किसी इंतजार में कट जाता है; कभी राशन की दुकान, कभी सार्वजनिक बस, कभी उधार, कभी बच्चों के स्कूल का प्रवेश। सिर्फ एक प्रतीक्षा खासी संतोषजनक रही है, जबकि नौकरी के इंतजार से वह हासिल हो। कतई अंधे को बटेर के हाथ लगने के अंदाज में। उसी के वेतन से, भले ही रूखा-सूखा भोजन ही सही, पर पेट तो भरता है। कितने है जो हमारे ऐसे भाग्यशाली हैं, वरना बेरोजगारों की तादाद दिनों-दिन, उफान पर है। हमें ही क्यों, सभी को संदेह है कि धैर्य का पानी कही खौलकर बहा तो क्रांति न हो जाए? यों उनकी भी कमी नहीं है जो ऐसी किसी दुर्घटना के लिए प्रतीक्षारत है। उन्हें विनाश के तमाशे देखने का शौक है। पुरानी पीढ़ी ने देश का विभाजन देखा था, यह उत्सुक है कि मुमकिन हो तो क्रांति का नजारा ही देख लें। इनका भरसक प्रयास है कि रोजगार ऐसे ही ठप रहे, और क्रांति हो ही जाए। विरोधी दलों का भी यही अरमान है पर सिर्फ भाषण से क्रांति की वारदातें नहीं होती हैं। जनता का धैर्य जवाब दे ही नहीं रहा है, न उसका आशीर्वाद। उसे अब भी उम्मीद है कि कुछ सकारात्मक परिवर्तन होगा। बस थोड़े इंतजार की बात है। जब योजनाएँ फलीभूत होंगी, तब रोजगार का अंबार लगेगा। तब तक घर की दाल-रोटी कौन बुरी है? वह किस्मत वाले हैं। भूख के शिकार तो नहीं हैं।

भूख के शिकार वह हैं, जो कोरोना संकट के चलते दूसरे प्रांतों से नौकरी खोकर अपने गृह-प्रांत और अपने गाँव में लौटे हैं। अपनो ने ही उनकी जमीन हथिया ली है। नौकरी के नाम पर सिर्फ नरेगा और मनरेगा जैसी योजनाएँ हैं। वह भी कहीं उपलब्ध है, कहीं नहीं। कोरोना ने जो सबसे छीना है, वह है इनसान की जान, आर्थिक प्रगति और राष्ट्रीय आय में बढ़ोतरी। इस महामारी के चलते आर्थिक गतिविधियाँ एक तरह से ठप पड़ी हैं। लोगों को आशा है कि मौसम का बदलाव कोरोना पर कुछ दुष्प्रभाव डालेगा। उसका प्रसार और प्रभाव घटेगा? क्या कोरोना

की वैक्सीन आने की संभावना है? कहना कठिन है। दरअसल, कोरोना का ताल्लुक चीन से है। चीन से संबंध में कोई भी टिप्पणी कठिन ही नहीं, असंभव है। पहले भी वह दोस्त बनकर, नेहरूजी के समय सीमा के क्षेत्र में दुश्मनी कर चुका है। इस बार भी दोस्ती के झूले पर पेंगे बढ़ाते, उसने, अचानक, अपने विस्तारवादी इरादे स्पष्ट कर दिए हैं। लद्दाख में अब भी स्थिति सामान्य नहीं है। महामारी कोरोना भारत और विश्व को उन्हीं की देन है। चेहरे के हाव-भाव से उनके अंतर के इरादे जानना आसान है क्या? मौसम के परिवर्तन से क्या उनकी सोच बदलेगी? हमें ऐसा लगता नहीं है। कोरोना की वैक्सीन आ जाए तब कुछ उम्मीद जरूर हो वरना इतने मौसम बदले, चीन पर अब तक कोई असर हुआ नहीं है। जो उसकी भूल विस्तारवादी प्रवृत्ति है, उसके बदलने की गुँजाइश उतनी ही कम है जितनी कुत्ते की दुम की सीधी होने की।

इधर मूल्यों की यह दशा है कि कोरोनाकाल में वह ''कोढ़ में खाज'' जैसी कहावत को याद दिला रहे हैं। पहले कभी उनकी वृद्धि महँगाई भत्ते से जुड़ी थी। इधर महँगाई भत्ता बढ़ा उधर मूल्य, वह भी इस मात्रा में कि वेतन-वृद्धि का प्रभाव किसी को महसूस न हो। अब कीमतें आकाशीय उड़ान में यकीन रखती है। बहुत दिन जमीन में दौड़े, अब इधर उनका रुख आसमान की ओर है। अच्छे-अच्छे कनकौए-बाज कीमतों के सन्मुख शर्मिंदा है। वह कितनी भी ऊँची उड़ान भरें, मूल्य उनको नीचा दिखाने में समर्थ है। दीगर है कि जनता की पीड़ा उनसे कहीं अधिक है। आमदनी तो है, वह तो रोज बढ़ने से रही। मूल्य हैं कि वह रोज आसमान नाप रहे हैं। एक ओर कोरोना रुला रहा है, दूसरी ओर कीमतें। आश्चर्य यह है कि चक्की के इन दो पाटों में पिसकर भी इनसान और वह भी निर्धन इनसान, अभी तक जिंदा है।

ऐसों को न देश की समस्याओं का ज्ञान है, न अनुभव। इनके पास सलाहकारों की टोल है। जो वह सुझाते हैं, उसी के यह राष्ट्रीय समस्या समझते हैं। वही टोल उसके समाधान भी सुझाती है। ऐसे नेतृत्व का जनता से सीमित संबंध है। कभी किसी दलित ''वर्कर'' के घर गाजे-बाजे और टी.वी. कैमरे के साथ, रात बिता ली। कभी खाट पर बैठ के अपने दल के युवा और बुजुर्गों से मौसम की बात कर ली। न खुद सोए, न वर्कर का परिवार, न वर्कर। बस, उसे इस सजा के एवज में एक नायाब तोहफा शहर के पाँच सितारा होटल का खाना अपने गाँव में नसीब हुआ है।

इतना ही नहीं, विरोधी राजनैतिक दलों की दिहाड़ी और आलू-पूड़ी के लालच में जनता प्रदर्शन को ही नहीं, पुलिस के लाठी-डंडे खाने को भी प्रस्तुत हैं। सामान्य व्यक्ति ही इन विरोध के कारनामों में भुगतते हैं। नेताओं का क्या? उनके खरोंच भी लगे तो अखबारों की सुर्खियाँ बनती हैं। सरकार और शासन पक्ष जानता है। आज सत्ता में है तो कल विरोध में रहने की भी संभावना है। खरोंचों का ख्याल रखना और सर्वोत्तम सरकारी इलाज एक स्वीकृत सियासी परंपरा है। यों वख्त के बदलाव होते रहें क्या फर्क पड़ता है? पुलिस को लाठी और आँसू-गैस का सहारा है और नेताओं को पिटाई न होने का। इसके लिए आम जनता काफी है। सब कुछ भले बदले, न पुलिस का डंडा-दर्शन बदलता है न नेता का, सत्तादल के हर कार्यक्रम का विरोध।

यों नेता होने के मूल आधार भी बदले हैं। आजादी के एक दो दशक तक स्वतंत्रता-संग्राम के सेनानी ही सर्व-स्वीकृति से जनता द्वारा मान्य और सम्मानित नेता होते थे। उसके बाद भी जन सेवा को समर्पित व्यक्ति ही जनसेवक रहा। जनता को उसके वादे और इरादे में खाई नजर नहीं आई। समय के अंतराल ने इसमें मूलभूत परिवर्तन हुआ। अब नेता जन्मजात होते हैं। किसी ने स्वतंत्रता के संघर्ष में योगदान दिया हो तो उसके तीन चार पीढ़ी के बाद का भी जन्मा महानुभाव, अपने पुरखों की जनसेवा के आधार पर, नेतृत्व का अभिलाषी ही नहीं, दावेदार भी है। यही नहीं, यदि किसी का बाप या बाबा कभी सत्ता के शीर्ष पर रहा हो तो उसके वंशज का शीर्ष पद पर स्वाभाविक अधिकार है। यह नए प्रकार का नेतृत्त्व है जो आज देश के प्रजातंत्र पर छाया हुआ है। कुछ इसे लोकतंत्र की जगह पारिवारिक प्रजातंत्र का नाम देते हैं।

ऐसों को न देश की समस्याओं का ज्ञान है, न अनुभव। इनके पास सलाहकारों की टोल है। जो वह सुझाते हैं, उसी के यह राष्ट्रीय समस्या समझते हैं। वही टोल उसके समाधान भी सुझाती है। ऐसे नेतृत्व का जनता से सीमित संबंध है। कभी किसी दलित ''वर्कर'' के घर गाजे-बाजे और टी.वी. कैमरे के साथ, रात बिता ली। कभी खाट पर बैठ के अपने दल के युवा और बुजुर्गों से मौसम की बात कर ली। न खुद सोए, न वर्कर का परिवार, न वर्कर। बस, उसे इस सजा के एवज में एक नायाब तोहफा शहर के पाँच सितारा होटल का खाना अपने गाँव में नसीब हुआ है। नए नेता का ग्राम जीवन से ताल्लुक हो गया। उसके प्रचार में बहुमूल्य तथ्य जुड़ गया कि उसने ''ग्राम्य जीवन का गहन अध्ययन ही नहीं किया, वहाँ की कठिनाइयों-समस्याओं के उसका व्यक्तिगत परिचय भी है।'' जो उसके अध्ययन और ज्ञान से परिचित हैं, वह अपना सिर पीटें तो पीटते रहें। उसका नेतृत्व दल में विवाद के परे है। वह भारत के किसानों का आधिकारिक और मान्य प्रतिनिधि है। गाँव में वर्कर के घर बिताई रात इसका प्रमाणपत्र है। खाट पर बैठा ग्रामवासियों से घिरे नेता का फोटू इसका सबूत है। संभव है कि गाँव में जीवन बिताए वास्तविक किसान नेता के पास ऐसे फोटू न हों। पर हमारे शहरी नेता के पास तो हैं ही। क्या समय के साथ इस प्रकार के नेतृत्व में किसी परिवर्तन की अपेक्षा की जाए?

जनता को सपने दिखाए गए है कि बहुद्देशीय कंपनियों के देश में पधारने से और नए उद्योग लगाने से, रोजगार के अवसर बढ़ेंगे? यह सपना क्या सच होगा? हमें नहीं लगता है कि तकनीकी प्रगति के चलते उद्योगों में रोजगार की उपलब्धता पहले जैसी रही है। वास्तविकता में, यह उद्योग उन्नत तकनीकों के कारण, इनसानी योगदान पर, पूरी तरह निर्भर नहीं है। इनमें प्रशिक्षित व्यक्तियों की दरकार है। क्या हम उसकी तैयारी कर रहे हैं? अब तो घरों, सड़कों और उनके रख-रखाव पर निर्भर, निर्माण उद्योग में भी, नई तकनीक का प्रवेश हो चुका है। वह भी देश में पधारी तो हमारे अशिक्षित मजदूरों का क्या होगा? यही कारण है कि

आज ''स्किल्ड'' मजदूरों की बड़ी वक्त है। स्कूल से ही इस प्रकार की शिक्षा आवश्यक है। यह वख्त की नई चुनौती है। बढ़ती बेरोजगारी से जूझने के लिए यह अनिवार्य है। जीवन के हर क्षेत्र में अब तकनीक का प्रवेश होना-ही-होना। इसीलिए बेरोजगारों को नौकरी या रोजगार के लिए तकनीकी तैयारी भी आवश्यक है। कहीं ऐसा न हो कि हम कोरोना से तो बच निकलें पर कुशिक्षा और कौशल हीनता के शिकार हो जाएँ? कौशल प्रशिक्षण, सुखद भविष्य की प्राथमिक शर्त है। क्या आशा की जा सकती है कि हम इसमें सफल होंगे?

इधर टी.वी. ने नए प्रकार के रोजगार को जन्म दिया है। इन्हें 'विश्लेषक' निरूपित किया जाता है। यह हर प्रकार की बहस और चर्चा के लिए 'फिट' है अर्थात् सर्वज्ञानी हैं। चाहे राजीनति हो या राजद्रोह। यह हत्या-आत्महत्या के विशेषज्ञ हैं। यह मानव मनोविज्ञान के ज्ञानी किसी ने क्या किया और क्यों किया, सब जानते है। यों इनकी प्रतिभा गायन की है पर यह भारतीय संस्कृति और इतिहास के भी मर्मज्ञ हैं। इनकी एक अन्य खासियत चिल्लाने की क्षमता है। गायन में यह भले कोयल के स्वर के धनी हैं पर बहस में काँव-काँव में कौए को मात देना, इन्हें टी.वी. के योग्य बनाता है। एक अन्य आवश्यक योग्यता, अपनी सही या गलत बात, धाराप्रवाह बोले जाने की जिद है। बहुत कम चैलन हैं जो शोर में विश्वास नहीं करते हैं। जिन्हें तर्कसंगत बहस पसंद है, उनकी लोकप्रियता का ग्राफ धीरे-धीरे नीचे आ रहा है।

ऐसे तर्क संगत बहस नियम है और शोर या हल्ला मचाना एक अपवाद। इस अपवाद में क्या पता, दर्शकों को एक नया मजा आता है। जैसे शहर में एकत्र भीड़ की मारपीट में। बस जरूरी है तो यह है कि उन्हें खुद कोई खतरा न हो! वह केवल दर्शक बनकर हिंसा का तमाशा देखें। क्या समय के साथ इस दृष्टिकोण में कुछ परिवर्तन आएगा? उसी प्रकार जैसे पारिवारिक प्रजातंत्र के वंशवादी, दो चुनावों में सत्ता से दूर रहे हैं, उनके अपने सत्ता के कुदरती दावेदार होने के विश्वास में, क्या कुछ बदला है? बिहार का चुनाव बीत चुका है पर टी.वी. के विश्लेषक, चुनाव के नतीजों पर इसी अभी भी चर्चा में जुटे हैं? इस दृष्टि से देखें तो न वंशवादी सत्ता की आस छोड़ते हैं, न विश्लेषक अतीत और भविष्य का जिक्र, अपनी वर्तमान हल्ला मचाती बहस में! ऐसे तो हर चैनल, एक न एक, भविष्यवाणी का कार्यक्रम अवश्य देता है। इसमें भविष्यवक्ता अजीब से परिधान में कुरसी पर बिराजे नजर आते हैं और सजी-धजी कन्या उनसे प्रश्न पूछती! रही-सही कसर विश्लेषक पूरी करने को कमर कसे हैं। वह वर्तमान घटना के आधार पर देश के भविष्य का अनुमान लगाने से क्यों चूकें?

साअ

९/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

उत्तर-पूर्व भारत की सांस्कृतिक एकात्मता

• रसाल सिंह

संस्कृति व्यक्ति और राष्ट्र को दृष्टि देती है। जीवन-शैली एवं जीवन-मूल्यों का निर्धारण करती है और विशिष्ट जीवन-दर्शन का निर्माण करती है। संस्कृति ही मनुष्य को मानवीय स्वरूप और गरिमा प्रदान करती है और उसे विशिष्ट बनाती है। मनुष्य के चिंतन, उसके कर्म और जीवन का निर्धारक तत्व संस्कृति ही है। इसलिए राष्ट्र की सबसे बड़ी धरोहर भी संस्कृति ही होती है, जो उसे एक विशिष्ट पहचान देती है। भारतीय संस्कृति विश्वपटल पर अपनी अनूठी विशेषताओं के लिए जानी जाती है। भारतीय जीवन-दर्शन और सांस्कृतिक मूल्य सदियों से मनुष्य का मार्ग प्रशस्त करते आए हैं। 'स्वकेंद्रित' की जगह 'सर्वकेंद्रित' भारतीय संस्कृति भौतिक, आत्मिक और आध्यात्मिक संतोष प्रदान करती आई है। यहाँ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम से निर्धारित जीवनक्रम अनवरत चलता रहता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्', 'अतिथि देवो भव:', सांस्कृतिक आत्मसातीकरण एवं सम्मिलन, प्राकृतिक साहचर्य के साथ-साथ सामुदायिकता, समन्वय और संतोष इसकी आधारभूत मूल्य-सरणि हैं।

भारत अपनी 'विविधता में एकता' के लिए जाना जाता है। भारत में अनेक भाषाएँ, जीवन-पद्धतियाँ, धार्मिक विश्वास, रीति-रिवाज, तीज-त्योहार, रहन-सहन और खान-पान अपने पूरे वैविध्य और वैभव के साथ जीवन में राग-रंग भरते रहे हैं। भारतीय संस्कृति की सबसे अनूठी विशेषता वह अंतर्संबद्धता है जो गहरे स्तर पर समस्त भारतीयों को एकसूत्र में पिरोए रखती है। भारत की भौगोलिक और पर्यावरणीय विविधता भी इसे विशिष्ट स्वरूप प्रदान करती है।

उत्तर-पूर्व भारत अपनी समृद्ध संस्कृति, उन्नत जीवन मूल्यों, प्राकृतिक सुषमा एवं संसाधनों के लिए जाना जाता है। उत्तर-पूर्व भारत का समाज सदियों से प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं का ध्वजवाहक रहा है। किंतु वैरियर एल्विन जैसे अंग्रेज मानवशास्त्रियों ने अपनी औपनिवेशिक नीति के तहत इस विशिष्ट भारतीय समाज को असभ्य, जंगली और आदिम बताते हुए साम्राज्यवादी हितों के अनुकूल 'औपनिवेशिक पाठ' तैयार किया और मिशनरियों के माध्यम से सचेत और सुनियोजित धार्मिक हस्तक्षेप किया। इससे उत्तर-पूर्व भारत न केवल भ्रांत धारणा का शिकार

जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय के हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग में प्रोफेसर एवं अध्यक्ष। सत्ता, समाज और सर्वेश्वर की कविता, स्वातंत्र्योत्तर परिदृश्य और राजकमल चौधरी की काव्य-चेतना, हिंदी साहित्य के इतिहास पर कुछ नोट्स और हिंदी का लोक : कुछ रस, कुछ रंग जैसी आलोचना पुस्तकें और हिंदी की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में चालीस से अधिक आलेख प्रकाशित।

हुआ बल्कि अंग्रेजों की समाज में 'फूट डालो और राज करो' की नीति की भी प्रयोगशाला बना। हम आज उसी बीज को 'अलगाववाद' के रूप में फलते-फूलते देख रहे हैं। 'पूर्वोत्तर भारत रंगारंग लोकसंस्कृति का संग्रहालय है। असम तथा पूर्वोत्तर भारत की सभी जातियों, उपजातियों, जनजातियों की अपनी संस्कृति है। इन संस्कृतियों के साथ प्राचीन भारतीय संस्कृति का भी सातत्य है। परंतु आज शेष भारत के लोगों का पूर्वोत्तर की इन संस्कृतियों के साथ परिचय न के बराबर है, जो भारतीय एकता की अवधारणा को बाधित और विच्छिन्न करता है। इस कारण इनके मध्य भावनात्मक संपर्क का भी अभाव है।"

पूर्वोत्तर के समाज ने जंगल, जल और जमीन के साथ सतत, धारणीय और आत्मीय संबंध स्थापित किया; भारतीय सांस्कृतिक जीवन का पल्लवन किया और प्राकृतिक संसाधनों का जैसा अनुकरणीय और संयमित उपभोग किया; वह इन्हें मनुष्यता के पैमाने पर बहुत उच्च स्थान का अधिकारी बनाता है। वर्तमान समय की आवश्यकता है कि उस 'औपनिवेशिक पाठ' को नकार कर और भारतीय सांस्कृतिक एकात्मता के तत्त्वों को स्वीकार कर हम उत्तर-पूर्व समाज के गौरव को पहचानने और प्रतिष्ठित करने का प्रयास करें। इससे न केवल उत्तर-पूर्व के विभिन्न समुदायों बल्कि संपूर्ण भारत और भारतीय संस्कृति की मूल अवधारणा के साथ भी न्याय हो सकेगा।

भारतीय संस्कृति के विशाल कलेवर तथा भारतीयता की मूल आत्मा की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए आलोचक नामवर सिंह ने लिखा है, "अखंड भारत की परिकल्पना अनेकता में एकता नहीं है, वरन एकता से नि:सृत होनेवाली अनेकता है। अर्थात् 'एकोऽ बहुस्याम', हम एक हैं,

अखंड हैं, एक तत्व हैं, शक्ति हैं जैसे आत्मा या ब्रह्म एक है और वह अनेक जीवों में अपने को प्रकट करता है। उसी तरह से अखंड अविभाज्य भारतीय आत्मा है। वह भारतीय आत्मा ही है जो अपने को विविध रूपों में अभिव्यक्त करती है। ये प्रदेश और राज्य और भाषाएँ और संस्कृतियाँ और धर्म उससे उद्भूत होते हैं।" सत्य तो यह है कि नामवर सिंह ने ब्रह्म की जो मीमांसा प्रस्तुत की है वह भारतीय चेतना एवं चिंतन की अवधारणा के विपरीत है क्योंकि भारतीय संदर्भ में जिस ब्रह्म को स्वीकार किया गया है वह नामवर सिंह के बहुस्याम: के ठीक विपरीत एकात्मता के ऐसे सूक्ष्म सूत्र से ग्रंथित है जिसके अंतर्गत जहाँ एक और दयासागर भगवान शिव की त्रिशक्ति है तो दूसरी ओर, भगवान् विष्णु के अवताररूप में राम, कृष्ण जैसे महामानव हैं। तीसरी ओर, शक्ति स्वरूपा भगवती दुर्गा, काली, सीता आदि की शक्ति की एकात्म अन्विति है। शायद नामवर सिंह की दृष्टि में ब्रह्म की यह अवधारणा समाहित ही नहीं हो सकी। भारतीय संस्कृति की एकात्मता के गूढ़ रहस्य को समझने के लिए भारतीय दृष्टि का आत्मसातीकरण आवश्यक है। भारत की अखंडता के संदर्भ में उन्होंने ऋग्वेद के अग्निसूक्त 'ओ३म अग्निमइले पुरोहितम होतारं रत्नधातमम' जैसे पवित्र उद्घोष का उद्धरण तो दिया परंतु इसकी प्राचीनता, मौलिकता एवं विशिष्टता को देखने-समझने में उनकी दृष्टि असफल रही। विश्व के उपलब्ध प्राचीनतम एवं सर्वसम्मत साहित्य का 'अग्निसूक्त'; जिससे कि संपूर्ण ब्रह्मांड आलोकित और उद्भाषित हुआ है, भारतवर्ष की अखंडता में निरंतर निरूपित एवं स्थापित हुआ है।

वास्तविकता यह है कि उत्तर-पूर्व के समाज का सांस्कृतिक स्वरूप भारतीय संस्कृति का ही विस्तार है। वास्तव में संस्कृति या भारतीयता की अवधारणा पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है। भगवतशरण उपाध्याय ने भारतीय संस्कृति को परिभाषित करते हुए लिखा है, "भारतीय संस्कृति अंतहीन विभिन्न जातीय इकाइयों के सुदीर्घ संलयन का प्रतिफलन है।"

वास्तविकता यह है कि उत्तर-पूर्व के समाज का सांस्कृतिक स्वरूप भारतीय संस्कृति का ही विस्तार है। वास्तव में संस्कृति या भारतीयता की अवधारणा पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है। भगवतशरण उपाध्याय ने भारतीय संस्कृति को परिभाषित करते हुए लिखा है, "भारतीय संस्कृति अंतहीन विभिन्न जातीय इकाइयों के सुदीर्घ संलयन का प्रतिफलन है।" उत्तर-पूर्व के समाज का निर्माण भी समय के प्रवाह के सापेक्ष विभिन्न जातियों-जनजातियों की पारस्परिक क्रिया के फलस्वरूप हुआ है। अत: उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताएँ अनूठी प्रतीत होती हैं। वास्तव में उनकी सांस्कृतिक अस्मिता अखंड भारत की परिकल्पना की ही परिचायक है। उत्तर-पूर्व समाज और संस्कृति के अध्ययन के क्रम में हमें सर्वप्रथम व्यष्टि और समष्टि के अंतर्संबंधों की अवधारणा और सृष्टि और परमेष्टि के पारस्परिक संबंध-बोध को अन्वेषित करने की आवश्यकता है। व्यष्टि ही समष्टि का मूलाधार है जो सृष्टि के सृजन की इकाई है और वही इकाई समष्टि-परमेष्टि में विलीन होती हुई एक सांस्कृतिक-अध्यात्मिक, ऐतिहासिक एवं भौगोलिक आकार में मिलकर राष्ट्रीय निधि बन जाती है।

इस तथ्य को समझने के लिए उत्तर-पूर्व के समाज की सांस्कृतिक विशेषताओं तथा संपूर्ण भारत की सामासिक संस्कृति से पूर्वोत्तर भारत की एकात्मकता को स्थापित करनेवाले तत्वों, विचारों और भावों का अध्ययन आवश्यक है। तभी वर्षों से औपनिवेशिक कूटनीति के तहत भ्रांत धारणा के शिकार रहे उत्तर-पूर्वी समाज के साथ न्याय किया जा सकेगा। अंग्रेजों ने उत्तर-पूर्व भारत को 'फूट डालो और शासन करो' की कूटनीति के तहत भौगोलिक रूप से भारत के अन्य राज्यों से अलग कर दिया था। इस कूटनीति के दूरगामी प्रभाव के फलस्वरूप उत्तर-पूर्व भारत शेष भारत से राजनैतिक और भौगोलिक रूप से अलग हो गया। भारत के अन्य क्षेत्रों में भी यह सामान्य धारणा घर कर गई कि उत्तर-पूर्व के निवासियों की सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य-चेतना और जीवन-शैली भिन्न है। लेकिन हमारे पौराणिक, धार्मिक, ऐतिहासिक ग्रंथ तथा पुरातात्विक साक्ष्य सिध्द करते हैं कि वैदिक काल से ही उत्तर-पूर्व भारत का अभिन्न अंग रहा है। व्यापक स्तर पर भारतवर्ष की ऐतिहासिकता, पौराणिकता, धर्म परायणता और मानवता की कहानी एक ऐसे सुगंधित पुष्प की तरह है जिसकी पंखुड़ियों के रूप में अफगानिस्तान, सुमात्रा, जावा, पाकिस्तान, बांग्लादेश, तिब्बत, बर्मा आदि सुवासित थे। यह सत्य भारत के प्राचीन वैदिक साहित्य से सिद्ध होता है।

''ॐ नम: परमात्मने, श्री पुराणपुरुषोत्तमस्य श्रीविष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याध श्री ब्राह्मणों द्वितपरार्द्धे श्री श्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमवंतरेषटाविंशतितमे कलयुगे प्रथमचरणे जम्बुद्विपे भारतवर्षे भरतखंडे आर्यावर्तांतेर्गतब्रह्मावतैकदेशे पुण्यप्रदेशे बौद्धावतारे वर्तमाने यथानामसंवत्सरे अमुकायने महामांगल्यप्रदे मासनाम उत्तमे॥''

विष्णुपुराण में भी भारत की सीमा का उल्लेख कुछ इस प्रकार मिलता है—

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम।
वर्ष तद्भारतं नाम भारती यत्र सन्तति:॥

अर्थात् समुद्र के उत्तर तथा हिमालय के दक्षिण का भू-भाग भारत कहलाता है और वहाँ के निवासी भारतीय कहलाते हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि एक ओर जहाँ भारतवर्ष के दक्षिणी राज्य धन-धान्य के साथ-साथ सारस्वत एवं सांस्कृतिक चेतना से परिपूर्ण हैं। वहीं, उत्तरी भाग धन-धान्य से परिपूर्ण होने के साथ प्राकृतिक संपदा से समृद्ध, अध्यात्म, वैदिक चिंतन तथा वेदांत के उद्गाता के रूप में प्रकट होता है। क्या उत्तर, क्या दक्षिण, क्या पूरब, क्या पश्चिम; सर्वत्र जो एक स्वर निनादित होता है; वह है भारतीय एकात्मवाद का स्वर। अत: भारतीय संदर्भ में किसी प्रकार के विलगाव के सिद्धांत को प्रतिपादित करना या स्वीकार करना औपनिवेशिक मानसिकता को बढ़ावा देना ही कहा जाएगा।

इसके साथ ही दुर्गा सप्तशती, विष्णु-पुराण, या कालिका पुराण जैसे महत्त्वपूर्ण प्राचीन धार्मिक साहित्य में भारत के जिस भौगोलिक विस्तार

का उल्लेख मिलता है, उस पर भी पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। भारतीय सभ्यता के उन सूत्रों को पुन: बुनने की आवश्यकता है जिन्हें पाश्चात्य सभ्यता ने स्वयं को स्थापित करने के उद्देश्य से बड़ी निर्दयता से तितर-बितर कर दिया था। सौभाग्य से एकता के ये तंतु विखंडित किए जाने के बावजूद भारतवासियों के जीवन में सूक्ष्म सांस्कृतिक तत्त्वों के रूप में जीवंत रहे हैं। भारत की भौगोलिक एकता और सभ्यता के संबंधों पर विचार करते हुए निर्मल वर्मा ने लिखा है, "इसीलिए देश की भौगोलिक अखंडता सनातन काल से एक सभ्यता के स्मृति-संकेतों से जुड़ी रही है। भारत के प्राकृतिक परिवेश को भारत के सभ्यता बोध से अलग नहीं किया जा सकता। यूरोप ने जहाँ इकोलॉजी के महत्त्व को आज समझा है, वह हमेशा से भारतीय संस्कृति का अविभाज्य अंग रहा रहा है।" अत: आवश्यकता इस बात की है कि विदेशी सभ्यता ने हमारा जो विध्वंसक विद्रूपण किया उससे हम छुटकारा पाने का प्रयास करें और अपनी भारतीय सभ्यता के आत्म-बोध का विस्तार करें जो अनेक देशी-विदेशी झंझावातों को सहते हुए, समस्त अवरोधों और ऐतिहासिक विसंगतियों के बावजूद भारतीयता को एक समग्र रूप और अर्थ देता रहा है।

उत्तर-पूर्व भारत में संस्कृतियों को जोड़नेवाले अंत:सूत्रों जैसे— उनके रीति-रिवाज, शादी-विवाह और अन्य धार्मिक-सांस्कृतिक आग्रहों पर विचार करने की आवश्यकता है। इस क्रम में सर्वप्रथम यदि हम पूर्वोत्तर राज्यों के प्रादुर्भाव को देखें तो असम हो या अरुणाचल प्रदेश, त्रिपुरा हो या फिर मणिपुर-पूर्वोत्तर के प्रत्येक राज्य से संबंधित तमाम महत्त्वपूर्ण पौराणिक आख्यान हैं। भारत के प्राचीन साहित्यिक, धार्मिक ग्रंथों में असम के दो नाम 'प्रागज्योतिषपुर' और 'कामरूप' मिलते हैं। 'इनसाइक्लोपीडिया ऑफ नॉर्थ ईस्ट इंडिया' में कर्नल वेदप्रकाश ने विष्णु-पुराण तथा कालिका पुराण में कामरूप से संबंधित आख्यान मिलने की चर्चा की है। अत: पुरातात्त्विक एवं साहित्यिक प्रमाणों से अनुमान होता है कि असम प्राचीन काल से ही भारत का अभिन्न हिस्सा रहा है। इस संदर्भ में बापचंद्र महंत ने लिखा है, "असम के प्रामाणिक इतिहास का प्रारंभ ई. चौथी शती के गुप्त सम्राट समुद्र गुप्त के प्रयाग अभिलेख में मिलता है। असम के कई स्थानों में तत्कालीन गुप्त काल के कुछ नमूने खंडहर के रूप में अब भी मौजूद हैं।"

किसी भी समाज के इतिहास, संस्कृति और अभीष्ट आकांक्षा को समझने के लिए उस समाज में प्रचलित लोककथाएँ और आख्यान महत्त्वपूर्ण स्रोत हो सकते हैं। उत्तर-पूर्व के समाज में प्रचलित विभिन्न धार्मिक और पौराणिक आख्यान भारतीय सांस्कृतिक एकता के महत्त्वपूर्ण सूत्र हैं। असम के नामकरण से संबंधित एक आख्यान के अनुसार, "असम में राजर्षि जनक को हल चलाते समय मनुष्य की खोपड़ी में 'नरक' नाम का एक पुत्र प्राप्त हुआ था। इस बालक को माता की जिज्ञासा हुई तो गंगा किनारे वसुमति ने दर्शन दिए। अपनी माता से जब नरक ने पिता के बारे में पूछा तो वसुमति ने उसका हाथ पकड़ कर गंगा में डुबकी लगा दी। जब वे पानी से बाहर निकले तो वे प्रागज्योतिषपुर (वर्तमान असम) में थे।"

मनुस्मृति में भी असम के प्राचीन नाम का उल्लेख मिलता है—

सरस्वती दृषइत्योदेवनधोर्यदन्तरम।
तं देवनिर्मितं देशम ब्रह्मवर्त प्रचक्षते॥

अग्रिम श्लोक में मनु कहते हैं कि उस देश में लोगों का आचार सदाचार कहलाता है—

तस्मिन्देशे य आचार: पारम्पर्यक्तभागत:।
वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते॥

मणिपुर के एक आख्यान के अनुसार, "मणिपुर के राजा चित्रवाहन की एक बेटी थी जिसका नाम चित्रांगदा था। चित्रवाहन ने चित्रांगदा को बेटे की तरह पाला। एक दिन उसने पांडव अर्जुन को देखा और वह उसके प्रति प्रेममोहित हो गई। इस बात से डरकर कि अर्जुन कहीं उसके पुरुषों जैसे तौर तरीके को पसंद न करे उसने देवताओं से यह प्रार्थना की कि वे उसे एक सुंदरी बना दें। देवताओं ने उसकी इच्छा को पूरा कर दिया। जब उसने सुना कि अर्जुन मणिपुर इसलिए आए हैं जिससे वह उस राजकुमारी से मिल पाएँ जो लड़कों की तरह लगती थी, उसने एक बार फिर से देवताओं का आवाहन किया कि वे उसे एक बार फिर से अपने पूर्व रूप में वापस ला दें। देवताओं ने उसकी यह इच्छा भी पूरी कर दी और अर्जुन से मिलने के लिए गई जो उसके शारीरिक सौष्ठव को देखकर तत्क्षण उसपर मुग्ध हो गए। इसके फलस्वरूप उन्होंने चित्रवाहन से चित्रांगदा का हाथ माँग लिया।"

अरुणाचल प्रदेश की लोककथाओं और पुराणों के अनुसार पिता की आज्ञा से माता की हत्या करने के कारण परशुराम को मातृ-हत्या का पाप लगा था। अरुणाचल प्रदेश से कुछ दूरी पर स्थित परशुराम कुंड में स्नान करके परशुराम माता की हत्या के पाप से मुक्त हुए थे। शिव की पत्नी सती के शरीर का एक अंश विष्णु के सुदर्शन चक्र से खंडित होकर त्रिपुरा में भी गिरा था। ये सभी धार्मिक स्थान भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं। भारतीय संस्कृति में मिथकों का अपना महत्त्व है। एक सामान्य भारतीय, प्राय: पौराणिक आख्यानों और मिथकों के सहारे अपनी संस्कृति का निर्माण करता है और उससे अपने जीवन का संबंध और सार्थकता खोजता है। इसीलिए जब वामपंथी इतिहासकार राहुल सांकृत्यायन 'भारतीय इतिहास की कसौटी परंपरा नहीं पुरातत्त्व है' जैसी घोषणा करते हैं तो कहीं-न-कहीं भारतीय संस्कृति की अवधारणा के साथ न्याय नहीं कर पाते।

भारत में मिथकों और परंपराओं के महत्त्व पर विचार करते हुए निर्मल वर्मा ने लिखा है, "हम संस्कृति को उन बिंबों, प्रतीकों और मिथकों से अलग करके नहीं देख सकते, जो हमारे जीवन के साथ अंतरंग रूप से जुड़े हैं। इनके माध्यम से न केवल हम अपने को पहचानते हैं। बल्कि ये वह आईना हैं, जिसके द्वारा हम बाहर की दुनिया को परखते हैं। ये बिंब और मिथक एक अदृश्य कसौटी हैं जिनसे हम धर्म और अधर्म, नैतिकता और अनैतिकता के बीच भेद करते हैं। संस्कृति मनुष्य की आत्मचेतना का प्रदर्शन नहीं, उस सामूहिक मनीषा की उत्पत्ति है, जो व्यक्ति को एक स्तर पर दूसरे व्यक्ति से और दूसरे स्तर पर विश्व से जोड़ती है"। उत्तर-पूर्व ही नहीं बल्कि संपूर्ण भारतीय संस्कृति एक समान मिथकों और परंपराओं की वाहक है। उत्तर-पूर्व की संस्कृति अभिन्न रूप से रामायण और महाभारत

से जुड़ी हुई है। वहाँ रचित साहित्य रामकथा और कृष्णकथा का आधारभूत उपजीव्य है। कहा जाता है कि रामायण काल में जब लक्ष्मण मूर्छित हुए तो हनुमान जी लंका से आकाश मार्ग से आकर 'तूरा' के धौलगिरी पर्वत को संजीवनी बूटी सहित लेकर लक्ष्मण के उपचारार्थ सुषैण वैद्य के सम्मुख उपस्थित हुए। कुंभकरण के पुत्र भीष्मक ने अपनी माता ज्वाला के साथ नीलांचल पर्वत की घाटी में आकर तपस्या की। आज भी गोरचुक में भीमा शंकर के नाम से एक प्रसिद्ध मंदिर है।

विभिन्न पुरातात्त्विक एवं साहित्यिक स्त्रोतों से यह ज्ञात होता है कि उत्तर-पूर्व के निवासी विभिन्न महत्त्वपूर्ण हिंदू देवी-देवताओं के अलावा गणेश, इंद्र, लक्ष्मी, सरस्वती, जैसे—देवी-देवताओं की भी आराधना करते रहे हैं। कालिका-पुराण तथा विष्णु-पुराण जैसे पौराणिक ग्रंथों में असम की तत्कालीन धार्मिक परिस्थितियों का उल्लेख मिलता है। बापचंद्र महंत ने कालिका-पुराण की विषय-वस्तु का विस्तृत विवरण देते हुए लिखा है, "यह ई. १०वीं/११वीं शती में लिखित कालिका-पुराण नामक संस्कृत ग्रंथ है। अब तक प्राप्त तथ्यों के आधार पर कहा जाए तो यही असम में रचित प्रथम ग्रंथ है। शाक्त-संप्रदाय के आधार-अनुष्ठानों का वर्णन इस ग्रंथ का मुख्य विषय है। स्थानीय शक्ति पूजकों की विधि-व्यवस्थाओं को तथा शक्ति के स्थानीय विविध रूपों को भारतीय शाक्त सम्प्रदायों से समेकित करना ग्रंथ का मुख्य उद्देश्य है।"

भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों में मनाए जानेवाले उत्सवों के मूल में प्रकृति के प्रति आस्था का महत्त्वपूर्ण भाव देखने को मिलता है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति-देवता सूर्य की देवशक्ति के रूप में उपासना भारत के प्रत्येक राज्य में प्रचलित है। मेघालय में 'सल्जोंग' (सूर्य देवता) की आराधना को समर्पित, पूरे उल्लास के साथ मनाया जानेवाला त्योहार 'वानशाला', अरुणाचल प्रदेश के त्योहार 'मोपिन' और 'सोलुंग', मेघालय में खासियों के पर्व 'शाद मिनसी' के मूल में, ईश्वर की पूजा और प्रकृति-पूजा ही है। इन त्योहारों के अवसर पर पशुओं की बलि चढ़ाने की प्रथा काफी प्राचीन है। फसल की अच्छी पैदावार की प्रार्थना इन त्योहारों की केंद्रीय प्रेरणा है। इस संदर्भ में यह ध्यान देने की बात है कि दक्षिण भारत के पोंगल तथा उत्तर भारत के त्योहार मकर-सक्रांति का संबंध फसलों की नई पैदावार से है। पालतू पशुओं की बलि देने की प्रथा बिहार में काफी प्रचलित है। उत्तर-पूर्व भारत की सांस्कृतिक विशेषताओं पर अपने एक लेख में विस्तारपूर्वक बताते हुए पत्रकार प्रांजल धर ने अरुणाचल प्रदेश की उत्सव संस्कृति के विषय में लिखा है, "यहाँ फरवरी के महीने में मनाए जानेवाले 'तमनाडु' पर्व में 'मिथुन' नाम के जानवर की बलि चढ़ाई जाती है। 'तमनाडु' में पुजारी अच्छी पैदावार के लिए पूजा करते हैं"।

उत्तर-पूर्व भारत का सांस्कृतिक परिदृश्य अपनी सांस्कृतिक संबद्धता, विविधता और जीवंतता के साथ-साथ भारतीय लोकचित्तवृत्ति का प्रतिबिंब है। चाहे मणिपुरी और सत्रीय जैसा शास्त्रीय नृत्य हो; साना लामोक, साइकुती जई, लाई हारओबा त्योहार के गीतरूप में क्षेत्रीय संगीत हो या भाओना आदि परंपरागत नाटय शैलियाँ, सभी एक ही सांस्कृतिक एकात्मता के अंत:सूत्र में आबद्ध पाई जाती हैं। मणिपुरी नृत्य का उद्भव प्राचीन समय से माना जा सकता है, जो लिपिबद्ध किए गए इतिहास से भी पूर्ववर्ती है। मणिपुर में नृत्य धार्मिक और परंपरागत उत्सवों के साथ जुड़ा हुआ है। मणिपुर में नृत्य कला का विकास और उद्भव मूलत: देवमन्दिरों में हुआ है। यहाँ शिव, पार्वती के नृत्य तथा अन्य देवी-देवताओं, जिन्होंने सृष्टि की रचना की थी, की दंतकथाओं के संदर्भ मिलते हैं। वैष्णव काल के आगमन के साथ राधा-कृष्ण के जीवन की घटनाओं को इसके माध्यम से प्रस्तुत किया जाने लगा। मणिपुरी गायन की शास्त्रीय शैली को 'नट' कहा जाता है। जयदेव द्वारा रचित 'गीत गोविंद' की अष्टपदियाँ इस गायन में विशेष प्रचलित हैं जो वस्तुत: प्रकृति के प्रति भारतीय दृष्टिकोण की परिचायक कही जा सकती हैं।

पंद्रहवीं शताब्दी ई. में असम के महान वैष्णव संत श्रीमंत शंकरदेव द्वारा सत्रीय नृत्य को वैष्णव धर्म के प्रचार हेतु एक महत्त्वपूर्ण माध्यम के रूप में प्रचलन में लाया गया। परंपरागत नाट्य-शैली भाओना, असम के अंकिया नाट का विस्तार है। इस शैली में असम, बंगाल, उड़ीसा, वृंदावन-मथुरा आदि की सांस्कृतिक झलक मिलती है। इसका सूत्रधार दो भाषाओं में अपने को प्रकट करता है—पहले संस्कृत, बाद में ब्रजाबली अथवा असमिया में; नृत्य-संगीत की इस समृद्ध और सतत परंपरा में भाषाई एकता के सूत्र देखे जा सकते हैं। यह सांस्कृतिक आवाजाही एकता के सूत्रों की पुष्टि करती है।

उत्तर-पूर्वी राज्यों में दो सौ बीस से अधिक नस्लीय-समूहों के लोग निवास करते हैं। जैसाकि हम जानते हैं कि कुल देवता और ग्राम देवता का अस्तित्व भारतीय संस्कृति का महत्त्वपूर्ण अभिप्राय रहा है। उत्तर-पूर्वी समाज की जनजातियों की अपनी विशिष्ट जीवन-शैली और परंपराएँ हैं जो एक तरह से भारतीय संस्कृति का ही विस्तार हैं। सभी जातियाँ-जनजातियाँ प्राय: किसी-न-किसी ग्राम-देवता या लोक देवता की उपासक हैं। उदाहरण के लिए त्रिपुरा की जमातिया, बराक गुफा की प्रमुख जनजातियों में एक है। इसके द्वारा लगभग चार सौ सालों से गौरिया नामक लोकदेवता की पूजा की जा रही है। हर साल चौदह से इक्कीस अप्रैल की अवधि में की जानेवाली इस साप्ताहिक पूजा की पद्धति भारत की प्राचीन और वर्तमान पारंपरिक पूजा पद्धतियों से पूरा सादृश्य रखती है।

उत्तर-पूर्व के समाज में अंतर्निहित भारतीय सांस्कृतिक तत्वों पर विचार-विमर्श के क्रम में भाषा एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। भाषा जीवन और संस्कृति का मूल आधार है। निर्मल वर्मा ने भाषा और संस्कृति के सह-संबंध पर विचार करते हुए लिखा है, "भाषा सम्प्रेषण का माध्यम होने के साथ-साथ संस्कृति की भी वाहक होती है। किसी देश की संस्कृति, ऐतिहासिक झंझावातों द्वारा क्षत-विक्षत भले ही हो जाए, उसका सत्य और सातत्य उसकी भाषा में बचा रहता है"। यह एक रोचक तथ्य है कि जब कई देशों में सिर्फ एक भाषा बोली जा रही है, तब भारत जैसे विशाल देश में चार भाषा परिवारों की भाषाएँ बोली जाती हैं—ऑष्ट्रिक भाषा परिवार, तिब्बत-चीनी भाषा परिवार, द्रविड़ भाषा परिवार और भारोपीय भाषा परिवार।

यहाँ ध्यान देनेवाली बात यह है कि उत्तर-पूर्व भारत में बोली

जानेवाली खासी भाषा हो या उड़ीसा, बिहार, झारखंड प्रांत के छोटा नागपुर क्षेत्र में बोली जानेवाली मुंडा शाखा की भाषाएँ, या फिर मध्य प्रदेश की 'कोरकू' भाषा, ये सभी भाषाएँ एक ही ऑष्ट्रिक भाषा परिवार से हैं। इसी प्रकार जम्मू-कश्मीर और हिमाचल प्रदेश में बोली जानेवाली लाहुली, कन्नौरी भाषाएँ हों अथवा उत्तर-पूर्व की बोडो, गारो भाषाएँ; ये भाषाएँ एक ही तिब्बती-चीनी भाषा परिवार की भाषाएँ हैं, जो गहरे स्तर पर उत्तर-पूर्व भारत और शेष भारत के बीच भाषिक एकात्मता को स्थापित करती हैं। भाषिक एकात्मता स्थापित करने के क्रम में यह जानना भी महत्त्वपूर्ण है कि असमिया भाषा तो भारोपीय भाषा परिवार की 'भारतीय आर्य उपशाखा' वर्ग की भाषा है ही, इसकी लिपि भी देवनागरी लिपि का ही एक रूप है जो बाँग्ला से विकसित है। असमिया भाषा का प्राचीनतम साहित्यिक रूप हमें चर्यापदों में मिलता है। इस प्रकार भाषिक और सामाजिक इकाइयों के मूल में विद्यमान एकात्मता के कारण समूचे भारत को एक भाषिक क्षेत्र (लिंग्विस्टिक एरिया) के अंतर्गत भाषा वैज्ञानिकों ने रखा है।

उत्तर-पूर्व भारत की भूमि मध्यकालीन भक्ति-आंदोलन के प्रभाव से भी अछूती नहीं रही है। हम जानते हैं कि भक्ति-आंदोलन एक अखिल भारतीय सांस्कृतिक आंदोलन के रूप में भी जाना जाता है। एक ओर, उत्तर भारत में कबीर, तुलसी, सूरदास और मीरा जैसे साधकों ने भक्तिभावना का प्रसार किया। वहीं, असम की धरती पर जनमे श्रीमंत शंकरदेव और माधवदेव ने अपनी नई भक्ति पद्धति से असम ही नहीं वरन् संपूर्ण पूर्वोत्तर भारत में अपने नव-वैष्णव धर्म आंदोलन का प्रचार किया। "उनका दर्शन विशेष रूप से भागवत पुराण पर आधारित है। शंकरदेव ने भी अपने पदों में भागवत अनुरूप अद्वैत मत का प्रतिपादन किया है"।

उत्तर-पूर्व भारत की भूमि मध्यकालीन भक्ति-आंदोलन के प्रभाव से भी अछूती नहीं रही है। हम जानते हैं कि भक्ति-आंदोलन एक अखिल भारतीय सांस्कृतिक आंदोलन के रूप में भी जाना जाता है। एक ओर, उत्तर भारत में कबीर, तुलसी, सूरदास और मीरा जैसे साधकों ने भक्तिभावना का प्रसार किया। वहीं, असम की धरती पर जनमे श्रीमंत शंकरदेव और माधवदेव ने अपनी नई भक्ति पद्धति से असम ही नहीं वरन् संपूर्ण पूर्वोत्तर भारत में अपने नव-वैष्णव धर्म आंदोलन का प्रचार किया। "उनका दर्शन विशेष रूप से भागवत पुराण पर आधारित है। शंकरदेव ने भी अपने पदों में भागवत अनुरूप अद्वैत मत का प्रतिपादन किया है"।

उत्तर-पूर्व भारत के समाज में सांस्कृतिक एकात्मता को रेखांकित करनेवाले शंकरदेव ने अपनी साहित्यिक रचना के लिए 'ब्रजाबली' अथवा 'बृजबुलि' भाषा का प्रयोग किया है। वह वस्तुत: असमी भाषा और ब्रज भाषा के सम्मिलन से बननेवाली सम्मिश्र भाषा है। "हिंदी के सधुक्कड़ी रूप, बांग्ला की जननी, 'ब्रजबुली' और 'अंकियानाटों' की भाषा में बड़ा साम्य है। यहाँ असमिया भाषा हिंदी के बहुत निकट है। कुछ उदाहरण देखिए—

"१. सहस्र वयने गुण गावत भिन्न-भिन्न, वचने करते बखाना,
२. मोहन कनक वेणु उरि धरे हाते"।

उत्तर-पूर्व समाज का शेष भारत के साथ कैसा नाभिनाल संबंध है, इसका प्रमाण 'वृंदावनी चीर' भी है जिसका उल्लेख शंकरदेव के साहित्य में है। आज भी इसका प्रयोग सत्र-नामघरों में किया जाता है। शंकर देव ने जिस सांस्कृतिक एकता को प्रतिष्ठित किया है, उसमें बरगीत, भाओना, अंकिया नाट के साथ-साथ सत्रों और नामघरों की विशेष भूमिका रही है। भारत की सांस्कृतिक चेतना बरगीतों में प्रकट होती है। 'भाओना' और 'अंकिया नाट' भारतवर्ष की जातीय संस्कृति को बड़ी सजीवता से प्रस्तुत करते हैं। उल्लेखनीय है कि शंकरदेव ने दो बार संपूर्ण भारत की पैदल यात्रा की। उन्होंने भारत भूमि के अधिकांश धर्मस्थलों की तीर्थयात्रा में १२ वर्ष का समय लगाया। शंकरदेव के ऐतिहासिक योगदान पर प्रकाश डालते हुए साहित्यकार प्रभाकर माचवे ने लिखा है, "उन्होंने उस समय हिंदुओं की और सीमांत की आदिवासी जाति-उपजातियों की आध्यात्मिक भावनाओं को एकसूत्र में गूँथा। यह ऐतिहासिक नवजागरण का कार्य था। उन्होंने एक श्रेष्ठ कवि के नाते उदार और व्यापक मानवतावादी दृष्टि अपनाई"।

इसी क्रम में यह देखना महत्त्वपूर्ण है कि उत्तर-पूर्व समाज मे स्थापित 'सत्र' केवल धार्मिक गतिविधियों के ही केंद्र नहीं थे, अपितु संगीत, कविता, नृत्य, नाट्य एवं चित्रकला का विकास और अभिव्यक्ति करनेवाले विशेष स्थल थे। इसीप्रकार 'नामघर' केवल प्रार्थना घर ही नहीं थे अपितु यहाँ समाज के विभिन्न समुदाय के लोग एकत्र होते थे और लोकतांत्रिक प्रक्रिया द्वारा एक निष्कर्ष/निर्णय पर पहुँचते थे। इस प्रकार उत्तर-पूर्व भारत में प्रचलित 'सत्र' और 'नामघर' की संकल्पना वस्तुत: प्राचीन भारत में पाणिनी और बुद्ध के काल में फैले शाक्य, लिच्छिवी, क्षुद्रक और मालव आदि गणराज्यों की प्राचीन परंपरा और विरासत का ही अधुनातन विस्तार है।

भक्ति-आंदोलन और नवजागरण जैसी महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं के प्रभाव से उत्तर-पूर्व की धरती अछूती नहीं रही। अंग्रेजी सत्ता और साम्राज्यवाद के विरुद्ध भी वहाँ के निवासियों की भूमिका उल्लेखनीय रही है। यह दुखद तथ्य है कि उन महानायकों का उल्लेख भारतीय इतिहास में न के बराबर है। परंतु पूर्वोत्तर का पूरा लोक साहित्य उन महानायकों की शौर्यगाथाओं से भरा पड़ा है। तिरोत सिंह, नंगबाह, पा तागेम संगमा, कुशल कुंवर, टिकेंद्रजीत सिंह, रानी गाइदिन्ल्यू और रानी रुप्लियानी जैसे वीरों ने अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए अंग्रेजी हुकूमत से लोहा लिया। इस संदर्भ का हवाला देते हुए रमणिका गुप्ता ने लिखा है, "अंग्रेजों से सबसे पहला युद्ध १७७४ में शुरू हुआ जब मेजर हैनिकर ने जयंतिया पर हमला किया। १८२६ तक ऐसे ही चलता रहा। जब १८२४ में बर्मा ने कछार पर आक्रमण किया तब अंग्रेजों को जयंतिया राज्य का महत्त्व समझ में आया। अंग्रेजों ने बर्मा की सेना के विरुद्ध राजा से अपनी सेना की टुकड़ी भेजने की माँग की, पर वहाँ के

राजा ऐसा कोई भी समझौता नहीं करना चाहते थे जिससे उनकी स्वतंत्रता को आघात पहुँचे। उन्होंने अंग्रेजों की मदद के लिए अपनी सेना नहीं भेजी"। "मिजोरम की रानी रुप्लियानी ने भी अंग्रेजों को अपने क्षेत्र में न घुसने देने की कसम खाई। अंग्रेजों द्वारा मिजो जनों को जबरन बेगारी कराने ले जाना उन्हें स्वीकार न था। रानी ने इसका सख्त प्रतिकार किया जिसके फलस्वरूप उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। लेकिन इसके साथ ही चारों ओर से अंग्रेजों की शासन प्रणाली व ईसाइयत के कठमुल्लेपन को चुनौतियाँ मिलने लगीं।" प्रतिरोध के ऐसे अनेक उदाहरणों से उत्तर-पूर्व भारत का इतिहास जगमगाता है। इन वीरों ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद को समाप्त करने में अपनी जान की बाजी लगा दी। उत्तर-पूर्व की संस्कृति और वहाँ के निवासियों के सामाजिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक जीवन के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि कला, वास्तुकला, सम्प्रदायों के विकास की दृष्टि से भी उत्तर-पूर्व भारत और शेष भारतीय राज्यों के बीच एकता और अनवरत आदान-प्रदान के संबधसूत्र प्रकट होते हैं। विभिन्न कलारूपों, धार्मिक विषयों, सामाजिक संबंधों (रोटी-बेटी संबंधों) और व्यापारिक वस्तुओं का पारस्परिक आदान-प्रदान भारत के अन्य राज्यों और उत्तर-पूर्व के राज्यों में निरंतर हुआ। असम और त्रिपुरा के मंदिर भारतीय धार्मिक कला का परिचायक कहे जा सकते हैं। भारत की सांस्कृतिक एकता, अखंडता, सार्वभौमिकता और निरंतरता के संदर्भ में पंडित नेहरू के इस कथन से सहमत हुआ जा सकता है, "मैंने तुम्हें बताया है कि सारे इतिहास में संस्कृति के लिहाज से भारत एक रहा है—राजनैतिक लिहाज से चाहे इस देश में कितनी ही आपस में लड़नेवाली रियासतें क्यों न रही हों। जब कोई भी महापुरुष पैदा हुआ या बड़ा आंदोलन उठा, वह राजनीतिक सीमाओं को लाँघकर सारे देश में फैल गया।"

निष्कर्ष यह है कि उत्तर-पूर्व समाज का शेष भारत के साथ यह अटूट जुड़ाव न केवल भाषिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक स्तर पर दिखलाई पड़ता है, अपितु जनजीवन के दैनंदिन क्रिया-व्यापार में भी अभिव्यंजित होता है। अब तक उत्तर-पूर्व भारत की संस्कृति और सभ्यता को अलगाववाद की दृष्टि से देखा गया है। समस्या यह है कि भारतीय इतिहासकारों का अध्ययन औपनिवेशिक दृष्टि के पुरोधा बैरियर एल्विन जैसे लोगों से प्रभावित रहा है। इसके फलस्वरूप वर्षों से उत्तर-पूर्व का समाज नस्लीय हिंसा, उग्रवाद, हिंदूकरण की आरोपित सैद्धांतिकियों जैसी राजनैतिक समस्याओं को झेलने के लिए अभिशप्त रहा है। इस ऐतिहासिक सम्मिलन और आत्मसातीकरण में सबसे बड़ी बाधा औपपनिवेशिक नीतियों द्वारा अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए पोषित 'पृथक्कीकरण की संकल्पना' रही है। जबकि सच्चाई यह है कि उत्तर-पूर्व के समाज की सांस्कृतिक पहचान भारतवर्ष की सांस्कृतिक अस्मिता का ही उज्ज्वल पक्ष है।

३५८, सेक्टर-डी,
सैनिक कॉलोनी, जम्मू-१८००११
(जम्मू-कश्मीर)
दूरभाष : ८८००८८६८४७

चढ़ावा

लघुकथा

• मथुरा कलौनी

मेरे गाँव के ऊपर उपत्यका में लहलहाता वन हुआ करता था। नीचे समतल पर जमीन से पानी फूटता था और उसी पर एक धारा बना हुआ था। धारे के ऊपर एक पतली नहर बना दी गई थी। नहर का पानी एक छोटे जलाशय में एकत्रित होता था जहाँ गाँव के पालतू पशु और जंगल के जानवर पानी पीते थे। धारे पर सुबह खूब चहल-पहल रहा करती थी।

चार साल पहले जब यहाँ आया था तो देखा कि पलायन के कारण मेरा गाँव उजड़ चुका था। वन के पेड़ कट चुके थे। कोई रोक-टोक नहीं थी। आस-पास के गाँवों से लोग पेड़ काटकर ले जाते थे बस कुछ ही पेड़ बचे थे। धारे में पानी की धार बहुत पतली हो गई थी। धारा सूखने की कगार पर था।

पास का गाँव बड़ा था। अब भी कुछ परिवार वहाँ रहते थे। धारे का पानी कम होने के उन्हें परेशानी होने लगी थी। गाँव का प्रधान लोगों से मिन्नतें करता रहता था कि जंगल न काटो, धारा सूख जाएगा। पर उसकी कौन सुनता। वैसे भी पेड़ काटने लोग दूसरे गाँव से आते थे। जंगलवाद का एक चौकीदार था तो सही पर वह भी बस होने को ही था। मैं खिन्न मन से शहर लौट आया था। आज फिर इस ओर आया हूँ तो धारा देखने का मोह संवरण न कर पाया। धड़कते दिल से धारे पर आया तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। चारों ओर हरियाली। वन घना हो चला था। धारे में पहले की ही तरह खूब पानी था। यह उलट-फेर हुआ कैसे? इसके पीछे की कहानी इस तरह है। जब गाँव के प्रधान की कोई सुनने को तैयार नहीं था तो उसने एलान कर दिया। सुनो गाँव वालो, मुझे इस जंगल की और इस धारे की दुर्दशा देखी नहीं जाती है। अत: मैं इस जंगल को शिवाजी को चढ़ा देता हूँ। यह धारा आज से शिवधारा कहलाएगा। अब जो कोई इस जंगल के पेड़ काटने का दुस्साहस करेगा वह शिवजी का शाप भोगने के लिए तैयार रहे। उस दिन से आज तक किसी ने शिवजी को अप्रसन्न करने का साहस नहीं किया है।

ए-४०२, फ्लोरियाना एस्टेट, कोरमंगला ब्लॉक-३
५३ सरजापुर रोड, बेंगलुरु-५६००३४
दूरभाष : ९९००५६६४८०

काकी

• बसंत कुमार

शहरी जिंदगी में बेशक हम काकी शब्द की आत्मीयता या अपनापन न समझते हों, क्योंकि इसका स्थान चाची या आंटी ने ले लिया है, पर काकी शब्द के उद्‌बोधन से जो दिल में भावना उठती है, वह और शब्दों में कहा। सन् १९६५-६६ की बात है, जो मुझे आज भी ऐसे याद है, मानो यह कल का वाकया हो। भारत-पाकिस्तान का युद्ध समाप्त हो गया था और ताशकंद समझौते के दौरान प्रिय प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की मृत्यु हो चुकी थी। पर एक चीज जो शहरों में रहने वाले सभी भारतीयों को खलती थी, वह थी अमेरिकी गेहूँ, जो राशन की दुकानों पर मिलता था और उसका आटा गूँथने के पश्चात् ऐसा खिंचता था, जैसे गोद में लिया हुआ आटा। पिताजी उस समय लखनऊ में पोस्टेड थे और गरमियों की छुट्टियों में हमारे स्कूल बंद हो गए थे और हमको गरमियों की छुट्टियों में घर (जौनपुर) जाना था, आज की तरह से मेल और एक्सप्रेस गाड़ियाँ नहीं थीं कि चार घंटे में लखनऊ से जौनपुर पहुँच जाते, तब तो एक ही ट्रेन थी, शायद उसका नाम था 'बरेली पैसेंजर' और रात भर का सफर था, इसलिए अम्माँ और बाबू एक हफ्ते से सामान की पैकिंग में लगे होते थे। पर गाँव जाने की हमको जो सबसे अधिक खुशी होती थी, वह थी गाँव में जाँत (देसी चक्की) से पिसी हुई देसी गेहूँ के आटे की काकी के हाथ की बनी हुई रोटी।

वैसे तो काकी अम्माँ से काफी छोटी थीं, पर उनका रिश्ता देवरानी-जेठानी से अधिक सास-बहू का अधिक लगता था, जब तक हम गाँव में रहते, काकी के हाथ के देसी व्यंजन और रात को हम भाइयों को काकी के मुँह से राजा-रानी की कहानियाँ आज के युग के ३-डी फिल्मों से ज्यादा मनमोहक लगती थी, देखते-देखते महीना समाप्त हो जाता और हमारे स्कूल खुल जाते, तब हमारा लखनऊ वापस जाने का कार्यक्रम बन जाता। पर एक चीज का मन में उत्साह रहता कि अगले वर्ष फिर आएँगे और काकी के साथ फिर आनंद से रहेंगे।

अगले वर्ष २० मई का रिजल्ट आ गया और स्कूल एक जुलाई तक बंद हो गए, हम काकी से मिलने की खुशी में घर (जौनपुर) पहुँचे, पर हमारी खुशी ढेर हो गई, जब पता लगा कि काकी तो मायके गई हैं, पर दूसरे दिन दादाजी के साथ मैं काकी के मायके लेने पहुँच गया। मुझे देखते ही काकी और काकी की बेटी प्रेमा ऐसी खुश हुईं, मानो कोई अनमोल

भारत सरकार में उप सचिव पद से स्वेच्छा से सेवा अवकाश के पश्चात् राजनीति के साथ-साथ लेखन में जुटे। उनकी पुस्तकें 'राष्ट्रवादी कर्मयोगी', 'हिंदुत्व एक जीवन शैली', 'युवाओं के प्रेरणास्रोत स्वामी विवेकानंद', 'भारत में उद्यमिता एवं एकात्म मानववाद', 'भाजपा का संकल्प' काफी लोकप्रिय रही हैं।

चीज मिल गई हो। उसने तो पूरे गाँवों में दौड़-दौड़कर बताया कि मेरे लखनऊ वाले भैया आए हैं। काकी ने खाना निकालते समय पूछा—बेटा, चावल थोड़ा या सैगर (भोजपुरी शब्द, जिनका अर्थ होता है—कम या ज्यादा), मतलब मुझे समझ में आया नहीं, मैंने कहा—सैगर, तो काकी ने पूरी थाली भर दी, उस जमाने में थाली में खाना छोड़ने को बुरा मानते थे, अत: पूरा खाना खत्म करना एक तरह सजा थी। काकी ने कहा, भैया रहने दो मैं इस थाली में खा लूँगी, काकी की वह ममता अभी भी पाँच दशक बीत जाने पर भी नहीं भूलती।

मैंने कक्षा चार पास की और कक्षा में प्रथम आया। घर में फैसला हुआ कि अब मैं गाँव में रहकर पढ़ूगा, मतलब दादा और काकी के पास। क्लास के सारे दोस्त छूट गए, अम्माँ-बाबूजी और तीनों भाई छूट रहे थे, पर एक खुशी जो मन को प्रफुल्लित कर रही थी, वह थी काकी। गाँव के स्कूल में दाखिला हो गया, पर काकी ने पूरे एक वर्ष महसूस नहीं होने दिया कि मेरे अम्माँ-बाबूजी हमसे दूर हैं। कभी भैंस भाग जाती तो मैं और काकी मीलों जाकर पकड़ लाते, पर कभी कोई गुस्सा नहीं। कभी काकी को मैं कुछ कह देता तो काकी दो आँसू बहा लेतीं, लेकिन खाना खाने के पश्चात् मुझे कहानी सुनाना न भूलती।

समय बीता, काका की नौकरी लग गई, पोस्टिंग गोरखपुर में हो गई, छुट्टियों में आए और अम्माँ-दादा को बताया कि अब छोटकी यानी काकी को साथ ले जाऊँगा। शायद काका का यह फैसला मेरे जीवन के सबसे कष्टदायी फैसलों में रहा हो। क्योंकि काका को अब नौकरी मिल गई, जिस भाई को पिता तुल्य मानते थे, अब बराबरी का पटीदार मानने लगे, शायद इसके पीछे गाँव के दो-चार लगाई-बुझाई वाले थे, जो यह नहीं चाहते थे कि यह परिवार एक रहे और ये अलग हो जाएँ तो अच्छा हो। काका सपरिवार घर आए, पड़ोसियों की मेहनत रंग लाई, दोनों परिवार

अलग हो गए। उस दिन सबसे अधिक दुख मुझे था कि काकी अब काकी नहीं, हिस्सेदार व पटीदार हो गई। इधर न जाने काकी क्यों बीमार रहने लगीं और उनको गठिया की शिकायत हो गई। कुछ वर्षों बाद उनका उठना-बैठना कम हो गया और वे अपनी आखिरी के तीस वर्ष दरवाजे पर मचिया पर बैठी रहतीं। पर जब भी मैं दिल्ली से घर जाता तो उनकी आँखें मेरे दरवाजे की ओर देखती रहती थीं और मैं जब जाकर उनसे मिल लेता तो उन्हें तसल्ली मिलती। चलते-चलाते अगर कुछ पैसे दे देता तो ऐसे छुपातीं कि कोई देख न ले, जहाँ मड़ई में बीड़ी छिपाकर रखती और जब हम दोनों बीड़ी सुलगाकर पी लेते तो बहुत तसल्ली मिलती।

पर जैसा सामूहिक परिवारों में होता है कि अलग होने के बाद जमीन-जायदाद के बँटवारे पर भाई-भाई दुश्मन हो जाते हैं, यही हमारे यहाँ हुआ। दुश्मनी इतनी हो गई कि काकी का आशीर्वाद लेना तक दूभर हो गया। इस बीच काका रिटायर हो गए, दोनों परिवारों में रिश्ते सामान्य हो गए, आने-जाने पर काकी से मिलना सबकुछ अच्छा लगने लगा, फिर काकी से बार-बार मिलने की जिज्ञासा बढ़ने लगी। पर होनी को कौन टाल सकता था, काका एकाएक दिल की बीमारी से चल बसे। काकी की जिद के कारण जब तक मैं दिल्ली से नहीं पहुँचा, काका का अंतिम संस्कार नहीं हुआ। पता नहीं मुझे क्यों लगा, काकी अब चंद दिनों की मेहमान हैं। मैं दिल्ली आ गया और व्यस्तताओं के कारण तीन-चार माह घर नहीं जा सका। बाद में पता चला कि काका के गम में काकी भी स्वर्ग सिधार गईं। पर विडंबना देखिए, जिस काकी की जिद के कारण काका के देहावसान के पश्चात् उनका मृत शरीर अंतिम संस्कार के लिए तब तक नहीं उठा, जब तक कि मैं दिल्ली से १६ घंटे का सफर तय करके नहीं पहुँचा, पर काकी के मरते ही उनके बच्चों ने उनके मरने की खबर देना जरूरी नहीं समझा और न उनके श्राद्ध (तेरहवीं) में बुलाया गया, क्योंकि काकी के बच्चे अब हमारे भाई नहीं, पटीदार हैं। अब हमारे अपने नहीं, प्रतिद्वंद्वी हैं। अब ऐसा लगता है कि अमीर बनने की प्रतिद्वंद्विता ने सब छीन लिया है।

अब घर जाता हूँ, बहुत लोग मिलने आते हैं, लेकिन उसकी आँखों में झाँकने भर से आसानी से भाँप लेता हूँ कि इनमें से अधिकांश अपने स्वार्थ साधने के लिए आते हैं। मेरी आँखें उस कमरे की ओर अभी भी झाँकती रहती हैं कि शायद काकी मचिया पर बैठे-बैठे आवाज दे दें, पर जानता हूँ कि अब ऐसा नहीं होने वाला। यह सत्य है कि काका के जीते जी अम्माँ-बाबूजी से डाढ़-मेंड़ के बँटवारे को लेकर कहा-सुनी होती थी, पर कभी भी दुख-सुख में हाथ बँटाना, बोल-चाल बंद नहीं होता था, पर इस सबके बीच में काकी का मौन व्रत अभी भी मन को कचोटता है, शायद यही नया समाज है, जिसका हम निर्माण कर रहे हैं, जिसमें सैकड़ों काकियाँ दफन होंगी। और हम जैसे लोग बचपन की सुनहरी यादों को मन मसोसकर याद कर रहे होंगे। विकाश के नाम पर सामूहिक परिवारों का चलन समाप्त हो गया है और न्यूक्लियर परिवारों ने सारे नाते-रिश्ते समाप्त कर दिए हैं। अब तो सत्तर के दशक में परिवार कल्याण व नियोजन का नारा चरितार्थ हो गया है

"हम दो हमारे दो।"

साअ

एल-१४, सरिता विहार
नई दिल्ली-११००७६
दूरभाष : ९७१८३३५६८३

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक **साहित्य अमृत** के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 600120110001052 IFSC-BKID 0006001 में **साहित्य अमृत** के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर **साहित्य अमृत** का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. 011-23257555, 8448612269 अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

फणीश्वरनाथ 'रेणु' का कथेतर साहित्य और उसकी व्यापकता

• विजय कुमार मिश्र

हिंदी कथा साहित्य में आंचलिकता की मजबूत जमीन तैयार करने वाले कालजयी लेखक फणीश्वरनाथ 'रेणु' का योगदान अप्रतिम है। जीवन के सौंदर्य को समग्रता में जीने वाले रचनाकार 'रेणु' ने अपने लेखन में व्यक्ति और व्यवस्था के अंतर्विरोधों को प्रस्तुत किया है। उन्होंने कोसी की माटी और उसके परिवेश का ऐसा वितान खड़ा किया कि वह अंचल 'रेणु' के अंचल के नाम से विख्यात हो गया।

'रेणु' का संपूर्ण साहित्य तत्कालीन जीवन के संघर्ष, दु:ख और द्वंद्व के प्रकटीकरण के साथ ही गहन अनुभूतियों से संबद्ध है। उनके साहित्य में कोसी अंचल के समग्र परिदृश्य की, उससे जुड़ी पीड़ा की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। उन्होंने गरीबी, महामारी, युद्ध, शोषण से जर्जर और दम तोड़ते मनुष्य को अपनी आँखों से देखा था। इस सबका उनके मानस पर व्यापक प्रभाव था। कोसी क्षेत्र की पीड़ाजनित संवेदना को 'रेणु' ने अपनी रचना का मूल आधार बनाया। वे तत्कालीन सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया के न केवल साक्षी थे बल्कि उसमें अपना रचनात्मक सहयोग भी दे रहे थे। वे राजनीति से सीधे-सीधे जुड़े हुए थे और पूरी तरह से साहित्य में आने से पहले किसान-मजदूरों के बीच बेहद सक्रिय थे। नेपाल क्रांति, सोशलिस्ट आंदोलन से 'रेणु' का सीधा संबंध था। सोशलिस्ट पार्टी में हुए बिखराव के बाद वे धीरे-धीरे साहित्य की ओर मुड़ गए।

सत्तर के दशक में जब जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में बिहार में आंदोलन हुआ तो 'रेणु' फिर से राजनीतिक रूप से सक्रिय हो गए। बिहार आंदोलन में अपनी सक्रिय सहभागिता के संबंध उन्होंने कहा, "इस बार जब जनक्रांति हुई तो मेरी आत्मा पुकार उठी। सिर्फ कलम से नहीं अपनी काया से भी कुछ लिखना जरूरी है। अपने ही कलेजे के रक्त में अपनी उँगली डुबाकर दीवार पर 'क्रांति अमर हो' लिख पाऊँ, यही कामना मन में लहरें लेने लगीं। स्पष्ट है कि मैं आंदोलन में शरीक नहीं हुआ, बल्कि आंदोलन मेरे अंदर समा गया।"

'मैला आँचल', 'परती : परिकथा', 'दीर्घतपा', 'जुलूस', 'कितने चौराहे' सहित उनकी अनेक रचनाएँ राजनीतिक समस्याओं से संबद्ध हैं और ये रचनाएँ उनके राजनीतिक विचारों का ही प्रतिफलन जान पड़ती हैं। 'रेणु' ने अपनी प्रतिबद्धता को स्पष्ट करते हुए स्वयं ही कहा था—"मैं प्रतिबद्धता का केवल एक अर्थ समझता हूँ···आदमी के प्रति प्रतिबद्धता, बाकी सब बकवास है।"

साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं की संगति के कारण बचपन से ही 'रेणु' की रचनाशीलता विकसित होने लगी थी। १९३६ में प्रेमचंद की मृत्यु पर अपने भावोद्गार व्यक्त करते हुए उन्होंने एक लंबी कविता लिखी थी। १९४४ में उनकी पहली कहानी 'बटबाबा' साप्ताहिक 'विश्वमित्र' (कलकत्ता) में प्रकाशित हुई। इसके बाद उनकी कहानियाँ और कविताएँ छिटपुट ढंग से उस समय की पत्र-पत्रिकाओं में छपती रहीं। इस दौरान रामवृक्ष बेनीपुरी के संपादकत्व में निकलने वाली सोशलिस्ट पार्टी की पत्रिका 'जनता' में उनके कई रिपोर्ताज प्रकाशित हुए। इन रिपोर्ताज में 'जै गंगा', 'डायन कोसी', 'हड्डियों का पुल', 'हिल उठा हिमालय' आदि शामिल थे। इसके बाद धीरे-धीरे साहित्य जगत में 'रेणु' परिचित हो गए। १९५४ में तो 'मैला आँचल' के प्रकाशन के साथ वे हिंदी साहित्य के शीर्ष रचनाकारों में शुमार हो गए और हिंदी कथा साहित्य में एक ऐसी जमीन तैयार कर गए, जिसकी गूँज आज तक विद्यमान है। अपने उपन्यासों और कहानियों के लिए ख्यातिप्राप्त 'रेणु' ने साहित्य की दूसरी

विधाओं में भी पर्याप्त लेखनी चलाई। अपने उपन्यास 'मैला आँचल', 'परती : परिकथा', 'दीर्घतपा', 'जुलूस', 'कितने चौराहे', 'पल्टू बाबू रोड' के साथ ही अपनी कहानियों के माध्यम से हिंदी कथा साहित्य में उन्होंने विशेष योगदान दिया। उनकी कहानियाँ 'ठुमरी', 'आदिम रात्रि की महक', 'अग्निखोर', 'एक श्रावणी दोपहरी की धूप', 'अच्छे आदमी', 'प्राणों में धुले हुए रंग' नामक संग्रहों में संकलित हैं।

'रेणु' ने अपने अमर कथा साहित्य की भाँति ही अद्वितीय कथेतर साहित्य के माध्यम से भी हिंदी साहित्य के विकास में अपना विशिष्ट योगदान दिया है। उन्होंने उपन्यास और कहानी के अतिरिक्त कविता, रिपोर्ताज, संस्मरण, रेखाचित्र, हास्य व्यंग्य, निबंध, पत्र साहित्य, डायरी, आत्मकथात्मक साहित्य आदि के माध्यम से भी हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि की है। उनके कथा साहित्य पर काफी काम हुए हैं, किंतु उनके कथेतर साहित्य पर उस तरह से काम नहीं हुए हैं, जिस तरह से होने चाहिए। यहाँ 'रेणु' का कथेतर साहित्य और उसका विवेचन ही हमारा अभीष्ट है।

'रेणु' ने अपने सृजन की शुरुआत छोटी-छोटी तुकबंदियों और कहानियों को जोड़ने से की थी। 'रेणु' ने अपने लेखन का प्रारंभ कविता से ही किया था। १९३२ में उनकी कविताएँ सिमरबनी से प्रकाशित पत्रिका 'खंगार सेवक' में छपी थी। १९४२ तक पूर्णिया जिले से छपने वाली पत्रिकाओं में उनकी कविताएँ लगातार छपती रहीं। उनके साहित्य में प्रवेश के संबंध में नागार्जुन ने लिखा था—*"फणीश्वरनाथ 'रेणु' की साहित्य सर्जना का आरंभ कविता से ही हुआ था। पूर्णिया नगर से निकलने वाले उस युग के (४०-५० के) साप्ताहिकों की फाइलें यदि कहीं मिल जाएँ तो 'रेणु' की तुकबंदियों और मुक्त छंदों के अनेक नमूने हासिल होंगे। उनकी कापियों के अंदर यत्र-तत्र काव्यात्मक पंक्तियाँ अवश्य ही मिलेंगी।"*

कथा साहित्य में पूरी तरह से डूबने के बावजूद 'रेणु' के कविता लिखने का क्रम भी थोड़ा बहुत बना रहा यही कारण है कि उनकी लिखी कविताएँ १९७७ तक दिखाई देती हैं। 'होली', 'रामनामी चादर', 'आगा खाँ के राजमहल में', 'जागो मन के सजग पथिक ओ', 'अपने जिले की मिट्टी से', 'पार्कर ५१ के प्रति' आदि उनकी प्रसिद्ध कविताएँ थीं। यह भी एक संयोग ही है कि १९७६ में लिखी उनकी कविता 'इमर्जेंसी : दोहरी त्रासदी' उनके जीवन की आखिरी रचना थी।

कथा साहित्य में पूरी तरह से डूबने के बावजूद 'रेणु' के कविता लिखने का क्रम भी थोड़ा बहुत बना रहा यही कारण है कि उनकी लिखी कविताएँ १९७७ तक दिखाई देती हैं। 'होली', 'रामनामी चादर', 'आगा खाँ के राजमहल में', 'जागो मन के सजग पथिक ओ', 'अपने जिले की मिट्टी से', 'पार्कर ५१ के प्रति' आदि उनकी प्रसिद्ध कविताएँ थीं। यह भी एक संयोग ही है कि १९७६ में लिखी उनकी कविता 'इमर्जेंसी : दोहरी त्रासदी' उनके जीवन की आखिरी रचना थी। 'रेणु' की कविताओं का एकमात्र संग्रह 'कवि रेणु कहे' नाम से १९८८ में प्रकाशित हुई। इस संग्रह की उनकी कविताओं 'खून की कसम', 'अग्रदूत', 'रुद्र शिव' आदि में कोसी की मिट्टी की गंध और बांग्लादेश की जनता की मुक्ति की छटपटाहट की अभिव्यक्ति हुई है। इसी तरह उनकी कविताओं में उनके सूक्ष्म बिंबों, कृषक जीवन की विडंबनाओं के चित्र, गीतात्मकाता, जैसे विशिष्ट पहलुओं को भी देखा जा सकता है। संवेदनशील भाषा और लयात्मकता के साथ लिखा गया उनका 'ओ लाल आफताब!' नामक गद्य गीत भी बहुत ही खास है।

सहायक प्रोफेसर के रूप में कार्यरत। 'हिंदी साहित्य और सिनेमा : रूपांतरण के आयाम' पुस्तक प्रकाशित। हिंदी भाषा और साहित्य से संबंधित चार पुस्तकों का संपादन। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में साहित्य, सिनेमा, शिक्षा से संबंधित शोध लेख प्रकाशित। अनेक संगोष्ठियों-सम्मेलनों में वक्तव्य एवं आलेख-पाठ। इ-पाठ निर्माण में भी योगदान।

'रेणु' के कथेतर साहित्य में सर्वाधिक मात्रा में उनके रिपोर्ताज ही मिलते हैं। उनका पहला रिपोर्ताज १९४५ में साप्ताहिक 'विश्वमित्र' में 'विदापत नाच' शीर्षक से छपा था। इसके अतिरिक्त 'डायन कोसी', 'जै गंगा', 'हड्डियों का पुल', 'एक्तू आस्ते आस्ते' आदि अनेक रिपोर्ताज बहुत ही चर्चित रहे। उनके 'डी.एस.पी. की बड़ी बड़ी मूँछें' और 'विराटनगर की खूनी दास्तान' क्रमशः मजदूर आंदोलन और क्रांति से जुड़े प्रसिद्ध रिपोर्ट थे। इसी तरह 'हिल रहा हिमालय' नेपाल की क्रांति कथा पर आधारित लंबी रिपोर्ट थी, जिसका पुनर्लेखन उन्होंने 'नेपाली क्रांति कथा' के रूप में किया और छपवाया। 'रेणु' के रिपोर्ट कहानी विधा के आसपास अधिक थे, हालाँकि 'नेपाली क्रांति कथा' को उपन्यास शिल्प के करीब कहा जा सकता है। 'सरहद के पार', 'एकलव्य के नोट्स' जैसे रिपोर्ताज समाजशास्त्रीय दृष्टि से बेहद महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। 'समय की शिला पर', 'सिलाव का खाजा', 'भूमि दर्शन की भूमिका' जैसे रिपोर्ताज जहाँ यात्रा-कथा शिल्प के रूप में लिखे गए रिपोर्ताज हैं, वहीं 'युद्ध की डायरी', 'पटना-जल-प्रलय' आदि रोजनामचा शैली में लिखे गए थे। उनके द्वारा लिखे गया 'तीसरी कसम के सेट पर तीन दिन' फिल्म निर्माण की प्रक्रिया को अभिव्यक्त करने वाला संस्मरणात्मक रिपोर्ताज है।

'रेणु' की दृष्टि में गाँव, ग्रामीण परिदृश्य और उसकी पिछड़ी हुई अवस्था सर्वदा बनी रही। 'नए सवेरे की आशा में' नामक अपने रिपोर्ताज में उन्होंने भारत के किसी एक नहीं बल्कि सभी गाँवों की तत्कालीन परिस्थिति और उससे जुड़ी कहानी बताने का काम किया है। इसमें भारत के हर उस गाँव की कहानी है, जो आजादी के बाद भी विकास से कोसों दूर है। गाँव की स्थिति का बहुत ही सजीव वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा

है—*"मानो गाड़ी को जबरन रुकना पड़ता है, इच्छा के विरुद्ध। अजीब स्टेशन है। आखिर यह स्टेशन है किसलिए? न टेलीग्राफ न टेलीफोन।"*

'रेणु' के रिपोर्ताज में कल्पना की जगह अनुभूति की सच्चाई है। उनके रिपोर्ताज में आम आदमी का संघर्ष प्रतिध्वनित होता हुआ दिखाई देता है। उदहारण के लिए देखें तो उन्होंने अपने 'हड्डियों के पुल' शीर्षक रिपोर्ताज में कोसी के बाढ़ से उत्पन्न अकाल का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है। अकालग्रस्त क्षेत्र के लोगों के बारे में 'रेणु' लिखते हैं—*"भूखों की भीड़ बढ़ रही है। धरती की छाती चीरकर, पाताल से 'अन्न' निकालने वालों को आज अन्न नहीं मिल रहा है।"*

१९७७ में 'रेणु' के रिपोर्ताजों का संकलन ऋणजल-धनजल नाम से प्रकाशित हुआ। यह संग्रह दो भागों में विभक्त है—'बाढ़ १९७५' तथा 'सूखा १९६६'। यह दो भीषण त्रासदियों पर आधारित है। पहले भाग में १९७५ में पटना की बाढ़ और उसकी यातना से संबंधित 'रेणु' के संस्मरणों पर आधारित रिपोर्ताज हैं तो दूसरे भाग में १९६६ में दक्षिण बिहार में भयानक सूखे से ग्रस्त इलाके के अज्ञेय के साथ किए गए उनके भ्रमण के संस्मरणों पर आधारित रिपोर्ताज हैं। इसमें अकालग्रस्त लोगों की त्रासदी, सरकारी राहत की वास्तविकता और लोगों की पीड़ा का बड़ा ही सूक्ष्म और मार्मिक वर्णन है।

'रेणु' के सामाजिक-राजनीतिक लेखों, टिप्पणियों, रिपोर्ताज आदि का भारत यायावर द्वारा संपादित संग्रह १९८६ में 'एकांकी के दृश्य' नाम से प्रकाशित हुआ। भारत यायावर ने ही उनके रिपोर्ताज को १९९१ में 'समय की शिला' नाम से संकलित और संपादित किया। 'रेणु' के कथेतर साहित्य का एक बड़ा हिस्सा उनके संस्मरण और रेखाचित्र का है। अपने संस्मरणों के माध्यम से उन्होंने मनुष्य के वास्तविक चेहरे को उद्घाटित किया है। *"रेणु जी के मस्तिष्क में उन नामों की अमिट छाप थी, जिनमें इनसानियत मौजूद थी। 'रेणु' ने अपने जीवन की कई महत्त्वपूर्ण घटनाओं को भी संस्मरणात्मक रूप में लिखा, उनके आत्म-संस्मरण कथारस से भरपूर हैं।"*

१९८० में 'रेणु' के वैयक्तिक निबंधों, संस्मरणों तथा रिपोर्ताज का संकलन 'श्रुत अश्रुत पूर्व' नाम से प्रकाशित हुआ। 'राष्ट्र निर्माण में लेखक का सहयोग', 'जनजागरण में साहित्यकार की भूमिका' आदि 'रेणु' के व्यक्तित्व और उनकी वैचारिकी को समझने की दृष्टि से बेहद खास हैं। 'रेणु' बंगसाहित्य के भी निकट थे और इस संग्रह के 'हे कलकत्ता, मेरे कलकत्ता' मूलत: बँगलाभाषा में ही रचित था। १९८४ में भारत यायावर द्वारा संकलित संपादित संग्रह 'वन तुलसी की गंध' में भी उनके संस्मरण और रेखाचित्र शामिल हैं। पुस्तक के पहले खंड में 'यशपाल', 'अज्ञेय', 'अश्क', जैनेंद्र', 'उग्र', 'त्रिलोचन' जैसे समकालीन रचनाकारों के संस्मरणात्मक रेखाचित्र हैं तो दूसरे खंड में नेपाली के 'बाल कृष्ण सम', उर्दू के 'सुहैल अजीमाबादी' तथा बँगला के 'रवींद्रनाथ', 'सतीनाथ भादुड़ी' तथा बुभुक्षित पीढ़ी के रचनाकारों के स्केच हैं। इसके तीसरे खंड में जो रेखाचित्र हैं, वे कहानियों के ज्यादा निकट हैं। इनके माध्यम से 'रेणु' के व्यक्तित्व और उनकी विचारधारा को समझने में सहायता मिलती है। 'रेणु' ने जैनेंद्र कुमार के रेखाचित्र में उनके संबंध में जो लिखा है, वह मनुष्य को सही ढंग से समझने के सूत्र देता है। उन्होंने लिखा है—*"व्यक्ति के जीवन में जो अधूरे राग (ओवरटोन) ध्वनित होते हैं, उसी में असली मनुष्य (ऑथेंटिक-इंडिविजुएल) की झाँकी मिलेगी। असल में जैनेंद्र को खोजने के लिए उसके बेसुरे राग को पकड़ना होगा।"*

इसके साथ ही 'रेणु' ने कुछ निबंध और हास्य-व्यंग्य भी लिखे हैं। इनमें कथारस से भरपूर शुद्ध आत्मव्यंजक 'वह एक कहानी' तथा आंचलिकता को प्रतिपादित करते हुए और यह स्थापित करते हुए लिखा गया 'आंचलिकता' शीर्षक निबंध कि आंचलिकता एक विधा है, आदि इस श्रेणी में रखा जा सकता है। १९८८ में उनकी व्यंग्य रचनाओं का संकलन 'उत्तर नेहरूचरितम' नाम से प्रकाशित हुआ। ये व्यंग्य समकालीन जीवन की विसंगतियों को उजागर करती हैं। 'रेणु' ने कई बार खुद को चोट पहुँचाने वालों को जवाब देने के लिए भी व्यंग्य का सहारा लिया है।

'रेणु' एक संवेदनशील मनुष्य और लेखक थे। उनकी कहानी पर 'तीसरी कसम' फिल्म बनाने वाले और उस पर अपनी जिंदगी भर की पूँजी लुटा देने वाले गीतकार शैलेंद्र से 'रेणु' का रिश्ता कितना गहरा था, यह सर्वविदित है। इसे शैलेंद्र पर 'रेणु' के लिखे 'चिठिया हो तो हर कोई बाँचे' शीर्षक संस्मरण से भी अच्छी तरह से समझा जा सकता है। उनकी दोस्ती लगभग छह साल तक ही रही थी, किंतु शैलेंद्र की याद को उन्होंने अपने सीने में मरते दम तक कायम रखा। उनके बारे में अपने भाव व्यक्त करते हुए 'रेणु' लिखते हैं—*"छह वर्षों में उसके साथ बिताए हुए दिनों के एक-एक क्षण, हर छोटी बड़ी घटनाएँ और सारे संवाद मुझे अक्षरश: याद हैं। किंतु लिखते समय महसूस कर रहा हूँ कि अपने कलेजे के रक्त में लेखनी को डुबो-डुबोकर ही उसके बारे में सब कुछ लिखना संभव हो सकेगा। और यह मुझे ही लिखना पड़ेगा। अन्यथा मैं पागल हो जाऊँगा।"*

इसके साथ ही 'रेणु' ने कुछ निबंध और हास्य-व्यंग्य भी लिखे हैं। इनमें कथारस से भरपूर शुद्ध आत्मव्यंजक 'वह एक कहानी' तथा आंचलिकता को प्रतिपादित करते हुए और यह स्थापित करते हुए लिखा गया 'आंचलिकता' शीर्षक निबंध कि आंचलिकता एक विधा है, आदि इस श्रेणी में रखा जा सकता है। १९८८ में उनकी व्यंग्य रचनाओं का संकलन 'उत्तर नेहरूचरितम' नाम से प्रकाशित हुआ। ये व्यंग्य समकालीन जीवन की विसंगतियों को उजागर करती हैं। 'रेणु' ने कई बार खुद को चोट पहुँचाने वालों को जवाब देने के लिए भी व्यंग्य का सहारा लिया है। 'मैला आँचल' प्रकाशित होने के बाद इसकी संकुचित

मनोवृत्ति के साथ आलोचना करने वाले समीक्षकों पर व्यंग्य करते हुए उन्होंने लिखा—*"तुमने तो पढ़ा है न 'मैला आँचल', कहानी बताओ? कह सकते हो उसके हीरो का नाम? कोई घटना सूत्र? नहीं न! कहता ही था। न कहानी है, न कोई चरित्र ही पहले पन्ने से आखिरी पन्ने तक छा सका है। सिर्फ ढोल मृदंग बजाकर 'इन्किलास जिंदाबाद' जरूर किया गया है। 'पाटी' और 'कलस्टर' और संघर्ष और 'जकसैन' जैसे भोंड़े शब्द भरकर हिंदी को भ्रष्ट करने का कुप्रयास खूब सफल हुआ है। उन्हीं आलोचकों के शब्दों में उन्हीं पर व्यंग्य किया है 'रेणु' ने। यह व्यंग्य लेखन का अनोखा तरीका है।"*

'रेणु' के निबंध 'राष्ट्र निर्माण में लेखक का सहयोग' में समाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता और जागरूकता का परिचय मिलता है। आजादी के बाद भारत की प्रमुख समस्याओं में एक समस्या राष्ट्र निर्माण की थी। 'रेणु' को अच्छी तरह मालूम था कि देश वैज्ञानिक प्रगति के मार्ग पर निकल पड़ा है किंतु उसे यह भी पता था कि देश की जनता में अभी भी वैज्ञानिक चेतना का विकास होना शेष है। इसको ध्यान में रखते हुए उन्होंने लिखा कि *"तरह-तरह के वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों के द्वारा सर्वसाधारण के बीच विज्ञान का प्रसाद वितरण कर देने से कुछ नहीं होगा। जन साधारण की वैज्ञानिक दृष्टि को खोलने की आवश्यकता है। वैज्ञानिक संपदा-लाभ करने के साथ-साथ वैज्ञानिक दृष्टि लाभ श्रेयस्कर है। देश की खर-स्रोत नदियों के जल स्रोत को विज्ञान की शृंखला में बाँधकर, देश की बंजर और गैर आबाद जमीन को शस्य-श्यामल बनाने के साथ-साथ मानसिक दुर्भिक्षग्रस्त राष्ट्र की चित्र-भूमि को उर्वर बनाने की अवश्यकता थी।"*

'रेणु' का डायरी साहित्य काफी कम है। रचनावली में संकलित डायरियों के पाँच पाठ शामिल हैं। इनमें भी पहली तीन अधूरी ही हैं और अंतिम दो 'रेणु' के आत्मकथ्य हैं। अपनी डायरी लेखन में उन्होंने किसी प्रचलित परंपरा का अनुसरण न करते हुए अपने व्यक्तित्व की तरह ही उन्हें बंधनमुक्त रखा है। भारत यायावर ने १९८८ में 'रेणु' के आत्मकथनात्मक रचनाओं तथा उनके साक्षात्कार-अंशों को संकलित कर 'आत्मपरिचय' के रूप में प्रकाशित किया। इसमें शामिल अधिकांश सामग्री पहले के संकलनों में कहीं-न-कहीं आ चुकी थी।

'रेणु' ने अपने 'उलझे हुए रिश्ते : सुलझे हुए विचार' निबंध में फिल्म, रंगमंच, विज्ञापन आदि विषयों पर लिखा है। इसमें उन्होंने इन क्षेत्रों में होने वाले बदलाव पर बात करते हुए बाजार और व्यावसायिकता के दवाब के बारे में भी लिखा है। उन्होंने बाजार में खुद को बेच देने वाले लेखकों को बेपर्दा किया है। उन्होंने कला को धन कमाने का माध्यम मानने की जगह उसे कला के रूप में ही ग्रहण किया। उन्होंने पैसे के प्रभाव में फिल्म निर्माण में आई विकृति को सामने रखते हुए मृणाल सेन, अरुण कौल, बासु चटर्जी, बासु भट्टाचार्य जैसे लोगों के सिनेमाई दृष्टिकोण और अवदान के प्रति भरोसा व्यक्त करते हुए उनके प्रति जहाँ आदर का भाव व्यक्त किया, वहीं उन्होंने सिनेमा निर्माण से जुड़े ऐसे लोगों की आलोचना भी की, जो अपने दायित्व का सही ढंग से पालन नहीं कर रहे थे। उन्होंने इस निबंध में लिखा है—*"हिंदी सिनेमा उस माने में अपना दायित्व पूरा नहीं कर पा रहा है, जिस माने में करना चाहिए। आजकल तो फिल्मवाले अपनी फिल्मों में ऐसी चीजें दिखाते हैं, जो आम जिंदगी से हटकर हैं, अस्वाभाविक हैं।'' कुछ ऐसे लोग हैं, जिन्होंने ऐसी परिस्थितियों से समझौता कर लिया है। पर उन्हीं से हमारा फिल्म जगत् बहुत नुकसान उठा रहा है।"*

'रेणु' रचनावली में संकलित उनके पत्रों के माध्यम से 'रेणु' के व्यक्तित्व के सही-सही आकलन में सहायता मिलती है। 'रेणु' अपने पत्रों पर भी काफी मेहनत करते थे। उनके पत्रों के कई-कई ड्राफ्ट मिले हैं, जो इसकी पुष्टि करते हैं। राष्ट्रपति, राज्यपाल, साहित्यकार, संपादक, परिजनों और सगे संबंधियों को लिखे उनके पत्र एक धरोहर की तरह हैं। इनमें 'रेणु' की भावनात्मकता, आत्मीयता के भावबोध को देखा जा सकता है। उनके द्वारा अपने घनिष्ठ मित्रों, पत्नी लतिकाजी को लिखे गए पत्र भी बेहद महत्त्वपूर्ण हैं। 'रेणु' का डायरी साहित्य काफी कम है। रचनावली में संकलित डायरियों के पाँच पाठ शामिल हैं। इनमें भी पहली तीन अधूरी ही हैं और अंतिम दो 'रेणु' के आत्मकथ्य हैं। अपनी डायरी लेखन में उन्होंने किसी प्रचलित परंपरा का अनुसरण न करते हुए अपने व्यक्तित्व की तरह ही उन्हें बंधनमुक्त रखा है। भारत यायावर ने १९८८ में 'रेणु' के आत्मकथनात्मक रचनाओं तथा उनके साक्षात्कार-अंशों को संकलित कर 'आत्मपरिचय' के रूप में प्रकाशित किया। इसमें शामिल अधिकांश सामग्री पहले के संकलनों में कहीं-न-कहीं आ चुकी थी।

कुल मिलाकर 'रेणु' के कथेतर साहित्य को देखकर यही कहा जा सकता है कि 'रेणु' ने अपने क्रांतिकारी स्वभाव के अनुरूप साहित्य की परंपराओं को तोड़ने का काम किया और नए प्रयोगों के माध्यम से आंचलिक साहित्य की एक मजबूत नींव तैयार की। उन्होंने अपने कथेतर साहित्य में भी कथा साहित्य की भाँति ही मानवीय समस्याओं के विविध पहलुओं को बड़ी ही कुशलता के साथ उपस्थित किया है। वे अपनी रचनाओं के माध्यम से शोषण के विरुद्ध सभी को आवाज उठाने के लिए प्रेरित करते हैं। उनका कथेतर साहित्य मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा का द्योतक है और यह उनके कथा साहित्य की भाँति ही हिंदी साहित्य की थाती है।

साअ

यू-८९, परिवार अपार्टमेंट, सुभाष पार्क,
उत्तम नगर, नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ८९२०११६८२२
vijayvijaymishra@gmail.com

प्रभात नए प्रकाशन

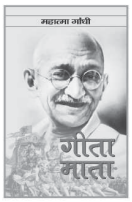

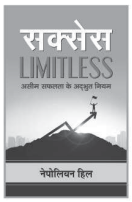

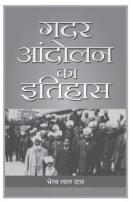

- **अखंड भारत के शिल्पकार सरदार पटेल** — हिंडोल सेनगुप्ता — 700.00
- **भूख और भोज के बीच विवेकानंद** — शंकर — 600.00
- **राजयोग : स्वरूप एवं साधना** — योगी आदित्यनाथ — 300.00
- **हठयोग : स्वरूप एवं साधना** — योगी आदित्यनाथ — 300.00
- **योग और आहार द्वारा 100 साल कैसे जिएँ** — बिजोयलक्ष्मी होता — 500.00
- **स्वस्थ रहें, मस्त रहें** — मिकी मेहता — 350.00
- **Diabetes उपचार के 101 टिप्स** — डॉ. अनिल चतुर्वेदी — 250.00
- **नींद : थकान से स्फूर्ति तक** — संजय अग्रवाल — 150.00
- **साल में 1000 Productive घंटे कैसे बढ़ाएँ** — संजय अग्रवाल — 350.00
- **गांधी : एक सत्य** — राजेंद्र मोहन भटनागर — 400.00
- **एकदा भारतवर्षे…** — हेमंत शर्मा — 700.00
- **विकास की राजनीति** — डॉ. विनय सहस्त्रबुद्धे — 350.00
- **भारतीय जनता पार्टी की गौरवगाथा** — शांतनु गुप्ता — 800.00
- **मोदी-शाह : मंजिल और राह** — आर.के. सिन्हा — 600.00
- **लॉर्ड ऑफ रिकॉर्ड्स** — हरीश चंद्र बर्णवाल — 750.00
- **कहानी मोदी 2.0 की** — अकु श्रीवास्तव — 600.00
- **भारत कैसे हुआ मोदीमय** — संतोष कुमार — 500.00
- **नरेंद्र मोदी होने का अर्थ** — डॉ. कुलदीप चंद अग्निहोत्री — 500.00
- **राष्ट्र-साधक नरेंद्र मोदी** — आर. बालाशंकर — 500.00
- **मोदी नीति** — हरीश चंद्र बर्णवाल — 400.00
- **मशहूर हुए तो क्या हुआ?** — सोहा अली खान — 450.00
- **शोमैन राज कपूर** — रितु नंदा — 700.00
- **तेंदुलकर की कहानी उन्हीं की जुबानी** — सचिन तेंदुलकर — 500.00
- **तुम कब आओगे श्यावा** — सूर्यकांत बाली — 400.00
- **दीर्घतमा** — सूर्यकांत बाली — 500.00
- **भारत की राजनीति का उत्तरायण** — सूर्यकांत बाली — 1000.00
- **भारत का दलित-विमर्श** — सूर्यकांत बाली — 600.00
- **भारतीय संस्कृति का संवाहक इंडोनेशिया** — रमेश पोखरियाल 'निशंक' — 400.00
- **भारत दर्शन** — जगराम सिंह — 1500.00
- **शिक्षा के द्वंद्व** — पवन सिन्हा — 350.00
- **छुआछूत मुक्त समरस भारत** — इंद्रेश कुमार — 350.00
- **कला और संस्कृति** — वासुदेवशरण अग्रवाल — 500.00
- **माता भूमि** — वासुदेवशरण अग्रवाल — 500.00
- **हमारा संविधान : एक पुनरावलोकन** — सं. राम बहादुर राय — 700.00
- **विलक्षण शब्द चित्र** — पु.ल. देशपांडे — 500.00
- **5 सरसंघचालक** — अरुण आनंद — 400.00
- **डॉ. आंबेडकर : आयाम दर्शन** — किशोर मकवाणा — 600.00
- **डॉ. आंबेडकर : व्यक्ति दर्शन** — किशोर मकवाणा — 600.00
- **डॉ. आंबेडकर : जीवन दर्शन** — किशोर मकवाणा — 600.00
- **डॉ. आंबेडकर : राष्ट्र दर्शन** — किशोर मकवाणा — 600.00
- **गीता माता** — महात्मा गांधी — 400.00
- **कर्मयोगी संन्यासी योगी आदित्यनाथ** — रहीस सिंह — 400.00
- **विद्रोही संन्यासी** — राजीव शर्मा — 400.00
- **शिवाजी महाराज द ग्रेटेस्ट** — हेमंतराजे गायकवाड — 600.00
- **सुभाषचंद्र बोस की अधूरी आत्मकथा** — शिशिर कुमार बोस — 600.00
- **नेताजी सुभाष चंद्र बोस युवकों से** — सं. राम किशोर — 300.00
- **मेरी राजनीतिक जीवन यात्रा** — पी.ए. संगमा — 900.00
- **चाणक्य और जीने की कला** — प्रस्तुति : बकुल बक्शी — 400.00
- **सफलता का खजाना** — मौलाना वहीदुद्दीन खान — 400.00
- **गांधी बनाम भगत** — नवीन गुलिया — 250.00
- **सफलता के गुरुमंत्र** — नेपोलियन हिल — 400.00
- **मन में है विश्वास** — नेपोलियन हिल — 500.00
- **सफलता के लिए 13 सर्वश्रेष्ठ आदतें** — नेपोलियन हिल — 400.00
- **सक्सेस Limitless** — नेपोलियन हिल — 600.00
- **Startup सक्सेस स्टोरीज** — नीति जैन और गगन जैन — 600.00
- **द पावर ऑफ फोकस** — जैक कैनफील्ड, मार्क विक्टर हैंसन, लेस हेविट — 700.00
- **कैसे पाएँ जीवन में असीम सफलता** — महेश दत्त शर्मा — 300.00
- **आओ धनवान बनें** — राधा रमण मिश्रा — 350.00
- **25 सक्सेस बिजनेस Stories** — प्रकाश अय्यर — 450.00
- **आप भी अमीर बन सकते हैं** — जोसेफ मर्फी — 450.00
- **सर्वश्रेष्ठ मन द्वारा सफलता पाएँ** — जोसेफ मर्फी — 300.00
- **विश्वास का जादू** — जोसेफ मर्फी — 250.00
- **अवचेतन मन की शक्ति** — जोसेफ मर्फी — 500.00
- **आकर्षण का नियम** — विलियम वाकर एटकिंसन — 300.00
- **जीवन जीने के Positive मंत्र** — लुइस एल. हे — 500.00
- **सक्सेस की University** — ऑग मैंडिनो — 600.00
- **सुपर सफलता के 25 सुपर नियम** — ऑग मैंडिनो — 600.00
- **सुपर सक्सेस @ NLP** — मनोज केशव — 600.00
- **परवरिश 2.0** — एन. रघुरामन — 250.00
- **नए-नए बिजनेस आइडिया नया भारत** — एन. रघुरामन — 300.00
- **नेक बनें, श्रेष्ठ बनें** — एन. रघुरामन — 250.00
- **पुनर्जन्म** — वॉल्टर सेम्किव — 800.00
- **कारगिल** — रचना बिष्ट रावत — 500.00
- **मिशन एवरेस्ट 1965** — कैप्टन एम.एस. कोहली — 600.00
- **गदर आंदोलन का इतिहास** — भैरव लाल दास — 900.00
- **बटुकेश्वर दत्त और क्रांतिकारी आंदोलन** — भैरव लाल दास — 500.00

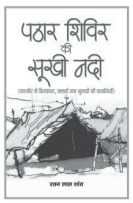

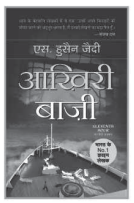

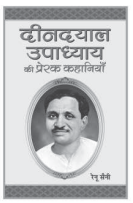

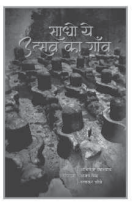

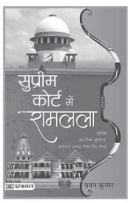

- **काँच विज्ञानी डॉ. आत्माराम** शिवगोपाल मिश्र 400.00
- **नोबेल पुरस्कृत डॉ. हरगोविंद खुराना** दिनेश मणि 300.00
- **सेनापति तात्या टोपे** रंजना चितले 300.00
- **शिक्षा : विकल्प एवं आयाम** अतुल कोठारी 400.00
- **तीन तलाक** ज़ियाउस्सलाम 350.00
- **संपूर्ण बाल नाटक** विष्णु प्रभाकर 500.00
- **गूगल निर्माता : सर्गेई & लैरी** प्रदीप ठाकुर 400.00
- **बेंजामिन ग्राहम के इन्वेटस्मेंट मंत्र** प्रदीप ठाकुर 350.00
- **नेटवर्क मार्केटिंग से अमीर बनिए** प्रदीप ठाकुर 350.00
- **जयप्रकाश! तुम लौट आओ** (उपन्यास) ममता मेहरोत्रा 400.00
- **प्यार तो होना ही था** (उपन्यास) हिमांशु राय 400.00
- **क्या मुझे प्यार है?** (उपन्यास) अरविंद पाराशर 300.00
- **मेरे सपनों की लड़की** (उपन्यास) दुर्जोय दत्ता 500.00
- **द ब्वॉय हू लव्ड** (उपन्यास) दुर्जोय दत्ता 600.00
- **हमारी अधूरी कहानी** (उपन्यास) अर्पित बगेरिया 300.00
- **आखिरी ख्वाहिश** (उपन्यास) अजय के. पांडे 300.00
- **लड़की अनजानी सी** (उपन्यास) अजय के. पांडे 300.00
- **अविनाश जिंदा है** (उपन्यास) आनंद शर्मा 300.00
- **आखिरी बाजी** (उपन्यास) एस. हुसैन जैदी 500.00
- **न तीन में, न तेरह में मृदंग बजाए डेरे में** आनंद प्रकाश / विनीता चांडक 300.00
- **वो मुझे हमेशा याद रहेंगे** आनंदीबेन पटेल 500.00
- **कॉरपोरेट योगी** डॉ. अरविंद लाल 495.00
- **यादों का कारवाँ** दीपक महान 200.00
- **पैराडाइज टावर्स** श्वेता बच्चन-नंदा 300.00
- **नौकरशाह ही नहीं** अनिल स्वरूप 400.00
- **अहंकार को करें बाय-बाय** राजेश अग्रवाल 300.00
- **उलटा लटका राजा** (कहानियाँ) सुधा मूर्ति 350.00
- **सपनों भरे दिन** (कहानियाँ) रामदरश मिश्र 350.00
- **एक टीचर की डायरी** (कहानियाँ) भावना शेखर 300.00
- **तुम याद आओगे लीलाराम** (कहानियाँ) प्रकाश मनु 350.00
- **चलें गाँव की ओर** (कहानियाँ) एम.डी. मिश्रा 'आनंद' 350.00
- **पठार शिविर की सूखी नदी** (कहानियाँ) रतन लाल शांत 300.00
- **रैवन की लोककथाएँ** (कहानियाँ) सुषमा गुप्ता 350.00
- **आभार तुम्हारा** (कहानियाँ) मीनू त्रिपाठी 350.00
- **देशप्रेम, प्रकृति और पहाड़** डॉ. रमा 300.00
- **जम्मू-कश्मीर : सच तो सही है** (कहानियाँ) आशा नैथानी दायमा 250.00
- **त्वमपि मया सह चल और जीवनपथे** रमेश पोखरियाल 'निशंक' 300.00
- **जीवन एक दर्पण** रवींद्र नाथ प्रसाद सिंह 400.00
- **कहानी एक IAS परीक्षा की** के. विजयकार्तिकेयन 300.00
- **ई.वी.एम. की सच्ची कहानी** आलोक शुक्ला 400.00
- **दीनदयाल उपाध्याय की प्रेरक कहानियाँ** रेनू सैनी 400.00
- **लौहपुरुष सरदार पटेल के प्रेरक प्रसंग** रेनू सैनी 400.00
- **शास्त्रीजी के प्रेरक प्रसंग** रेनू सैनी 400.00
- **अपने चाणक्य स्वयं बनें** रेनू सैनी 350.00
- **परछाईं का सच** नर्मदा प्रसाद उपाध्याय 350.00
- **भ्रष्टाचार की विषबेल** सदाचारी सिंह तोमर 500.00
- **राष्ट्र गौरव सम्राट हेमचंद्र विक्रमादित्य** परशुराम गुप्त 250.00
- **एक भारतीय की जापान यात्रा** ऋषि राज 350.00
- **20 सुपर वुमॅन** प्राची गर्ग 400.00
- **50 महान् स्वतंत्रता सेनानी** (जीवनी) ऋषि राज 600.00
- **इमरजेंसी का कहर और सेंसर का जहर** बलबीर दत्त 900.00
- **साधो ये उत्सव का गाँव** सं. अभिषेक उपाध्याय 500.00
- **रागगीरी** शिवेंद्र कुमार सिंह और गिरिजेश कुमार 450.00
- **पं. सूर्यनारायण व्यास प्रतिनिधि रचनाएँ** राजशेखर व्यास 700.00
- **कबीरा बैठा डिबेट में** (व्यंग्य) पीयूष पांडेय 250.00
- **दूर के ट्रोल सुहाने** (व्यंग्य) आशुतोष उज्ज्वल 350.00
- **रिश्वत महादेवी की जय!** (व्यंग्य) यशवंत कोठारी 350.00
- **शेयर मार्केट शब्दकोश** ए. सुल्तान 300.00
- **Share Market में निवेश और ट्रेडिंग के सीक्रेट्स** स्वामीनाथन अन्नामलाई 300.00
- **शेयर ट्रेडिंग करो और अमीर बनो** इंद्रजीत शांतराज 350.00
- **स्टॉक मार्केट में सफल होने के 41 टिप्स** महेश चंद्र कौशिक 250.00
- **परवरिश करें तो ऐसे करें** वीना श्रीवास्तव 400.00
- **खिलखिलाता बचपन : आदतें और संस्कार** वीना श्रीवास्तव 400.00
- **English सीखें और सफल बनें** जगदीश नारायण सिंह 700.00
- **English में पाएँ अधिकतम Marks** गो.द. पहिनकर 350.00
- **इनोवेशन, कानून और गरीबी** रॉबर्ट डी. कूटर, हंस-बर्नड शेफर 700.00
- **सुप्रीम कोर्ट में रामलला** पवन कुमार 300.00
- **अमरफल** राघवजी माधड 400.00
- **मैं आर्यपुत्र हूँ** मनोज सिंह 600.00
- **शिखंडी** डॉ. लक्ष्मी नारायण गर्ग 300.00
- **जनसरोकार के पत्रकार हरिवंश** डॉ. आर.के. नीरद 700.00
- **दिशोम गुरु, शिबू सोरेन** अनुज कुमार सिन्हा 500.00

प्रभात प्रकाशन
नवनूतन प्रकाशन की गौरवशाली परंपरा
इ-मेल : prabhatbooks@gmail.com
4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23257555
हेल्पलाइन नं.✆7827007777

बिना पूर्व सूचना के मूल्यों में परिवर्तन किया जा सकता है।

आहट

• आलोक यात्री

शादी विनय की भतीजी की थी। विनय के घर में कोई भी आयोजन हो, इंतजामिया कमेटी का मुखिया मैं ही होता था। सब कुछ चकाचक ही था। तमाम इंतजामात का मैं कई बार मुआयना कर चुका था। सब कुछ ठीक-ठाक ही था। विनय के रिश्तेदारों का जमावड़ा लगने लगा था। इंतजार था तो बस बारात का। वेटर्स को स्नैक्स की सप्लाई में लगाकर मैंने यह सोचकर राहत की साँस ली कि अब कोई कोना तलाश कर सिगरेट का लुत्फ उठाया जा सकता है। मंडप के बाहर निकलकर मैंने सिगरेट सुलगाकर दो-चार कश ही लगाए थे कि विनय ने मेरे सामने लाकर स्कूटर को ब्रेक लगाकर एक किनारे खड़ा कर दिया।

"सब ठीक···" सिर से हेलमेट उतारते हुए विनय ने पूछा

"हाँ! फिलहाल··· नाश्ता शुरू करवा दिया है"

"चलें···" विनय ने आगे बढ़ते हुए कहा। आधी पी सिगरेट जूते से कुचलकर मैं विनय के साथ पंडाल की ओर बढ़ गया। विनय के रिश्तेदारों के अलावा पूरे पंडाल में पाँच-सात दोस्त और ट्रे लिये घूम रहे वेटर्स ही नजर आ रहे थे। करने को कुछ नहीं था तो मैं लाइट्स का ही मुआयना करने लगा। समय आगे सरक ही नहीं रहा था। क्या करू? इंतजाम पर नजर डालने की नीयत से भट्ठी से लेकर स्टॉल तक का एक चक्कर और लगा लिया। सब दुरुस्त ही था।

अभी सात बजे हैं। मैंने खुद को बताया। खुद ही हिसाब लगाया। बारात आने में कम से कम दो घंटे तो लगेंगे ही। यानी नौ··· फिर खाना··· घर पहुँचते-पहुँचते दस···। वह भी यदि यहाँ से रिक्शा मिला तो··· वरना चुंगी तक का पैदल का रास्ता बीस मिनट का। चुंगी पर पहुँचते ही रिक्शा मिला तो बीस मिनट···। गेट नंबर एक खुला मिले तो गनीमत···। वरना गेट नंबर तीन तक चक्कर लगाकर जाने में दस मिनट और···। यानी रेजिडेंट वेलफेयर एसोसिएशन के नियमों के चलते ग्यारह···। ग्यारह और सात··· यानी चार घंटे। क्या करूँगा चार घंटे यहाँ? अभी निकल लूँ क्या?

"लिफाफा दो और निकल लो," मैंने खुद को समझाया। इस खयाल के साथ ही मेरी निगाहें पंडाल में इधर-उधर दौड़ने लगीं। विनय सामने ही खड़ा था। सही समय था शगुन का लिफाफा विनय की जेब के सुपुर्द करने का। चंद कदम सरककर मैं विनय तक पहुँच गया। शगुन का लिफाफा निकालकर विनय की जेब के हवाले किया। विनय ने मेरी चेष्टा पर पानी फेरते हुए हाथ पकड़ लिया। "अरे चाचाजी को, चाचाजी को···"

"कहाँ हैं?" इधर-उधर निगाह दौड़ाते हुए मैंने भी सवाल दागने का

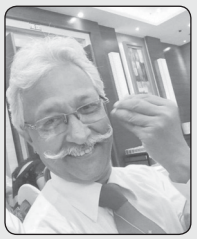

शिक्षण के दौरान कविता में 'मोदी कला भारती' पुरस्कार से सम्मानित। पहली कहानी 'चौराहे पर मौत' 'सारिका' के 'आते हुए लोग' विशेषांक में प्रकाशित। तीन दशक से अधिक समय से पत्रकारिता से जुड़ाव। मासिक समाचार पत्रिका 'मीडिया ३६०' का संपादन। गाजियाबाद में 'मीडिया ३६० लिटरेरी फाउंडेशन' के अंतर्गत नियमित मासिक 'कथा संवाद' का आयोजन। विश्वविद्यालय स्तर पर कई पुरस्कारों के अलावा कई संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत।

हौसला दिखाया। वातावरण में उतर रही सर्दी मेरे वहाँ ठहरने के हौसले को पस्त कर रही थी।

"कहाँ है?"

"यही होंगे···वे रहे।" विनय के साथ मैं भी आगे बढ़ा

"चाचाजी, यह है परेश···"

"हाँ-हाँ, जानता हूँ।" एक लंबे चौड़े शख्स ने मेरा आलिंगन करते हुए कहा। मैं समझ गया कि ये विनय के चाचाजी हैं। जिनकी बेटी की शादी है। मैं शगुन का लिफाफा चाचाजी के हाथ में देने की कोशिश कर ही रहा था कि उन्होंने बड़ी आत्मीयता से मेरा हाथ थाम लिया। सामने खड़े सज्जन से चाचाजी बोले, "यह परेश हैं, विनय के दोस्त··· परेश भूषण। पत्रकार हैं भाई पत्रकार!"

"अरे चाचाजी कहाँ, आपका तो भतीजा ही रहूँगा।" शगुन का लिफाफा चाचाजी के हवाले करने की कोशिश करते हुए मैंने कहा। जो लोग सामने खड़े थे, उनके लिए मेरे परिचय की कोई खास अहमियत भी नहीं थी। न ही उन्हें इस बात से कोई फर्क पड़ने वाला था कि मैं पत्रकार हूँ या तुर्रम खाँ। अलबत्ता चाचाजी के आखिरी जुमले से मेरा संकोच कुलबुलाने लगा था।

"क्या नाम बताया··· परेश भूषण··· परेश भूषण पत्रकार!" टाई सूट में सजे एक अधेड़ से सज्जन ने चाचाजी से पूछा।

उन सज्जन के सवाल का जवाब देने के बजाए चाचाजी मुझ से मुखातिब हो गए, "यह हमारे बहनोई हैं, आगरा से···चीफ इंजीनियर थे··· चार महीने पहले ही रिटायर हुए हैं···राम अवतार अग्रवाल।"

"परेशजी हैं आप··· परेश भूषण··· पत्रकार" यह कहते हुए वह

सज्जन दोनों हाथ जोड़कर नतमस्तक की सी मुद्रा में आ गए। "प्रणाम करता हूँ आपको," यह कहते हुए उन्होंने दोनों हाथ जोड़कर दो-तीन बार प्रणाम किया। उनके इस अप्रत्याशित व्यवहार से मैं अचकचा गया। मेरी समझ में नहीं आया कि वह इस मुद्रा में मुझे बार-बार प्रणाम क्यों कर रहे हैं? उनकी इस हरकत से मुझे स्वयं अपमानित किए जाने का बोध हो रहा था। मुझे लगा कि वह पत्रकारों के सताए हुए हैं। चीफ इंजीनियर रहे हैं तो जाहिर बात है, पत्रकारों से पाला तो पड़ता ही रहा होगा। मेरे लिए उन्होंने समस्या खड़ी कर दी थी। पत्रकारों से मिली पीड़ा का दंड वह मुझे देने वाले थे।

कहाँ फँसाया विनय ने, नहीं चाचाजी ने? जेहन पर जोर डालते हुए मैंने नाम याद करने की कोशिश की। राम अवतार अग्रवाल···। हाँ यही···! उन्हें उसी मुद्रा में प्रणाम कर मैं वहाँ से निकलना चाहता था। चाचाजी के हाथ की गिरफ्त कुछ ढीली हुई तो लिफाफा उनकी जेब के हवाले कर मैं अग्रवाल साहब की ओर मुखातिब हुआ। लेकिन वह वहाँ नहीं थे। यह राहत की बात थी।

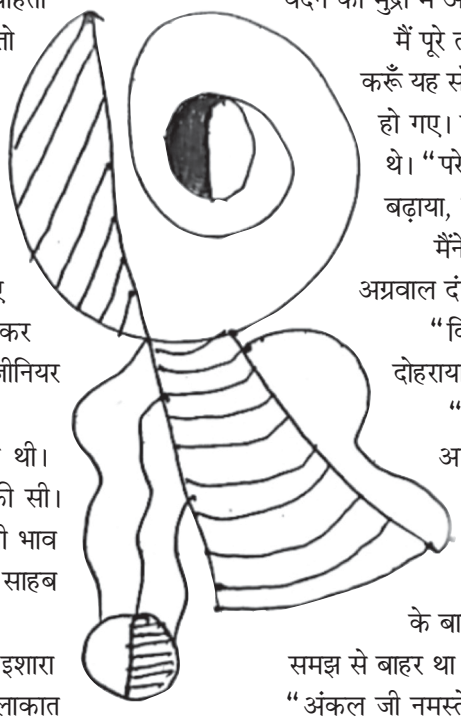

चलने के लिए मैंने चाचाजी से इजाजत माँगी। बोले, "ऐसे कैसे, खाना खाकर···"

"सबको खिलाकर चाचाजी···" यह कहते हुए मैं पलटने ही लगा था कि किसी ने मेरा कंधा पकड़कर मुझे जबरन पलट दिया। अग्रवाल साहब थे। चीफ इंजीनियर राम अवतार अग्रवालजी।

"यही हैं···" एक संभ्रांत महिला उनके साथ थी। अग्रवालजी के हाथ उसी मुद्रा में जुड़े थे। नमन की सी। महिला ने भी विनम्रतापूर्वक दोनों हाथ जोड़कर उसी भाव से अभिवादन किया, जैसे कुछ देर पहले अग्रवाल साहब कर चुके थे।

"परेश भूषण··· पत्रकार" मेरी ओर उँगली से इशारा करते हुए अग्रवाल साहब ने महिला से कहा। पहली मुलाकात में कोई ऐसी हरकत करता है? किसी आदमी का सरेआम ऐसे तमाशा कैसे बनाया जा सकता है? मेरे भीतर रेंगते यह सवाल अब पूरे तौर पर कुलबुलाने लगे थे। क्या बेहूदगी है···जान न पहचान···हे भगवान्···! कहाँ फँसाया··· ? कौन है यह पागल शख्स? क्या करूँ इसका?

"अरे भाई साहब, बड़े आभारी हैं हम तो आपके, नमस्कार··· नमस्कार···" अब महिला ने अग्रवाल साहब के सुर में सुर मिलाना शुरू कर दिया।

हे भगवान्! क्या सीधे आगरा के पागलखाने से आ रहे हैं? अपने आप से यह सवाल पूछने के साथ ही मैंने तय भी कर लिया था कि केस खराब है। साथ ही गले आ पड़ी मुसीबत को लेकर खुद को कोसना भी शुरू कर दिया। लिफाफा विनय को ही दे देता। जान न पहचान···अबे डाल देता विनय की ही जेब में। चाचाजी की जेब के चक्कर में कौन सा तमगा मिल गया? अब इस मुसीबत को भुगत।

कुछ लोगों की निगाह में यह तमाशा आ चुका था। बड़ी भारी विडंबना थी। और उससे भी बड़ी फजीहत। "अरे यह हैं परेश भूषण जी, पत्रकार···" हाथ जोड़े खड़े अग्रवाल साहब महिला से पुनः मुखातिब हुए। महिला भी हाथ जोड़कर बड़ी विनम्रता से बार-बार नतमस्तक हुई जा रही थी। महिला की सारी चेष्टा जापानी गुड़िया की भंगिमा सी लग रही थी। "क्या बवाल गले आ पड़ा··· ?" यह सवाल अब बड़ा हो गया था। जिस लहजे "यही हैं परेश भूषण···" में अग्रवाल साहब महिला को बता रहे थे, उसने आसपास खड़े लोगों की गरदानों का रुख हमारी तरफ कर दिया।

यह बात मेरी समझ से परे थी कि अग्रवाल साहब मेरी इज्जत का जनाजा निकालने पर क्यों आमादा थे? "अरे परेशजी, आप नहीं जानते आपने हमारे साथ क्या सलूक किया।" कहते हुए महिला एक बार फिर वंदन की मुद्रा में आ गई।

मैं पूरे तौर पर अपराध-बोध से ग्रसित हो चुका था। क्या करूँ यह सोच ही रहा था कि राम जी एक बार फिर अवतरित हो गए। इस बार वह एक नौजवान लड़के का हाथ थामे थे। "परेशजी।" कहते हुए उसने अपना हाथ मेरी तरफ बढ़ाया, "मैं विक्की··· आगरा से···।"

मैंने राहत की साँस ली, कम-से-कम इसने तो अग्रवाल दंपती की सी हरकत नहीं की थी।

"विक्की···" याद करने की कोशिश में मैंने नाम दोहराया, लेकिन कुछ याद नहीं आया।

"विक्की सर··· ७ दिसंबर की नाइट···" उसने अपना परिचय देने की कोशिश की।

नहीं··· मुझे याद नहीं, विक्की··· ७ दिसंबर··· मिले थे हम··· कहाँ··· ना··· कुछ याद नहीं··· कुछ नहीं···। चीफ इंजीनियर साहब के बाद अब इस लड़के ने उलझन बढ़ा दी थी। माजरा समझ से बाहर था।

"अंकल जी नमस्ते, मैं रूपाली!" अब बारी थी गुड़िया सी सजी-धजी लड़की की। हाथ जोड़े वह भी पहले वालों की ही मुद्रा दोहरा रही थी।

"कौन रूपाली··· ?" याद करने की कोशिश में अनायास मेरे मुँह से यह निकल ही गया।

"जिसकी शादी करवाई थी आपने!" उसने चहकते हुए कहा।

मामला मेरी सोच से भी अधिक पेचीदा हो गया था।

एक ऐसी लड़की मेरे सामने खड़ी थी, जिसे मैं पहली बार देख रहा था। कह रही है, मैंने उसकी शादी करवाई थी। किसी की शादी करवाने वाला मैं होता कौन हूँ? मेरी समझ में यह तो आ गया था कि जितने भी नमूने अभी तक प्रकट हुए थे, एक ही खानदान से थे। लेकिन एक से बढ़कर एक साबित होंगे, यह देख कर मैं हैरान था। यह लोग किसी गलतफहमी का शिकार हैं। मैं यह सोच ही रहा था कि विक्की ने मेरी दोनों हथेलियाँ अपनी हथेलियों में बाँध लीं। "अंकल आप न होते तो उस दिन रूपाली की शादी नहीं होती।" उसका गला कुछ रुँध सा गया था।

मामला अब भी समझ से परे का था। रूपाली··· शादी··· आगरा···

फोन की घंटी से मेरी नींद भंग हुई। ड्राइंग-रूम का पूरा नक्शा मेरे जेहन में घूम गया। लगा ड्राइंग रूम में ही सो रहा हूँ। नींद शायद पूरे तौर पर खुली नहीं थी। हाथ टेलीफोन की ओर बढ़ गया। "हैलो···" ही कहा था कि दूसरी तरफ से बड़ी घबराई सी आवाज आई, "फूफाजी, यहाँ कर्फ्यू लग गया है, बुआजी चली तो नहीं, उन्हें भेजिएगा मत।"

एक ही साँस में बोले चली जा रही उस आवाज ने ही असल में नींद को तोड़ा था। अहसास हुआ कि ड्राइंग-रूम के दीवान पर नहीं बैडरूम में अपने बिस्तर पर ही हूँ। अपने ही डबलबेड पर। हाथ बढ़ाकर लाइट ऑन की। हाँ, अपने ही बेडरूम में हूँ। लेकिन यह लैंडलाइन फोन, बिस्तर पर? माजरा खुद मेरी समझ में नहीं आया। घड़ी देखी, दो बजा रही थी। रात के। रुकी नहीं है। सेकेंड की सूई दौड़ रही है।

"हेलो···" मैंने आवाज पहचानने की कोशिश की।

"हाँ फूफाजी, मैं बोल रहा हूँ विक्की, यहाँ कर्फ्यू लग गया है, बुआजी को मत भेजिएगा!"

कौन विक्की? मैंने दिमाग पर जोर डाला, नहीं ऐसा कोई नहीं, मैं फूफाजी··· पहली बार किसी ने मुझे फूफाजी कहा था। "कहाँ से?" ऊँघते हुए मैंने पूछ ही लिया।

"मैं विक्की बोल रहा हूँ फूफाजी, आगरा से···।"

"रॉग नंबर···" कहते हुए मैंने फोन काट दिया।

श्रीमतीजी दोपहर की ट्रेन से लखनऊ गई थीं। रात नौ बजे तक पहुँच जाती है काशी विश्वनाथ। लेट भी हो गई होगी तो दस बजे तक पहुँच गई होगी। नींद पूरे तौर पर खुल चुकी थी। इस रॉग नंबर ने चिंता बढ़ा दी थी।

श्रीमतीजी नहीं पहुँची क्या? रात के दो बज रहे हैं, इस समय फोन···? पहुँच गई होगी···। नहीं पहुँचती तो फोन आता···। उसका भाई ही फोन करता महेश। पूरा खबरी लाल है। मिनट-मिनट की खबर देता लेता रहता है। अकेले नहीं भेजना चाहिए था। इस खयाल के साथ बदन में एक सिरहन सी दौड़ गई। ओढ़ी रजाई के भीतर की सारी गरमाहट अचानक गायब हो गई। पूरा शरीर लरज गया। कल ही तो बाबरी मस्जिद गिरी है। कई जगह से कर्फ्यू की खबरें भी आ रही हैं। फोन करूँ क्या? रात के सवा दो बजे फोन करना मुनासिब लगेगा? अरे, बच्ची थोड़े ही है। महेश तो अब तक आसमान सिर पर उठा लेता। सुबह देखेंगे। खुद को तसल्ली देते हुए मैंने खयालों के झंझावात से खुद को मुक्त किया और रजाई तान ली। गरमाहट धीरे-धीरे पाँव पसारने लगी।

फोन की घंटी ने मेरी नींद फिर खोल दी। हेलो कहते ही कानों में फिर वही स्वर पड़ा, "फूफाजी, बुआजी चली तो नहीं?"

"भाई साहब, आपको बात किससे करनी है?"

उधर से उल्टा सवाल हुआ, "आप कहाँ से बोल रहे हैं?"

मैंने बताया, "गाजियाबाद से बोल रहा हूँ"

"गाजियाबाद कहाँ से?"

"कवि नगर से··· भाई आपका रॉग नंबर लग रहा है बार-बार। अब फोन मत कीजिएगा, प्लीज" कहते हुए मैंने फिर रजाई तान ली। बत्ती बहुत देर से जल रही थी शायद। पहली बार बजी घंटी के बाद शायद मैं बत्ती बंद करे बगैर ही रजाई में घुस गया था। बंद अब भी नहीं की थी। कर ही दूँ। स्विच ऑफ करने से पहले नजर घड़ी पर डाली। तीन बजे थे। तसल्ली हुई। अभी तो नींद ले सकता हूँ। खयाल आया कि फोन का चोगा उतारकर रख दूँ। चैन से सोऊँगा। खुद ने ही कहा, नहीं अब नहीं आएगा।"

उसने भी फोन काटने से पहले यही कहा था, "सॉरी अंकल··· सॉरी···!"

चाय की चुस्की के साथ अखबार की सुर्खियों पर नजर दौड़ा रहा था। देश के हालात अच्छे नहीं थे। हे भगवान्! क्या हो रहा है? यही है धर्म? उन्माद, हिंसा, अराजकता? ऐसा धर्म किसने गढ़ा होगा? ट्रिन-ट्रिन ने ध्यान भंग किया। बेड पर रखा फोन बज रहा है। मैं सोचने लगा, फोन यहाँ आया कैसे? रात क्या हुआ? मैंने याद करने की कोशिश की। बंसल साहब की दुकान पर थे रात। वहीं दो-दो पैग पिए गए थे। बात दो पैग की तय हुई थी, लेकिन हो ज्यादा गए थे। हाँ, एक हॉफ तो बाद में आया था।

फोन खामोश हो चुका था। रॉग नंबर ही रहा होगा। लेकिन फोन यहाँ बिस्तर पर आया कैसे? मैं ही लाया? ग्यारह से अधिक का समय था जब मैं लौटा था। कपड़े बदले, खाना खाया। हाँ, यहाँ तक का हिसाब दुरुस्त है। फिर फोन ड्राइंग-रूम से यहाँ तक कैसे आया? शायद मैं ही लाया था। लाया क्यों था? इस सवाल का जवाब नहीं मिल रहा था। इतनी रात को फोन किसे करना था? किसके फोन का इंतजार था?

खूब तसल्ली कर ली, मैं ड्राइंग-रूम में नहीं सोया था, अपने बेडरूम में ही हूँ और फोन बिस्तर पर। तीन कमरों से फोन के तार को पार कराते ड्राइंग-रूम से इसे बेडरूम तक मैं ही ले गया था। छोटे भाई ने टोका भी था शायद। क्यों लाया था यह फोन उठाकर, यह अब भी याद नहीं आ रहा था। श्रीमतीजी? फोन करूँ क्या?

फोन की घंटी बज रही है। उठा लूँ? रॉग नंबर हुआ तो? तो क्या?

"फूफाजी बोल रहे हैं आप?" शांत स्वर, बेहद शालीन।

नहीं कहते-कहते रुक गया मैं। "हुआ क्या···" मेरे मुँह से यही निकला। परेशान है बेचारा। रात भर से नंबर लगा रहा है। नंबर नहीं लग रहा।

"विक्की बोल रहा हूँ सर, आगरा से। बहन की शादी है सर··· शाम को। यहाँ आगरा में कर्फ्यू लग गया है। तमाम रिश्तेदारों को फोन कर मना कर रहा हूँ। लड़के वालों ने भी बारात लाने से मना कर दिया है। सॉरी सर, फोन फिर आपको लग गया।"

"कोई बात नहीं, होता है। कहाँ रहते हैं आपके रिश्तेदार? मैं खबर कर दूँगा उन्हें, एड्रेस बताइए।" मैं लड़के की परेशानी समझ रहा था। कागज-कलम उठाकर मैंने एड्रेस नोट किया। कोई भगवान दास गुप्ताजी थे शास्त्री नगर के।

मुझे लगा, लड़का बहुत आहत है, परेशान भी है बेचारा, थोड़ी तसल्ली ही दे दूँ। लिहाजा पूछ बैठा, "कब है शादी?"

"आज ही आनी थी बारात सर!" एक गमजदा भाई का बुझा सा स्वर था।

"हो जाएगी शादी, घबराओ मत।" अचानक मेरे मुँह से निकला। मुझे याद आया, डीएम आगरा परिचित हैं अपने। गाजियाबाद से ही ट्रांसफर होकर आगरा गए हैं। टेलीफोन नंबर की डायरी में उनका नंबर भी टटोल लिया इस बीच मैंने।

"अब कैसे हो जाएगी सर! यहाँ तो कर्फ्यू लगा है।"

"हो जाएगी।" मेरे भीतर से ही कोई बोल रहा था।

"कैसे?"

"एक नंबर नोट करो, डीएम आगरा का नंबर है। मेरा नाम लेकर उन्हें अपनी परेशानी बताना, मैं भी बात करता हूँ उन से। मेरे ही नामराशि हैं··· भले आदमी हैं। ईश्वर ने चाहा तो आज ही होगी शादी। बारात कहाँ से आनी है?" लड़के से बात करना अच्छा लगने लगा मुझे।

"ग्वालियर से।" उधर से आवाज आई

"सबसे पहले मेरा नंबर नोट करो। अभी तक तुम रॉग नंबर लगा रहे हो, मैं भी कहता हूँ उनसे।"

"यह रूपाली के पति हैं।"

शहनाई की गूँज के साथ कानों में पड़े इस स्वर से मेरी तंद्रा टूटी। रूपाली की मुसकराहट में एक अजीब सी कशिश थी। एकटक मुझे देख रही उसकी आँखों में तैर रहा था कुछ। अपडेट लिया था मैंने उसी शाम। रंजन जी ने बताया था विस्तार से खुश होकर। कर्फ्यू पास, गैस सिलेंडर, बस से लेकर सुरक्षा की सारी व्यवस्था कर दी गई थी। रूपाली खड़ी है सामने मेरे। नहीं जानता इसे मैं। कौन है? कोई तो है कर्ज बाकी था क्या इसका कोई मुझ पर?

रूपाली की मुसकराहट मुझे अच्छी लगी। मैंने भी हाथ जोड़कर उसके पति का अभिवादन स्वीकार किया।

रूपाली ने थैंक यू अंकल ही कहा था, न जाने मेरी आँखें क्यों नम हो गईं? ७ दिसंबर की उस रात का पूरा मंजर मेरी आँखों में धुँधलाता सा तैरने लगा। कोई आहट थी क्या? किसका फोन आने वाला था उस दिन?

एफ/ई-७ कवि नगर,
गाजियाबाद-२०१००२
दूरभाष : ७८४००५२७७७
media360literaryfoundation@gmail.com

लघुकथा

चतुर खिलाड़ी और जज्बात

● **लता कादंबरी गोयल**

क्रिकेट स्टेडियम के कोने में पड़ी तथा धूल-गरदा खाई बॉल से वहीं सामने की जमीन पर पड़ा हुआ इनसानी जज्बात, कुछ करुण हृदय होता हुआ बोला, ''ऐसे अलग-थलग, गंदगी से भरे, सीले कोने में क्यों पड़े हुए हो, दोस्त?'' बात को आगे बढ़ाते हुए फिर से बोला, ''पिछली बार जब हम मिले थे, तब कैसे गोलू-मोलू तथा गोरे-चिकने लग रहे थे तुम। पर तुम्हारी यह दुर्दशा देखकर आज मुझे तुम पर बहुत तरस आ रहा है।''

अपनी नियति के अनुसार वो कुछ इधर लुढ़का, फिर कुछ उधर लुढ़का। जैसे-तैसे हिम्मत करते हुए जज्बात के नजदीक आकर धीमे से फुसफुसाया, ''देखो, किसी से कहना नहीं, मेरी यह दुर्दशा इन नादान खिलाड़ियों के द्वारा बल्ले से मुझे बार-बार पीटने के कारण हुई है।'' तभी कुछ आश्चर्य करता हुआ बॉल पूछ बैठा, ''पर यह बताओ दोस्त कि इतने भावपूर्ण तुम जज्बात की यह दुर्दशा भला क्यों हुई? तुम तो उदार मनों के दिल के सिंहासन के शासक हो, पर आज तुम्हें यहाँ उपेक्षित पड़ा देख मुझे सचमुच बहुत कष्ट हो रहा है। जहाँ तक मेरा सवाल है, यह तो मेरा प्रारब्ध था, तो तुम ही बताओ कि मैं इसके लिए क्या दु:ख मनाऊँ? पर तुम इस सीलन भरे तहखाने में? दम न घुटता होगा तुम्हारा?"

इतना अधिक अपनत्व पाकर आखिरकार जज्बात बोल ही पड़ा— ''मेरे जैसे न जाने कितने जज्बात आज इधर-उधर पड़े हुए हैं भाई। जिनको पूछने वाला अब कोई नहीं है। सच तो यह है कि संकुचित होते हुए दिलों ने मेरे रहने के लिए जगह ही कहाँ बची है, तो मैंने सोचा, इससे पहले कि कोई चतुर खिलाड़ी आए और मुझसे खेलकर फिर से चला जाए, यह बात अब मुझसे बरदाश्त न होगी। अत: थोड़ा-मोड़ा अपने वजूद को बचाए रखने के लिए अकेला ही पड़ा रहूँ तो ही अच्छा है।''

यह बात सुन आज गेंद एक अलग ही अनुभव से गुजर गया था। व्यंग्यात्मक मुसकान लिये खिसियाई हँसी के साथ बोला, ''वाह दोस्त! देख रहा हूँ कि जो तेरा हाल वो मेरा हाल, फिर भी तो जो तेरे साथ लोगों को खेलने में मजा आता है, वो मेरे साथ कहाँ?'' एक गहरी साँस लेते हुए किसी संत के माफिक बोला, ''यही तो हैं जीवन की विडंबनाएँ।''

सन् १९९८ से आर्किटेक्चर फर्म कर्वे गुंजाल ऐंड एसोसिएटेड के साथ एक इंटीरियर डिजाइनर की हैसियत से कार्यरत। सन् १९९७ में पति राकेश गोयल के साथ मिलकर कादंबरी ज्वैलर्स की स्थापना की। सेवा संस्थान काकादेव कानपुर की फाउंडर ट्रस्टी, डायरेक्टर और सिलाई केंद्र संचालिका। उ.प्र. के राज्यपाल द्वारा पुरस्कृत; साहित्य वाचस्पति सम्मान तथा दैनिक जागरण, कानपुर में लोकपाल की पदवी से सम्मानित।

७/२०२, स्वरूप नगर, कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७६०७३४५६७८

नए क्षितिज बुलाते हैं...

लेखिका की आक्रोश भरी शिकायत बिलकुल उचित थी। उन्होंने फौजियों के परिवारों को केंद्र में रखकर उपन्यास लिखा है। उनकी शिकायत थी कि हिंदी में इतने लेखक-लेखिकाएँ हैं, सैकड़ों उपन्यास प्रकाशित होते हैं किंतु किसी का भी ध्यान लाखों फौजियों के परिवारों की पीड़ा पर क्यों नहीं जाता? मेरा एक छोटा सा जवाब यही था कि चूँकि फौज की दुनिया बिलकुल अलग है, सुरक्षा कारणों से बहुत सी बातें बाहर भी नहीं आ पातीं, इसलिए लेखकों का उधर ध्यान नहीं जा पाता।

लेखिका का कहना था कि बेशक फौज की बातें आम लोगों तक नहीं पहुँच पातीं किंतु आए दिन सरहद से शहीदों की मृत देह आती है, चैनल वाले टी.आर.पी. के लिए देशभक्ति जगाते हैं किंतु शहीद के परिवार की पीड़ा पर लेखकों का ध्यान क्यों नहीं जाता? उनकी बात, उनका आक्रोश, उनकी शिकायत पूरी तरह सही थी। हिंदी में यों तो गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' में फौज एवं युद्ध है किंतु वह एक प्रेमकथा है। छिटपुट कहानियाँ अवश्य लिखी गई हैं, जिनमें फौजियों के परिवारों की पीड़ा आंशिक रूप से मिल जाती है। 'कोर्ट-मार्शल' नाटक भी फौजी पृष्ठभूमि पर है किंतु उसका कथ्य अलग है। सिनेमा जगत् में 'हकीकत', 'प्रेमपुजारी' या 'बॉर्डर' जैसी फिल्में बनी हैं किंतु वहाँ भी फौजियों के जीवन से अधिक युद्ध की विभीषिका, देशप्रेम आदि पर अधिक जोर रहा है। कवि-सम्मेलन के मंचों पर भी वीर रस के कवि सैनिकों की शहादत पर कविताएँ सुनाते हैं किंतु वहाँ भी देशप्रेम और भावुकता परोसने पर ही जोर रहता है। फौजियों के परिवारों पर कैसी-कैसी विपत्तियाँ टूटती हैं, उन्हें किस-किस तरह की चुनौतियों से, समस्याओं से गुजरना पड़ता है, वह प्राय: सामने नहीं आ पाता।

भारत का गौरव बढ़ाने वाले उस खिलाड़ी की दास्तान कौन भूल सकता है, जो फौज में देशसेवा में जुटा है और गाँव में दबंग उसकी खेती हथिया लेते हैं, उसके परिवार को तरह-तरह से उत्पीड़ित करते हैं और वह इतना प्रतिभावान खिलाड़ी बागी (डाकू) बनने पर विवश हो जाता है। पुलिस प्रशासन भी इस परिवार की कोई सहायता नहीं करता। फौजियों के परिवार के जीवन पर केंद्रित 'कितने मोर्चे' उपन्यास की लेखिका के प्रश्न पर हमें एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में सोचना होगा। हिंदी साहित्य को यदि विश्व की अन्य भाषाओं के साहित्य के साथ कदम मिलाकर चलना है तो फिर उसमें एक व्यापक परिवर्तन की भी पहल करनी पड़ेगी। केवल लाखों फौजियों के परिवारों की ही बात नहीं है; अभी कितने ही ऐसे क्षेत्र हैं, जहाँ लेखकों का कम ध्यान गया है तथा हमें कोई सार्थक-सटीक उपन्यास खोजने पर भी नहीं मिलेगा। कुछ उदाहरणों पर गौर करते हैं। खेलों की एक विराट् दुनिया है। लाखों खिलाड़ी हैं, उनके सपने हैं, उनका संघर्ष है, आगे बढ़ने के लिए जद्दोजहद है, खेल संघों की अपनी राजनीति है, उठा-पटक है। खिलाड़ियों ने आत्महत्याएँ भी की हैं, सड़कों पर भीख भी माँगी है, जिनके नाम पर दिल्ली के खेलगाँव में 'पत्थर' है, मकानों का 'ब्लॉक' है, वे स्वयं पुरानी दिल्ली में छोले बेचते रहे।

महिला खिलाड़ियों की अपनी दर्दनाक एवं शर्मनाक शोषण वाली कहानियाँ हैं किंतु इंदौर के दवेजी के एक उपन्यास के अलावा कोई बड़ा उपन्यास ध्यान में नहीं आता। हर साल हजारों बच्चे अकाल मौत मरते हैं, करोड़ों बच्चे शिक्षा से वंचित हैं, बाल-श्रमिक का जीवन गुजार रहे हैं किंतु बच्चों की पीड़ा पर केंद्रित कोई उपन्यास ध्यान नहीं आता। विज्ञान उपन्यास, विज्ञान कहानियाँ एक-दो लेखकों के दम पर ही टिकी हैं; वैज्ञानिकों के जीवन पर कोई सार्थक उपन्यास ध्यान में नहीं आता। पर्यावरण का क्षेत्र हो तो 'मरंगगोड़ा नीलकंठ हो गया' जैसे एक-दो उपन्यास ही याद आते हैं। कितने ही क्षेत्र हैं, जहाँ हिंदी लेखकों का ध्यान नहीं पहुँचा है। विश्व की अनेक भाषाओं में प्राय: हर क्षेत्र पर आपको सार्थक कृतियाँ मिल जाएँगी। यह भी सच है कि चूँकि वहाँ पूर्णकालिक लेखक हैं, उन्हें भरपूर रॉयल्टी और सम्मान मिलता है, लाखों पाठक मिलते हैं तो वहाँ लेखन कार्य आसान हो जाता है, लेखक खूब शोध भी करते हैं।

हिंदी में किताबों की बिक्री एक कठिन प्रश्न बना हुआ है। यह भी सच है कि सार्थक लेखन समाज में बदलाव की दिशा तय करता है। 'किन्नरों' पर कुछ सार्थक उपन्यास लिखे गए तो आज सरकारों, न्याय-व्यवस्था के बदले हुए रुख का भी उदाहरण हमारे सामने है। निश्चय ही चित्राजी का 'नालासोपारा' हो या कुछ और लेखकों की कृतियाँ हों, जैसे 'तीसरी ताली' आदि साधुवाद की हकदार हैं। इसमें भी संदेह नहीं है कि जब किसी अनूठे, अनछुए विषय पर कोई कृति आती है तो उसका स्वागत भी होता है, उसे भरपूर पाठक भी मिलते हैं। सीमा सुरक्षा बल में उच्च अधिकारी रहे एक कवि ने अपने मार्मिक अनुभवों को कविताओं में पिरोया और उनके दो कविता-संग्रह प्रकाशित हुए। उनके संग्रहों के १५ भाषाओं में अनुवाद हुए हैं, उनके कई संस्करण भी हुए हैं और हजारों प्रतियाँ बिकी भी हैं। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि वे न तो कवि-सम्मेलनों में भाग लेते रहे, न चैनलों पर, न ही बहुत पत्र-पत्रिकाओं में छपे किंतु उनकी कविताओं में एक अलग अनूठा अनुभव-संसार था; मानवीय संवेदनाएँ थीं तो उन्हें तदनुरूप सफलता भी मिली। हिंदी का कल्याण हिंदी सप्ताह, हिंदी पखवाड़ा मनाने से नहीं होने वाला है। उसमें ज्ञान-विज्ञान की सामग्री कितनी है, उसका साहित्य कितना प्रासंगिक है, व्यापक है, वैविध्यपूर्ण है, स्तरीय है, सार्थक है, विश्व की अन्य भाषाओं की तुलना में कितना सामर्थ्यवान है, इस पर ही हिंदी का उत्थान तथा भविष्य अधिक निर्भर है। हिंदी के लेखक यदि हिंदी की पुकार सुनेंगे तो निश्चय ही सुखद परिणाम श्रेष्ठ कृतियों के रूप में हमारे सामने आएँगे।

अलविदा २०२०

आखिरकार सन् २०२० का अंतिम महीना आ गया। सन् २०२० को भारत क्या, विश्व का कोई भी देश एक भयानक दु:स्वप्न की तरह भुलाना ही श्रेयस्कर मानेगा। हालाँकि इस वर्ष ने करोड़ों इनसानों के जीवन में जो अमिट घाव दिए हैं, उनके मद्देनजर ऐसा संभव नहीं है। सुई की नोक से भी लघु आकार के वायरस ने एक से बढ़कर एक महान् वैज्ञानिक उपलब्धियों पर गर्व से फूले नहीं समा रहे मनुष्य को प्रकृति के सामने कितना बौना साबित कर दिया। बेतहाशा तेज गति से दौड़ रही दुनिया यकायक ठप हो गई। जेट विमान अपने पंख सिकोड़कर चुपचाप सहमे-सहमे खड़े रहने को विवश हो गए। हर समय दौड़ता-भागता मनुष्य घरों में कैद हो गया। लोग अपने प्रियजनों से बिछुड़ने को विवश हो गए। माँ अपने बेटों से दूर, बेटे-बेटियाँ कहीं दूर देश में, दूर प्रदेश में, दूर नगर में अनजाने ही फँसकर रह गए। लोग अपने प्रियजनों के अंतिम दर्शन तक नहीं कर सके। कितने दुख, कितनी पीड़ाएँ, कितने आँसू, कितनी आहें, कैसी-कैसी विवशताएँ···। लोगों के रोजगार छिने, पेट पालने के लिए छोटे-मोटे काम के लिए सड़कों पर उतरे। लाखों मजदूर बेबस होकर पैदल ही घरों, गाँवों को चल दिए। रास्ते में ट्रेन, ट्रक आदि से कुचलकर मरे। भूख और थकान के दृश्यों ने दिल दहला दिए। ऐसे में सेवा, परोपकार और इनसानियत की मिसाल बने दृश्य भी भरोसा दिलाते रहे। जब लोग घरों में कैद हुए और मेल-मिलाप समाप्त हो गया तो इनसान की जिजीविषा ने विज्ञान प्रौद्योगिकी के सहारे 'ऑनलाइन' का रास्ता खोज निकाला। अपने प्राणों का बलिदान देकर डॉक्टर व स्वास्थ्यकर्मी जीवन रक्षा में डटे रहे। इसी प्रकार अन्य क्षेत्रों में भी लोग पूरी मुस्तैदी से डटे रहे। महामारियाँ सदियों से आती रही हैं। हर बार मनुष्य उनसे उबरकर नई दुनिया गढ़ता रहा है। यह महामारी भी तमाम नुकसान करने के बावजूद हमारे संकल्पों को, हमारी जिजीविषा को, हमारे जीवन की गति को राके नहीं पाएगी। हाँ, कुछ सबक हम सबको अवश्य सीखने होंगे। प्रकृति के अनावश्यक दोहन और उससे उपजे प्रकोप से बचना होगा।

भारत के संदर्भ में २०२० एक विशेष संदेश देता है। हमारे महान् वैज्ञानिक एवं पूर्व राष्ट्रपति ने २०२० तक 'विकसित भारत' का स्वप्न प्रस्तुत किया था और एक पूरी कार्य योजना भी सुझाई थी, प्रगति का मानचित्र भी प्रस्तुत किया था। किसी को कल्पना भी नहीं थी कि सबकुछ उलट-पुलट जाएगा! वर्षों की एक-एक सीढ़ी पार कर आई प्रगति को ऐसा आघात पहुँचेगा!

अब हम सब मिलकर संकल्प करें कि २०२१ एक नई सुबह, नया उजाला लेकर आए, महामारी से मुक्ति मिले; आशंका, भय, घबराहट के बादल छंटें, जीवन वापस पटरी पर लौटे, प्रगति और विकास का नया अध्याय शुरू हो। जाने-अनजाने जो विकृतियाँ हमारे जीवन में घुलमिल गईं थीं, उनसे हम स्वयं मुक्ति पाने का प्रयास करें। एक संतुलित पारिवारिक जीवन की ओर वापसी हो, जहाँ पुराने भारतीय जीवन-मूल्य प्रतिष्ठित हों। कोरोना ने हमें यह सीखने को विवश कर ही दिया है कि थोड़े साधनों में भी चैन से जिया जा सकता है। गलाकाट होड़, हवस, छीना-झपटी, जबरन सुख-सुविधाएँ जुटाने का पागलपन सिवाय अशांति और अपराध के कुछ नहीं देता। भारत एक बार फिर अपनी बुनियादी समस्याओं निरक्षरता, भुखमरी, गरीबी, बेकारी, बीमारी, अंधविश्वास, भेदभाव, शोषण, दमन, अन्याय आदि से जूझकर फिर उसी 'विकसित भारत' के स्वप्न की ओर लौटे, जो २०२० के लिए देखा गया था।

नमन मृदुला सिन्हाजी

यह संपादकीय लिखते-लिखते एक अत्यंत दु:खद घटना हो गई। 'साहित्य अमृत' के प्रकाशन के समय से ही जुड़ी रहीं वरिष्ठ साहित्यकार व समाजधर्मी श्रीमती मृदुला सिन्हा का हृदयाघात से १८ नवंबर को स्वर्गवास हो गया। वे एक लेखिका होने के साथ समाज-सुधारक व मानवीय मूल्यों की स्थापना की प्रबल समर्थक थीं। उनकी लेखनी सदैव समाज को शिक्षा देती रही। उनका जाना एक संवेदनशील विभूति का जाना है, जिसकी कमी हमेशा खलती रहेगी। उनकी पावन स्मृति को नमन।

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

पुण्यतिथि (१९ दिसंबर) पर विशेष

जो अनुपम था, कोई उसे ढूँढ़ो

● अरुण तिवारी

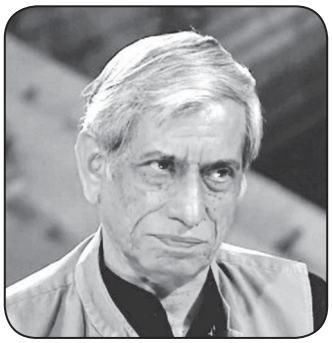

जब देह थी, तब अनुपम नहीं; अब देह नहीं, पर अनुपम हैं। आप इसे मेरा निकटदृष्टि दोष कहें या दूरदृष्टि दोष; जब तक अनुपमजी की देह थी, तब तक मैं उनमें अन्य कुछ अनुपम न देख सका, सिवाय नए मुहावरे गढ़नेवाली उनकी शब्दावली, गूढ़-से-गूढ़ विषय को कहानी की तरह पेश करने की उनकी महारत और चीजों को सहेजकर सुरुचिपूर्ण ढंग से रखने की उनकी कला के। डाक के लिफाफों से निकाली बेकार गांधी टिकटों को एक साथ चिपकाकर कलाकृति का आकार देने की उनकी कला ने उनके जीते-जी ही मुझसे आकर्षित किया। दूसरों को असहज बना दे, ऐसे अति विनम्र अनुपम व्यवहार को भी मैंने उनकी देह में ही देखा।

कुरसियाँ खाली हों, तो भी गांधी शांति प्रतिष्ठान के अपने कार्यक्रमों में हाथ बाँधे एक कोने खड़े रहना; कुरसी पर बैठे हों, तो आगंतुक को देखते ही कुरसी खाली कर देना। किसी के साथ खड़े-खड़े ही लंबी बात कर लेना और फुरसत में हों, तो भी किसी के मुँह से बात निकलते ही उस पर लगाम लगा देना। श्रद्धावश पर्यावरण संबंधी पुस्तक भेंट करने आए एक प्रकाशक को अनुपमजी ने यह कहकर तुरंत लौटाया कि उन्हें पुस्तक देने से उसका कोई मुनाफा नहीं होनेवाला।

अरवरी गाँव समाज के संवाद पर आधारित 'अरवरी संसद्' किताब छपकर आई, तो उन्होंने कहा, "इसे रंगीन छापने की क्या जरूरत थी?"

उन्होंने इसे पैसे की अनावश्यक बरबादी माना। वहीं गँवई कार्यकर्ताओं की बाबत तरुण भारत संघ के राजेंद्र भाई से यह भी कहते भी सुना, "पैसा आए तो कभी कार्यकर्ताओं को घुमाने ले जाओ। खूब बढ़िया खिलाओ-पिलाओ। दावत करो।" कार्यकर्ताओं पर किए खर्च को वह पैसे की बरबादी नहीं मानते थी। कभी यह सब उनकी स्पष्टवादिता लगता था, कभी साफ दृष्टि, कभी सहजता और कभी विनम्रता। पत्रकार श्री अरविंद मोहन ने ठीक लिखा कि कभी-कभी संपर्क में आनेवाले को यह उनका बनावटीपन भी लग सकता था।

देह के बाद सिखाते अनुपम

'नमस्कार' और 'कैसे हो?' जब तक देह थी, अनुपमजी ने इससे आगे मुझसे कभी नहीं बात की। न मालूम क्यों, उनके सामने मैंने भी अपने को हमेशा असहज ही पाया। अब देह नहीं, तो अनुपमजी से लगातार संवाद हो रहा है। उनके सम्मुख अब मैं लगातार सहज हो रहा हूँ। अब अनुपमजी मुझे लगातार सिखा रहे हैं, व्यवहार भी और भाषा भी। उनकी देह के जाने के बाद पुष्पाजंलियों और श्रद्धांजलियों ने सिखाया। देह से पूर्व और पश्चात् अनुपमजी के प्रति जगत् का व्यवहार भी किसी पाठशाला से कम नहीं।

भाषा का गांधी मार्ग

बकौल अनुपम "हिंसा भाषा की भी होती है। भाषा भ्रष्ट भी होती है।...गांधी मार्ग की भाषा ऐसी होनी चाहिए, जिसमें न बेवजह का जोश दिखे और न ही नाहक का रोष।"

इससे पता चला कि भाषा का भी अपना एक गांधी मार्ग है। जाहिर है कि हिंसामुक्त-सदाचारी भाषा गांधीवादी लेखन का प्राथमिक कसौटी है। स्वयं को गांधीवादी लेखक कहने से पहले किसी को भी अपने लेखन को भाषा की इस कसौटी पर कसकर देखना चाहिए। मैं और मेरा लेखन इस कसौटी पर एकदम खोटे सिक्के के माफिक हैं। संभवत: यही वजह रही कि अनुपमजी ने कभी मेरी किसी रचना की न आलोचना की, न ही सराहा और न ही किसी पत्र का कभी उत्तर दिया।

भाषा का मन्ना मार्ग

अनुपमजी के नहीं रहने पर आयोजित आख्यानों में से एक में बोलते हुए अनुपम परिवार की रागिनी नायक ने कानपुर के यशस्वी कवि यश मालवीय की पंक्तियों में समय का संदेश याद दिलाया—

"दबे पाँव उजाला आ रहा है।
फिर कथाओं को खँगाला जा रहा है।
धुंध से चेहरा निकलता दिख रहा है।
कौन क्षितिजों पर सवेरा लिख रहा है।"

अनुपमजी में जो अनुपम था, मैं उसे खँगालने में लग गया। मैंने पाया कि जब तक देह रही, अनुपम पानी लेख खासम-खास पर प्रतिष्ठित रहे। देह जाने के बाद अब उनका लगातार विस्तार हो रहा है; अनुपम साहित्य अब और अधिक देखने को मिल रहा है। अनुपमजी की प्रकाशित पुस्तकों की संख्या १७ है। 'मन्ना : वे गीत फरोश भी थे' साफ माथे का समाज से लिया, यह लेख पढ़ रहा हूँ, तो कह सकता हूँ कि अनुपमजी ने अनुपम लेखन और व्यवहार के गुणसूत्र पिता भवानी भाई और उनकी कविताओं से ही पाए थे।

"जिस तरह तू बोलता है, उस तरह तू लिख

और उसके बाद मुझसे बड़ा तू दिख।"
"कलम अपनी साध,
और मन की बात बिल्कुल ठीक कह एकाध।"
"यह कि तेरी भर न हो, तो कह,
और बहते बने सादे ढंग से तो बह।"

मन्ना यानी पिता भवानीशंकर मिश्र को याद करते हुए अनुपमजी ने उक्त पंक्तियों का विशेष उल्लेख किया है। उक्त पंक्तियों के जरिए भाषा और व्यवहार तक के चुनाव का जो परामर्श भवानी भाई ने दिया, अब लगता है कि अनुपमजी ने उनका अक्षरश: पालन किया। अनुपमजी ने पर्यावरण जैसे वैज्ञानिक विषय पर अपने व्याख्यान भी ऐसी शैली में दिए, मानो जैसे कोई कविता कह रहे हों; नदी से बह रहे हों। इसीलिए वह अपने साथ दूसरों को बहाने में सफल रहे।

लेखन का समाज मार्ग

बाजार से कागज खरीद कर लाने की बजाय पीठ कोरे पन्नों पर लिखना; खूब अच्छी अंग्रेजी आते हुए भी उनके दस्तखत, खत-किताबत सबकुछ बिना किसी नारेबाजी के···आंदोलन के हिंदी में करना; ये सब के सब संस्कार अनुपमजी को मन्ना से ही मिले। अनुपमजी खुद लिखते हैं कि कविता छोटी है कि बड़ी है, टिकेगी या पिटेगी; मन्ना को इसमें बहुत फँसते हमने नहीं देखा। अनुपमजी का लिखा देखें, तो कह सकते हैं कि उनका लेखन भी टिकने या पिटने के चक्कर में कभी नहीं फँसा। उन्होंने जो लिखा, उसमें आईने की तरह समाज को आगे रखा। यदि मन्ना के गीत ग्राहक की मर्जी से बँधे नहीं थे, तो ग्राहक की मर्जी से बँधना तो अनुपमजी का भी स्वभाव नहीं था। कई वजाहत में शायद यह एक वजह थी कि अनुपमजी जो लिख पाए, वह दूसरों के लिए अनुपम हो गया।

"मूर्ति तो समाज में साहित्यकार की ही खड़ी होती है, आलोचक की नहीं।"

अनुपमजी द्वारा भवानी भाई की किसी कविता का पेश यह भाव एक ऐसा निष्कर्ष है, जो पत्रकार और साहित्यकार के बीच के भेद और उनके लिखे के समाज पर प्रभाव का आकलन सामने रख देता है। इस आकलन को सही अथवा गलत मानने के लिए हम स्वतंत्र हैं और उसके आधार पर अपने कौशल और प्राथमिकता सामने रखकर यह तय करने के लिए भी कि हमें लेखन की किस विधा में अपनी कितनी ऊर्जा लगानी है।

राजरोग का विकास मार्ग

देह बिन अनुपम अब मुझे एक और भूमिका में दिखाई दे रहे हैं; एक दूरदृष्टा रणनीतिकार की भूमिका में। उत्तर प्रदेश में भाजपा की सरकार बनी, तो केन-बेतवा नदी जोड़ बनने की संभावना पूरी मानी जा रही थी। पानी कार्यकर्ता पूछ रहे थे कि अब क्या करें? विकास के नाम पर समाज और प्रकृति विपरीत शासकीय पक्षधरता से क्षुब्ध कई नामी संगठन इस विकल्प पर भी बार-बार विचार करते दिखाई दे रहे थे कि वे खुद एक राजनीतिक दल बनाएँ; ताकि देश की त्रिस्तरीय जनप्रतिनिधि सभाओं में ज्यादा-से-ज्यादा जगह घेरकर समाज व प्रकृति अनुकल कार्यों के अनुकूल नीति व निर्णय करा सकें।

ऐसे में अनुपमजी के लिखे ने आगाह किया, "अच्छे लोग भी जब राज के करीब पहुँचते हैं, तो उन्हें विकास का रोग लग जाता है; भूमंडलीकरण का रोग लग जाता है। उन्हें भी लगता है कि सारी नदियाँ जोड़ दें, सारे पहाड़ों को समतल कर दें, तो बुलडोजर चलाकर उनमें खेती कर लेंगे।"···इसका सबसे अच्छा उदाहरण रामकृष्ण हेगड़े का है। कर्नाटक में ३७ साल पहले बेड़धी नदी पर एक बाँध बनाया जा रहा था। किसानों को इस बाँध बनने से उनकी खेती का चक्र नष्ट हो जाने की आशंका हुई। उन्होंने इसका विरोध किया। कर्नाटक के किसानों ने संगठन बनाकर सरकार से कहा कि वे उन्हें इस बाँध की जरूरत नहीं है। संपन्नतम खेती वे बिना बाँध के ही कर रहे हैं और इस बाँध के बनने से उनका सारा चक्र नष्ट हो जाएगा। रामकृष्ण हेगड़े उस आंदोलन के अगुवा बने। पाँच साल तक वह इस आंदोलन के एकच्छत्र नेता रहे। बाद में वह राज्य के मुख्यमंत्री बने। बाँध बनने के बाद हेगड़े खुद बेड़धी बाँध के पक्ष में हो गए। उन्हें भी राजरोग हो गया।"

सुपरिचत लेखक। ९५ पुस्तकों का संपादन/लेखन–जलयात्रा, अरवरी संसद्, डॉग का पानी, जहाज तुम बहती रहना, अथश्री हिंडन कथा, गंगा जनादेश, गंगा क्यों बने एक राष्ट्रीय नदी प्रतीक, गंगा ज्ञान आयोग, सिर्फ स्नान नहीं है कुंभ, क्यों नहीं नदी जोड़, हम होंगे कामयाब, सार संक्षेप, पंच परमेश्वर, चुनाव जन-जागरूकता अभियान मागदर्शिका, स्वामी सानंद का आत्मकथ्य, भारतीय संस्कृति में नदी : विज्ञान व व्यवहार।

राजरोग का चिकित्सा मार्ग

मैंने पूछा कि ऐसे में एक कार्यकर्ता की भूमिका क्या हो? अनुपमजी ने नदी जोड़ को राजरोगियों की खतरनाक रजामंदी कहा। आवाज दी कि इस रजामंदी के बीच हमारी आवाज दृढ़ता और संयम से उठनी चाहिए। जो बात कहनी है, वह दृढ़ता से कहनी पड़ेगी। प्रेम से कहने के लिए हमें तरीका निकालना पड़ेगा।

"देखो भाई, प्रकृति के खिलाफ हो रहे अक्षम्य अपराधों को न तो क्षमा नहीं किया जा सकता है और न ही इसकी कोई सजा दी जा सकती है। नदी जोड़ना, विकास की कड़ी में सबसे भयंकर दरजे पर किया जानेवाला काम होगा। इसे बिना कटुता जितने अच्छे ढंग से समझ सकते हैं, समझना चाहिए। नहीं तो कहना चाहिए कि भाई अपने पैर पर तुम कुल्हाड़ी मारना चाहते हो तो मारो; लेकिन यह निश्चित ही पैर-कुल्हाड़ी है। ऐसा कहनेवालों के नाम एक शिलालेख में लिखकर दर्ज कर देना चाहिए। और कुछ विरोध नहीं हो सके, तो किसी बड़े पर्वत की चोटी पर यह शिलालेख लगा दें कि भैया आनेवाले दो, सौ सालों तक के लिए अमर रहेंगे ये नाम। इनका कुछ नहीं किया जा सका।"

अनुपमजी ने यह भी कहा, "हमें अब सरकार का पक्ष समझने की कोई जरूरत नहीं है। उसे समझने लगे, तो ऐसी भूमिका हमें थका देगी। हम कोई पक्ष नहीं जानना चाहते। हम कहना चाहते हैं कि यह पक्षपात है देश के साथ, देश के भूगोल के साथ, इतिहास के साथ; इसे रोकें।"

इस वक्त भी सरकार का पक्ष समझने की भूमिका ने देश के कई लोगों को सचमुच थका दिया है। लिखते, कहते···प्रेम की भाषा में प्रतिरोध करते हुए भी काफी समय बीत गया। बकौल अनुपम, जब राज हाथ से जाता है, तो यह रोग अपने आप चला जाता है। हेगड़े के पाला बदलने के

बावजूद किसान आंदोलन चलता रहा। हेगड़े का राज चला गया। राजरोग भी चला गया। आंदोलन के कारण वह बाँध आज भी नहीं बन सका है। राजरोग से निपटने का आखिरी तरीका यही है।

अच्छे विचारों की हिमायत का संदेश

भारतीय ज्ञानपीठ ने हाल ही में अनुपमजी के व्याख्यानों को प्रकाशित किया है। पुस्तक का शीर्षक है, 'अच्छे विचारों का अकाल'। व्याख्यानों के चयन और प्रस्तुति का दायित्व निभा राकी गर्ग ने बता दिया है कि अच्छे विचारों के हिमायती सदैव रहते हैं, देह से पूर्व भी, पश्चात् भी। अकाल से भयंकर होता है, अकाल में अकेले पड़ जाना। अत: देह के बाद अनुपम मिश्रजी के इस संदेश को कोई सुने, न सुने; यदि अच्छा लगे तो हम सुनें; कहना शुरू करें; कहते रहें; कहनेवालों के शिलालेख बनाते रहें; इससे अकाल में भी साझा बना रहेगा। अकाल में भी अच्छे विचारों का अकाल नहीं पड़ेगा, तो एक दिन ऐसा जरूर आएगा, जब ऐसे राजरोगियों का राज जाएगा। जाहिर है कि तब राजरोग खुद-ब-खुद चला जाएगा। किंतु यह सब कहते-करते हम यह न भूलें कि कोई भी पतन···गड्ढा इतना गहरा नहीं होता, जिसमें गिरे हुए को स्नेह की उँगली से उठाया न जा सके। हालाँकि व्यवहार की इस सीढ़ी को लगाने की सामर्थ्य सहज संभव नहीं, लेकिन किसी भी गांधी स्वभाव की बुनियादी शर्त तो आखिरकार यही है।

१४६, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर
दिल्ली-११००९२
दूरभाष : ९८६८७९३७९९

लघुकथा

धर्मयुग

● **भगवती लाल सोनी**

संध्या ढल रही थी। अस्ताचल गामी सूर्य, पृथ्वी और आकाश की संधि के निकट था। बस, अब कुछ ही क्षणों में अंधेरा पसरने वाला ही था।

हरिराम के घर पर एक पथिक ने दस्तक दी। और बड़े विनित भाव से कहा—मैं पथिक हूँ। रात्रि होने वाली है। आगे जाना ठीक नहीं है। रात्रि विश्राम आपके यहाँ करना चाहता हूँ। कृपया, मुझे आश्रय प्रदान करें।

हरिराम बड़ी प्रसन्नता पूर्वक बोला—यह तो मेरा सौभाग्य है कि आप का आगमन मेरे गृह पर हुआ। हे, अतिथि देव आप सहर्ष रात्रि विश्राम करें। यह कहकर फिर दोनो बैठकर परस्पर चर्चा करने लगे। अंधेरा घना हो चुका था।

हरिराम भीतर गया। पत्नी से अतिथि के लिए भोजन तैयार करने के लिए कहा। किंतु घर में कुछ भी नहीं था। जो भी था, वह संध्या के भोजन में सब समाप्त हो चुका था। अब क्या करें? हरिराम तो चिंता में डूब गया।

पत्नी बोली—रात्रि हो चुकी है। यदि दिन होता तो मैं कहीं से भी उधार ले आती।

अब क्या करें? हे भगवान्, यह कैसी परीक्षा?

पति-पत्नी दोनों चिंता में डूब गए। आखिर क्या करें?

बहुत ही सोच-विचार के बाद हरिराम को एक उपाय सूझ ही गया।

हरिराम ने पत्नी से कहा—तू एक थाली में पीने का पानी भर दे। और भोजन जैसी थाली लगा दे। मैं अतिथि को बुलाता हूँ।

पत्नी ने ठीक वैसा ही किया। आसन बिछा दिया और पानी से भरी थाली लगा दी। हरिराम पथिक को भीतर बुला लाया और विनम्र होकर कहा—हे अतिथि देव, मेरा आतिथ्य स्वीकार करें, जो उपलब्ध है, इसे ग्रहण करें।

पथिक तो हरिराम की आंतरिक स्थिति समझकर उसके इस आश्चर्यजनक व्यवहार से गद्गद हो गया।

उसने थाली उठाई और उसमें भरा पानी पी लिया। हरिराम की दीन दशा देखकर—पथिक का हृदय भर गया। अश्रु छलक गए। और वह मन ही मन हरिराम को धन्यवाद देने लगा। फिर परस्पर दोनों चर्चा करते-करते सो गए।

प्रात: उठकर पथिक ने कहा—अब, मैं वापस लौट रहा हूँ। मेरी खोज पूर्ण हो गई। जिस मनुष्य की खोज करने निकला था। वह मुझे मिल गया।

हरिराम विनम्र भाव से बोला—मैं निर्धन, दीन-दरिद्र हूँ। मैं आपकी यथोचित सेवा-सत्कार नहीं कर सका। फिर भी आपने मुझे संतुष्टि प्रदान की।

पथिक बोला—आप भले ही बाहरी रूप से निर्धन हैं। किंतु भीतर मन से आप धनी हैं। आपका आचरण तो धनपति के समान हैं। व्यवहार से आप उच्चता के श्रेष्ठ शिखर को छू रहे हैं। सहृदयता, देवी गुणों से परिपूर्ण है। मैं प्रसन्न होकर वापस लौट रहा हूँ। मेरा गंतव्य आपके यहाँ पूरा हो गया। इतना कहकर पथिक जिधर से आया था। उसी ओर चल पड़ा।

दूसरे दिन हरिराम के घर अन्न के बोरों से लदी पाँच बैलगाड़ियाँ आकर खड़ी हो गई। गाड़ीवान पूछने लगा कि, हरिरामजी का घर यही है। हरिराम बोला—हाँ, जी मैं ही हरिराम हूँ। कहिए?

गाड़ीवान बोला—ये अन्न के बोरे कहाँ उतारें? गाड़ियाँ खाली करवाओ। हरिराम बड़े विचार में पड़ा, कि मैंने कुछ मँगवाया नहीं। फिर यह कहाँ से आया? किसने भिजवाया?

गाड़ीवान ने एक पत्र हरिराम के हाथों में थमाया। जिसमें लिखा था—

श्रीमान् कल रात्रि में मैंने आपका आतिथ्य स्वीकार किया था। आज आप मेरी यह तुच्छ भेंट स्वीकार करें। वह भी ईश्वर प्रदत्त प्रेरणा थी। और यह भी ईश्वर द्वारा दी गई प्रेरणा ही है। कृपया, इसको अवश्य स्वीकार करें।

आपके स्वीकार में ही मेरी संतुष्टि समाई हुई है, धन्यवाद।

बी-११५, दीनदयाल नगर, रतलाम-४५७००१
दूरभाष : ७०६७५०२०३५

इंतजार करना होगा

● शशींद्र अग्निहोत्री

रात हो चुकी है
प्रथम प्रहर है
दिन तो किसी तरह से
बीत गया है
खुद को भूलकर जो कुछ
कर्म था उसमें लगा रहा
पर अब क्या करूँ
सोने का क्या अर्थ है?
शायद फिर सुबह का इंतजार है
अपने आपको खोना है,
किस सुबह को पाना है?
वही सुख-दु:ख के ताने-बाने
वही इनसान का इनसान से
शोषण का समाचार।
रूढ़ियों और माला जपने का
संस्कार न मानो तो
अपने मन का करता है
पता नहीं क्या पाना चाहता है यह मन
किससे मतभेद?
इनसान उठता है
प्रकृति को भोगने के लिए
फूल तोड़ने के लिए
नारी को मारने के लिए
पेड़ों को काटने के लिए
धरती को खोदने के लिए
अपनी सुख-सुविधा बटोरने के लिए
चाहे पर्यावरण इतना जहरीला हो जाए
कि वह स्वयं और उसके भविष्य की पीढ़ियाँ
अपने अस्तित्व के लिए
बार-बार अस्वस्थ हों
फिर भी वह समझता है
कि इस ब्रह्मांड का वहीं केंद्रबिंदु है।
वह जानकर भी समझना नहीं चाहता कि
फूल देखने के लिए है
सुंदरता भोगने, महसूस करने के
लिए नहीं है केवल अस्तित्व
के लिए है, जैसे स्नेह/लय और
तरंग की अनुभूति है।
वह हवा जो इनको आत्मसात्
करती है, प्राणों का प्रतीक है
और इनसान को जीवित रहना है।
दिनभर लाभ के लिए
विकास के लिए
वह सबकुछ करने के लिए
जिससे बच्चे डरें
जानवर भागें जान के लिए
नारी सोचे अपने को बचाने के लिए,
इनसान की कर्कश प्रवृत्तियों से।
मैं क्या करूँ?
मैं दिन को किसी तरह बिता डालता हूँ
लेकिन रात नहीं बीतती है सोने से क्योंकि
ये सब प्रश्न मुझे घेरते हैं।
मेरे होने की सार्थकता पर प्रश्नचिह्न
भी लगाते हैं, क्योंकि जो
कोमल, सुंदर, छोटे और सौम्य हैं,
वे सब डरकर किसी तरह से सोए हैं।
पता नहीं कल सुबह उनके
साथ क्या होगा?
क्या वे अपने आपको
इनसान से बचा पाएँगे
या उसी प्रक्रिया में नष्ट हो जाएँगे?
और मैं इन्हीं आँखों से, इन्हीं कानों से,
इसी दिमाग से,
इस दृश्य को देखने को
मजबूर होता रहूँगा
कुछ पाने के लिए
क्योंकि 'नेक वचन' यह कहेंगे
तुमको इस सबसे क्या अर्थ है?
तुम जिज्ञासु नहीं हो सकते,
तुम किसी को बचा नहीं सकते,

सुपरिचित लेखक। बिट्स पिलानी से एम.एस-सी. तथा कुछ समय तक वहीं पर अध्यापन किया। समसामयिक मुद्दों तथा समस्याओं पर विशद अध्ययन। कविता एवं लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

क्योंकि यह सब होना नहीं है,
पर होता आया है, रात क्या बीतेगी?
हाँ, पर क्या दिन के अँधेरे खत्म होंगे।
रोशनी होते हुए भी
जिन अँधेरों में मैं हूँ
उसमें मैं क्या करूँ?
सुबह जो कल होगी वह तो होती है
पर मैं ही अपना अस्तित्व खो दूँ
एक ताकत बन जाऊँ
और फूल में, नारी में, पेड़ों में,
जानवरों में समा जाऊँ कि
मेरे होने के डर से इनसान सहम जाए
और स्वयं को निर्दयी होने से बचाए,
तभी शायद मेरे लिए रात नहीं होगी
दिन नहीं होंगे, सुबह नहीं होगी,
शाम नहीं होगी।
और कुछ भी व्यक्तिगत नहीं होगा
स्वयं भी कहीं नहीं होगा
और फिर ये प्रश्न भी नहीं होंगे
पर क्या यह संभव हो सकेगा?
पता नहीं तब तक ऐसे ही
रात में समय के बीतने का
इंतजार करना होगा
और फिर एक सुबह, अगली सुबह
कुछ-कुछ आज की सुबह जैसी।

सा अ

सी-१६, एल पार्क,
महानगर विस्तार
लखनऊ-२२६००६

लघुकथाएँ

• रेनू सैनी

गुब्बारेवाला

'रंग-बिरंगे गुब्बारे ले लो। डिजाइन वाले गुब्बारे ले लो।' कहकर सात्त्विक आगे बढ़ने लगा। बहुत सारे छोटे-छोटे बच्चे सात्त्विक के पास रंग-बिरंगे गुब्बारे देखकर भागे चले आए और अपने माता-पिता से गुब्बारे लेने की जिद करने लगे। बच्चों की जिद के आगे माता-पिता को झुकना पड़ा और उन्होंने अपने-अपने बच्चों को रंग-बिरंगे और डिजाइन वाले गुब्बारे दिलवा दिए। उस दिन सात्त्विक की अच्छी बिक्री हुई। उसने माँ के लिए और पिता के लिए चश्मा खरीदा। कुछ दिनों से उसकी माँ बुखार से तड़प रही थी। पिता रमेश की नजरें कमजोर थीं। वह कपड़ों की दुकान पर दरजी का काम करते थे। पिछले दिनों ही उनका चश्मा टूट गया था जिस पर मालिक ने गुस्सा होकर उसे काम से निकालने की धमकी दे दी थी। सात्त्विक एक पब्लिक स्कूल में सातवीं कक्षा में आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के अंतर्गत पढ़ता था। उसे पढ़ने-लिखने का बहुत शौक था। वह हर गतिविधि में आगे रहता था। माता-पिता दोनों ही चाहते थे कि वह पढ़-लिखकर एक अच्छा नागरिक बने। गरीब होते हुए भी सात्त्विक के माता-पिता उसे पढ़ा रहे थे।

माता-पिता को मुसीबत में देखकर सात्विक स्कूल से आने के बाद गुब्बारे बेचने चला जाता था। वह बहुत समझदार था। इसलिए सदर बाजार जाकर थोक के भाव में रंग-बिरंगे डिजाइन वाले गुब्बारे ले आया था। उसकी ड्राइंग बहुत अच्छी थी। उसने सादे गुब्बारों पर बड़ी सफाई से कलात्मक डिजाइन बना दिए थे, जो बच्चों को अत्यंत आकर्षित करते थे। ऐसे गुब्बारे ही बच्चों ने अधिक पसंद किए थे। यह देखकर सात्त्विक को अपनी कला पर गर्व हुआ था और इस बात की संतुष्टि भी हुई थी कि वह माता-पिता का हाथ बँटा रहा है।

एक दिन जब वह गुब्बारे बेच रहा था तो उसके दोस्त आमिष ने उसे देख लिया। आमिष उसी की कक्षा में पढ़ता था। उसके पिता बिजनेसमैन थे। आमिष अधिकतर महँगे-महँगे गैजेट्स अपने मित्रों को दिखाया करता था। उसका पढ़ाई से अधिक मन महँगे खिलौनों, लैपटॉप और वीडियोगेम्स में लगता था। सात्त्विक को देखकर आमिष उसे चिढ़ाते

सुपरिचित साहित्यकार। 'दिशा देती कथाएँ' एवं 'बचपन का सफर'। हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा चार बार नवोदित लेखन एवं अनेक बार आशुलेखन में पुरस्कृत, 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों एवं आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाओं का प्रकाशन व प्रसारण।

हुए बोला, 'क्यों सात्त्विक, पढ़ाई छोड़कर गुब्बारे बेचने वाले बन गए हो क्या? यार जरा मुझे नीले रंग का गुब्बारा तो दिखाना, जिस पर एंगरी बर्ड बनी हुई है।' आमिष की बात सुनकर सात्त्विक ने चुपचाप उसे नीले रंग का गुब्बारा दिखा दिया। उस पर सात्त्विक ने बहुत ही खूबसूरती से 'एंगरी बर्ड' बनाई हुई थी, जो बच्चों में बहुत लोकप्रिय है। एक पल तो आमिष भी गुब्बारे पर बनी 'एंगरी बर्ड' को निहारता रह गया। फिर वह बोला, 'अरे यार, यह 'एंगरी बर्ड' वाले गुब्बारे कहाँ से लाए? इस बार मैं अपने जन्मदिन पर ऐसे ही गुब्बारों से सजावट करवाऊँगा।' आमिष की बात पर सात्त्विक बोला, 'यह गुब्बारा प्लेन था। 'एंगरी बर्ड' मैंने इस पर खुद बनाई है।' यह सुनकर आमिष दंग रह गया। उसने नीले रंग का गुब्बारा सात्त्विक से ले लिया और उसके दाम पूछने लगा। इस पर सात्त्विक बोला, 'तुम मेरी कक्षा में पढ़ते हो और मेरे मित्र हो। इसलिए मैं तुमसे इसके दाम नहीं लूँगा। तुम इसे मित्र की तरफ से एक भेंट समझकर रख लो।' यह सुनकर आमिष गुब्बारे को पटकते हुए बोला, 'मेरा मित्र एक गुब्बारे बेचने वाला नहीं हो सकता। अरे, कहाँ तुम और कहाँ मैं? तुम एक गुब्बारे बेचने वाले हो और वही रहोगे, जबकि मैं एक मशहूर बिजनेसमैन का बेटा हूँ और वही रहूँगा।' उसकी बात सुनकर सात्त्विक शांत होकर बोला, 'दोस्त, तुम ठीक कहते हो। आज मैं एक गुब्बारे वाला हूँ और तुम एक मशहूर बिजनेसमैन के बेटे। लेकिन हो सकता है कि कल यही बात उल्टी हो जाए अर्थात् मैं मेहनत करके मशहूर बिजनेसमैन बन जाऊँ। तुम यह देखो कि मैं गुब्बारे अपने माता-पिता की मदद करने के लिए बेच रहा हूँ। गुब्बारे दुख से मुक्ति दिलाने का प्रतीक हैं। गुब्बारे जब आसमान में उड़ते हैं तो वे हमारी आजादी के साथ खुशी भी दर्शाते हैं। गुब्बारे हमें कामयाबी की ओर

बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। मैं जब भी गुब्बारे बेचता हूँ और मेरे खरीदे हुए गुब्बारे को कोई बच्चा आसमान में उड़ाता है तो मुझे लगता है कि मैं सफलता की एक ओर सीढ़ी चढ़ गया हूँ।' सात्त्विक की बातें आमिष के पिता आकाश ने सुन ली। वह आमिष की ओर ही आ रहे थे। उन्होंने सात्त्विक के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, 'बेटा, बहुत अच्छी और सुंदर बातें करते हो। इसके साथ ही तुम्हारे विचार और आकांक्षाएँ भी बहुत सुंदर हैं। हर बच्चे को तुम्हारी तरह स्वाभिमानी और गुणवान होना चाहिए।' फिर वह आमिष से बोले, 'बेटा, ठीक है कि आज तुम्हें रुपयों और सुख-सुविधाओं की कोई कमी नहीं है। लेकिन एक दिन ऐसा आएगा, जब तुम्हें यह सब खुद मेहनत करके कमाना होगा और मेहनत व ईमानदारी से काम करने की आदत बचपन से ही पड़ जानी चाहिए। तुम्हें गर्व होना चाहिए कि सात्त्विक जैसा लड़का तुम्हारा मित्र है।' पिता की बातें सुनकर आमिष कुछ देर तक अपने पिता को निहारता रहा और फिर बोला, 'पिताजी, यह आप क्या कह रहे हैं? क्या मुझे भी मेहनत करनी होगी।' उसके पिता बोले, 'बेटे, जीवन में हर कार्य और सफलता को पाने के लिए मेहनत करनी होती है। यदि मैं मेहनत न करूँ तो तुम्हें इतनी सुख-सुविधाएँ न दे पाऊँ। बचपन में मैं भी बहुत गरीब था। आज अपनी मेहनत और ईमानदारी के बल पर ही मैं कामयाब हुआ हूँ।' अपने पिता की बातें सुनकर आमिष को स्वयं पर पश्चात्ताप हुआ और उसकी आँखों में आँसू भर आए। वह सात्त्विक को गले लगाते हुए बोला, 'मित्र, मुझे माफ कर दो। आज तुमने और मेरे पिता ने मुझे जीवन की सही राह दिखाई है।' आमिष की बात पर सात्त्विक मुसकरा दिया और नीले रंग का गुब्बारा उसके हाथ में पकड़ा दिया। आमिष ने उस गुब्बारे को आसमान में उड़ाया और बोला, 'आज से मैंने भी अपनी सफलता की एक सीढ़ी चढ़ ली है और आसमान की ओर बढ़ता हुआ गुब्बारा इसका प्रतीक है।' इसके बाद सात्त्विक और आमिष दोनों आसमान की ओर बढ़ते हुए गुब्बारे को देखते रहे।

आज आमिष मेहनत और पढ़ाई का महत्त्व समझ गया था।

भोजन का गुप्त मसाला

मार्था जब भी किचन में भोजन पकातीं तो वह एक टिन के डिब्बे को खोलकर देखतीं और फिर उसे वापिस बंद कर देतीं। मार्था के हाथ के बने स्वादिष्ट भोजन की धूम हर ओर थी। एक दिन उत्सुकतावश बालक बेन ने यह देख लिया। वह मार्था से बोला, ''आप भोजन बनाते समय रोज इस टिन के डिब्बे में से क्या निकालती हैं, जो नजर भी नहीं आता।'' मार्था बोली, ''बेन इसमें व्यंजन पकाने का एक गुप्त मसाला है। पर अफसोस कि वह मसाला बाजार में नहीं मिलता। इसे मुझे मेरी माँ से प्राप्त हुआ है। मेरी माँ को उनकी माँ से मिला था।'' यह रहस्यमयी जवाब सुनकर बेन हैरान होकर बोला, ''मुझे देखना है कि वह कैसा मसाला है, जो दिखता नहीं है और जो पीढ़ियों से आपके पास है।'' मार्था बोली, ''अभी नहीं! जब तुम बड़े हो जाओगे, तब देखना।'' बेन बोला, ''आप कैसी बातें कर रही हैं, क्या तब तक इसमें मसाला बचा रहेगा?'' मार्था मुसकराकर बोली, ''हाँ बचा रहेगा बेन, क्योंकि यह मसाला कभी खत्म नहीं होता और बस चुटकी भर ही भोजन में मिलाना होता है।'' बेन की जिज्ञासा उस टिन के डिब्बे के अंदर झाँकने के लिए बढ़ती गई, लेकिन मार्था ने कभी भी उसे उस डिब्बे को छूने नहीं दिया। अब बेन बड़ा हो चुका था। एक दिन मार्था की तबीयत खराब हो गई और उन्हें अस्पताल में भरती कराना पड़ा। मार्था को अस्पताल में दाखिल कराकर वह उनके सिरहाने बैठा रहा। मार्था बोली, ''मैं ठीक हूँ। जाओ तुम घर जाकर आराम करो।'' मार्था के बहुत कहने पर बेन घर लौटा। वह किचन में देखने गया कि इस समय खाने की कोई चीज मिल सकती है क्या? अचानक उसकी नजर टिन के डिब्बे पर पड़ी। एक चुंबक की भाँति बेन ने उस डिब्बे को लिया और तेजी से उसके अंदर हाथ डाला। पर यह क्या डिब्बा तो अंदर से खाली था। डिब्बे में से उसके हाथ में एक छोटी सी स्लिप निकली। उसने उसे जल्दी से खोला। उस पर लिखा था, ''जो भी व्यंजन बनाओ, उसमें चुटकी भर प्यार जरूर डाल देना।'' यह देखकर बेन भौंचक्क रह गया। अब वह मार्था के गुप्त मसाले का राज जान गया था। बेन समझ गया कि आखिर क्यों मार्था के द्वारा बनाई गई हर चीज स्वादिष्ट लगती थी।

सूझबूझ से की बचत

एक बार अमेरिकन एयरलाइंस की एक फ्लाइट अटैंडेंट ने यह गौर किया कि उस एयरलाइंस के कई यात्री अपने सलाद में जैतून यानी कि ऑलिव नहीं खाते थे। उसने इस बात को जानने के लिए कई यात्रियों से यह पूछा कि वे जैतून की सलाद को क्यों छोड़ देते हैं। अधिकतर ने कहा कि उन्हें जैतून को सलाद के रूप में खाना ज्यादा अच्छा नहीं लगता। यह बात उसने अधिकारियों को बताई और कहा कि ''सर, यदि जैतून को सलाद से निकाल दिया जाए तो हमारी एयरलाइंस को हर साल अधिक मुनाफा हो सकता है, क्योंकि पाँच सलाद चार सलादों के मुकाबले ज्यादा महँगी पड़ती हैं। जैतून अधिकतर यात्रियों को पसंद नहीं है, इसलिए इसे निकालने में ही समझदारी है।'' अधिकारियों ने इस बारे में जाँच की और पता लगाया कि भोजन की आपूर्ति करने वाला सप्लायर एयरलाइन के सलाद में सामान की संख्या के हिसाब से रुपए लेता था। एक से चार सामान वाले सलाद की लागत पाँच से आठ सामान वाले सलाद से काफी कम थी। जैतून अमेरिकन एयरलाइंस के सलाद का पाँचवाँ सामान था। फ्लाइट अटैंडेंट की बात मानकर एयरलाइंस ने जैतून को पाँचवें सलाद से हटा दिया। इस प्रकार अब अमेरिकन एयरलाइंस में यात्रियों को चार तरह की सलाद दी जाने लगी। किसी भी यात्री ने इस बात की शिकायत नहीं की कि सलाद में जैतून क्यों नहीं दी जाती। इस प्रकार फ्लाइट अटैंडेंट की बात मानकर अमेरिकन एयरलाइंस ने चार सलाद का मेन्यू अपनाया, जिससे उन्हें हर वर्ष पाँच लाख डॉलर की बचत होने लगी।

प्रत्येक व्यक्ति फ्लाइट अटैंडेंट की तरह सूझबूझ एवं समझदारी से इस तरह की बचत करके अपनी वित्तीय स्थिति एवं देश की अर्थव्यवस्था दोनों को मजबूत कर सकता है।

सा.अ.

३, डी.डी.ए. फ्लैट्स, खिड़की गाँव,
मालवीय नगर, नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ९९७११२५८५८

बिन पानी सब सून

● राहिला रईस

सृष्टि का मूल और केंद्रीय तत्त्व जल है। जल के बिना जीवन की कल्पना भी असंभव है। अंतरिक्ष में जीवन की खोज करने में जल तत्त्व को ही विशेष महत्त्व दिया जाता है। माना जाता है कि जहाँ जल की उपलब्धता होगी, वहीं जीवन की संभावना होगी। विज्ञान से लेकर धर्मशास्त्रों तक जल की महत्ता सिद्ध है। बृहदारण्यकोपनिषद् के अनुसार, यह सृष्टि आरंभ में जल ही थी—आप एवेदसग्र आसु: (बृ.५.५.१)। छांदोग्योपनिषद् ने पृथ्वी को मूर्तिमान जल कहा है—आप एवेमा मूर्ता ये यं पृथिवी (छा.७.१०.१)।

भारतीय शास्त्र ही नहीं अपितु पाश्चात्य विचारक भी जल के महत्त्व को भली भाँति स्पष्ट करते है ग्रीक विचारक थेलीज (जन्म ६२४ ईसा पूर्व) की स्पष्ट मान्यता थी कि हर वस्तु जल से निर्मित है।

जल वस्तुत: हाइड्रोजन के दो तथा ऑक्सीजन के एक अणु के मिलन से उत्पन्न पदार्थ है, जो सभी जीवधारियों के लिए अत्यंत आवश्यक है। जल के चार प्रकार है—१. वृष्टि के द्वारा जो आकाश से प्राप्त होते है, वे दिव्य जल कहलाते है, २. जो झरनों से स्रवते हैं, उन्हें प्रस्रवण कहते हैं, ३. जो खोदकर कुएँ और बावड़ियों से निकाले जाते है, ४. और जो स्वयं स्रोत के द्वारा फूटकर बाहर आते हैं।

"या आपो दिव्या उत वा स्रवंति खनित्रिमा उत वा या: स्वपञ्जा:।
समुद्रार्था या शुचय: पावका स्ता आपोदेवीरिह मामवन्तु॥"

(ऋग्वेद ७.४९.२)

यथा जितनी महत्ता जल की है, उतना ही बहुतायत जल प्रकृति ने सृष्टि को प्रदान भी किया है। तत्पश्चात् भी स्थिति यह है कि संपूर्ण विश्व में पेयजल की समस्या विकराल रूप धारण करती जा रही है अधिकांश देश सूखे की मार से त्रस्त है भूजल स्तर नीचे गिरता जा रहा है।

नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यास 'कुइयाँजान' में पानी की समस्या का गंभीरता से विवेचन किया है। सूखे और बाढ़ दोनों स्थिति में पानी किस प्रकार जन-जीवन को अस्त-व्यस्त कर देता है इसका चित्रण गहन दृष्टि, चिंतन, मनन एवं अध्ययन के पश्चात् किया है। नासिरा जी कहती हैं—"हमने धरती से पानी तो खूब लिया, मगर उसे जो देना था, वह नहीं दिया। इस धरती पर हुए हमारे अत्याचार ही हमें आज इस दुर्दशा में डाले हुए है, फिर भी हम होश में नहीं आ रहे हैं। पहले धर्म को लेकर धर्म युद्ध होते थे, फिर सीमा को लेकर तलवारें खिंचती थीं और अब देखना, कुरैशी भाई, जल को लेकर प्रांतों के बीच युद्ध छिड़ेगा। ताज्जुब नहीं कि यहगृह युद्ध एक दिन विश्व महायुद्ध में बदल जाए।"

सुपरिचित कहानीकार। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानी, शोध-पत्र, अनुवादित कहानियाँ प्रकाशित। नाथद्वारा की प्रसिद्ध संस्था 'साहित्य मंडल' द्वारा सम्मानित। संप्रति अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर (हिंदी) के रूप में कार्यरत।

नासिरा शर्मा की चिंता जायज़ है। धरती का अवदान इतना अधिक है, उसका सीना चीर कर धन-धान्य उपजाया जाता है, जल का दोहन होता है परंतु बदले में धरती और जल संरक्षण के लिए कोई प्रयास नहीं किया जाता। इससे कुपित प्रकृति भी अपना चक्र रचती है और कभी सूखा तो कभी बाढ़ के रूप में मनुष्य की लापरवाही पर गाहे-बगाहे चेतावनी देती है। किंतु इससे बेखबर मानव समुदाय पृथ्वी पर अत्याचार करता ही जाता है, जिसका परिणाम वही होता है जो कि बुंदेलखंड के जल संकट के रूप में प्रदर्शित हो रहा है।

उत्तर प्रदेश के ७ और मध्य प्रदेश के ६ जिलों को संयुक्त रूप से बुंदेलखंड के नाम से अभिहित किया जाता है। बुंदेलों, चंदेलों आदि राजवंशों द्वारा इस भू-भाग पर लंबे समय तक राज किया गया है। चंदेल राजवंश के समय से ही बुंदेलखंड में पानी की कमी थी। रबी की फसल वहाँ न्यूनतम ही हो पाती थी। खेती वर्षा पर आश्रित थी। उत्तरी बुंदेलखंड में यद्यपि स्थिति कुछ बेहतर थी, क्योंकि इस क्षेत्र में यमुना, पार्वती, पहूज एवं बेतवा जैसी जलमग्न नदियाँ प्रवाहित थी। इससे भूमि में आर्द्रता रहती थी और कृषि उत्पादन भी हो पाता था। किंतु दक्षिणी बुंदेलखंड में खेती के लिए पर्याप्त सुविधा नहीं थी।

चंदेल राजाओं ने इस समस्या का समाधान किया और "सर्वप्रथम दक्षिणी बुंदेलखंड के बेतवा से केन नदियों के मध्य के शुष्क, लंबे अविकसित क्षेत्र को बरसाती सतही जल संग्रहण योजना (वर्षा का बहता जाता पानी रोको नीति) के द्वारा शुष्क भूमि को कृषि कर्म लायक बनाने

और कृषि के साथ-साथ पशु पालन व्यवस्था वृद्धि के प्रयास किए थे। इस आशय की संपुष्टि करने वाला एक शिलालेख महोबा के चंदेल राजा धंग देव (९४०-९९९) का सन् ९५९ ईस्वी का जैन मंदिर खजुराहों में लगा हुआ है।"

वर्षा के जल को संग्रहित करने का अनूठा और अनुपम प्रयास चंदेलों द्वारा किया गया। राजाओं ने अनेक तालाबों का निर्माण कराया। यह विशाल तालाब थे, इनसे जुड़ी नहरें भी बनवाईं, ताकि वर्षा ऋतु में संग्रहित जल का उपयोग कृषि के लिए भी किया जा सके। चंदेल राजाओं के प्रयासों से बुंदेलखंड के जन-जीवन में परिवर्तन हुआ, यह तालाब और सरोवर जल संरक्षण के साथ-साथ प्राकृतिक सौंदर्य में भी श्री वृद्धि करने वाले थे। पं. बनारसीदास चतुर्वेदी ने 'विंध्यभूमि' के पृष्ठ १८ पर लिखा है कि "विंध्य की प्रकृति का वर्णन अधूरा ही रहेगा यदि यहाँ के सरोवरों का ज़िक्र न किया जाए। वस्तुत: यहाँ के सरोवर प्राकृतिक सौंदर्य के मुख्य अंग है।"

तालाब, कुएँ इत्यादि जल संरक्षण के साधनों के निर्माण को समस्त धर्मों में पुण्य कार्य बताया गया है। इसलाम धर्म जहाँ इसे सदका-ए-जारिया यानी हमेशा चलते रहने वाला सदका (दान) बताता है तो महाभारत के 'अनुशासन पर्व' में जल के महत्त्व और संरक्षण का विशेष वर्णन मिलता है। भीष्म ने युधिष्ठिर को उपदेश देते हुए तालाब निर्माण की महिमा का "वर्णन करते हुए कहा है कि जो व्यक्ति तालाब का निर्माण कराता है, वह तीनों लोकों में सम्मानित होता है।"

बुंदेलखंड की प्यासी धरती पर निर्मित यह सरोवर उसकी जीवन नाड़ी के रूप में थे। आधुनिक जीवन शैली ने इन तालाबों की महत्ता को कम कर दिया। परिणाम यह हुआ कि सरोवरों का आकार कम होने लगा, उनका पानी दूषित हो गया। जगह-जगह सरोवर पाट दिए गए। कंक्रीट के जंगल उग आए। कुएँ भी अपना महत्त्व खो चुके थे। धीरे-धीरे कुएँ और तालाब सूख गए। वर्षा जल संरक्षण और उसके माध्यम से पूरे वर्ष जल की आपूर्ति का जो प्राचीन साधन बुंदेलखंड के पास था, वह समाप्त हो गया। ट्यूबवेल और बिजली की मोटरों के माध्यम से पृथ्वी के भीतरी जल के अत्याधिक दोहन और पानी की बरबादी का परिणाम यह हुआ कि अब जल स्तर अत्यंत नीचे पहुँच चुका है। पिछले कई वर्षों से सूखे की मार झेल रहे बुंदेलखंड में स्थिति अत्यंत भयावह है। भूमि में मोटी दरारे पड़ चुकी है।

'जल जन जोड़ो' योजना के राष्ट्रीय संयोजक संजय सिंह कहते हैं कि "वर्तमान में बुंदेलखंड गंभीर जल संकट के दौर से गुजर रहा है, जिसके कारण किसानी चौपट है। किसान निराशा के कारण आत्महत्या कर रहा है। दूसरी तरफ सदमे से भी किसानों की मौतें बड़े पैमाने पर हो रही हैं। सिंचाई की तो बात दूर की रही, पेयजल के लिए भी पानी नहीं है, ऐसे में जल को बचाना हमारी नैतिक जिम्मेदारी है।"

प्रत्येक स्थान का जन-जीवन उसकी भौगोलिक परिस्थिति, परंपराओं और संस्कारों से जुड़ा होता है तथा उन्हीं के द्वारा उसे रूप आकार प्रदान किया जाता है। आधुनिकता की अंधी दौड़ में जब मनुष्य अपनी पारंपरिक जीवन शैली से विलग होता है तो अत्यंत विनाशकारी परिणाम सामने आते हैं। तालाबों एवं कुओं के माध्यम से वर्षा जल-संग्रहण करने वाला बुंदेलखंड जब पाइपलाइन और बिजली की मोटरों द्वारा भू-जल दोहन को अपनाने लगा और तालाबों, कुओं जैसे पारंपरिक जल स्रोतों की उपेक्षा की तो उसे जल संकट से दो चार होना पड़ रहा है।

स्थिति यह है कि जालौन जैसा क्षेत्र जो कि पाँच नदियों से घिरा है में भी जल संकट उपस्थित हो गया है। प्रशासन ने स्वजल योजना के तहत पाइप लाइन बिछा दी टंकियाँ लगवा दी किंतु अभी तक पानी उपलब्ध न हो सका। इस इलाके में खनन माफिया भी सक्रिय है। बेतवा नदी में बालू खनन के बढ़ते कर्म ने भी पानी की समस्या को बढ़ाया है।

नासिरा शर्मा पानी की कमी के भयावह रूप को दरशाती हुई लिखती है—

"खालिस दूध नहीं मिलता—यह शिकायत तो पुरानी हो चुकी है, नई शिकायत है—खालिस पानी नहीं मिलता है देखने को, पीना तो दूर, खालिस शहद की तरह खालिस पानी को भी लोग बोतल में बंद रखेंगे, ताकि उसकी एक दो बूँद सूखे के समय चाटकर अमृत का स्वाद ले सकें। ऐसा दौर जल्दी ही आने वाला है, जब हीरे के मोल पानी मिलेगा और पूँजीपति उसको अपनी तिजोरी में बंद करके रखेंगे, तब डकैतियाँ पानी की बोतल के लिए पड़ेंगी। बैंक के लॉकर टूटे मिलेंगे, केवल खालिस पानी के लिए जिसकी कीमत अंतरराष्ट्रीय बाजार में करोड़ों में होगी। यह फैंटेसी नहीं, बल्कि आने वाले समय में पानी की दुर्लभता की पूर्व घोषणा है। यह मजाक नहीं बल्कि पानी के बढ़ते महत्त्व का सच है। यह अतिशयोक्ति नहीं, बल्कि भविष्य का यथार्थ है।"

पानी है तो खुशियाँ हैं, जीवन में रंग है, रास है, त्योहार है। केवल पानी के न होने से जीवन की मिठास टीस में परिवर्तित हो जाती है। "पानी न हो, आदमी की जान एक-एक बूँद पानी के लिए तरस जाती है। सारा काम ठप हो जाता है।" पानी की कमी के कारण बुंदेलखंड का जीवन थका सा, रुका सा हो गया है। जीवन से उल्लास समाप्त हो चुका है। गाँव-गाँव का हाल यह है कि जनता के दिन का अधिकांश समय पानी के जुगाड़ में ही व्यतीत होता है। कहीं टैंकरों की बाट जोहती आँखें हैं तो कहीं वाटर वर्क्स की टोटियों से टपकते अमृत स्वरूप जल को अपने घड़ों, बाल्टियों में भर लेने की होड़ और आपाधापी। कोई ५-५ किलोमीटर दूर से पानी बैलगाड़ियों, साइकिलों इत्यादि पर ढोकर लाता है तो कोई सूखने को तत्पर हैंडपंप को चला-चलाकर जबरन पानी निकालने का प्रयास करता है। अपनी होली, फाग के लिए प्रसिद्ध बुंदेलखंड होली के लिए भी तरस गया है। विवाह की समस्या भी प्रगाढ़ होती जा रही है। कोई अपनी पुत्री बुंदेलखंड के बिना पानी के क्षेत्रों में ब्याहना नहीं चाहता। लड़के बिना विवाह के बूढ़े हो रहे हैं।

पानी का संकट बहुमुखी है। नासिरा शर्मा लिखती है—"गरमी से मरनेवालों की संख्या दो सौ से बढ़कर ढाई सौ हो गई है। ये मौतें सूखे के कारण ज्यादा हुई है, क्योंकि पानी की कमी से ये सारे व्यक्ति अपने को कड़ी धूप से बचा नहीं पाए।"

पानी मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है। यह उसका मौलिक अधिकार है कि उसे शुद्ध पेयजल प्राप्त हो साथ ही उसकी दैनिक आवश्यकताओं हेतु पर्याप्त मात्रा में जल उपलब्ध हो। कुइयाँजान का नायक डॉ. कमाल उचित ही यह प्रश्न उठाता है कि "एच.आई.वी के

आतंक के साथ फंड जलप्रपात की तरह एन.जी.ओ. की झोली में गिर रहे हैं, मगर इस खामोश तबाही की तरफ किसी भी देश या संस्था का ध्यान क्यों नहीं जाता है कि एक आम आदमी को यह अधिकार मिलना चाहिए कि वह साफ पानी का सेवन कर सके।"

वस्तुत: स्थिति भयावह है। बुंदेलखंड के जल-संकट को लेकर अनेक कारण बताए जा सकते हैं, यथा—

- परंपरागत जल-स्रोतों की उपेक्षा।
- वर्षा जल का संरक्षण ना होना।
- भू-जल का अत्यधिक दोहन, जिसके कारण भू-जल स्तर में निरंतर गिरावट।
- वनों एवं पेड़ों की अंधाधुंध कटाई।
- वर्षा की कमी।
- सरकार की जलनीति का प्रभावहीन होना। स्थल से ज्यादा कागजों पर कार्यवाई।
- जल की बरबादी। आधुनिक जीवन-शैली ने पानी की बरबादी को विशेष प्रोत्साहन दिया है।
- नदियों की सफाई न होना और इस कारण उनका उथला होता जाना।
- बालू खनन।
- सिंचाई के लिए अत्यधिक पानी का प्रयोग।
- रासायनिक खाद का अधिक प्रयोग।
- साल में कई फसलों को उगाने का लालच। आदि

अंत में कहा जा सकता है कि जन-मानस की पानी के संरक्षण के प्रति उदासीनता, हर कार्य के लिए शासन-प्रशासन पर निर्भर होना और स्वयं के कर्तव्यों से विमुख होना भी जल संकट के लिए जिम्मेदार है।

बुंदेलखंड के त्रासद जीवन से मुक्ति के लिए जल संरक्षण एवं प्रबंधन अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। पारंपरिक जल संसाधनों तालाबों, कुओं इत्यादि को पुन: विकसित किया जाना आवश्यक है। वर्षा जल का संरक्षण हो, नदियों की साफ-सफाई की जाए इस पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। खनन माफिया पर नकेल कसी जाए। नहरों के रख-रखाव पर ध्यान दिया जाए और नदियों से नई नहरें भी निकाली जानी चाहिए, ताकि उन इलाकों में पानी पहुँचाया जा सके, जहाँ पानी उपलब्ध नहीं है। जन-मानस में जल संरक्षण और जल की बरबादी रोकने, उसके अनावश्यक प्रयोग को रोकने के लिए जागृति उत्पन्न करने का प्रयास किया जाए। इसके लिए मीडिया की सहायता के साथ-साथ बच्चों के स्कूलों में विशेष जागृति अभियान भी चलाया जाए। शासन की जल नीति को अमली जामा पहनाया जाए। पेड़ लगाने को प्रोत्साहित किया जाए और सूखा राहत इत्यादि में होने वाले भ्रष्टाचार पर भी लगाम कसी जाए। यह कुछ महत्त्वपूर्ण प्रयास है, जिनके माध्यम से बुंदेलखंड के सूखा ग्रस्त क्षेत्रों और पानी के संकट से जूझ रहे इलाकों को राहत पहुँचाई जा सकती है। 'विकास सबका कर्तव्य' की नीति ही बुंदेलखंड के लिए कारगर है।

हिंदी विभाग,
अलीगढ़ मुसलिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)
दूरभाष : ७५०३३८५९२४

गजल

गजल

● ऋषिपाल धीमान 'ऋषि'

आँसुओं का हिसाब क्या रखना
याद हर इक अजाब क्या रखना

जह्न नाकामियों के खौफ में हो
खुद को यों कामयाब क्या रखना

मैं खुली आँख देखता हूँ ख्वाब
बंद आँखों में ख्वाब क्या रखना

अच्छी यादें सँभालकर रखिए
हादिसों की किताब क्या रखना

कुछ सवालों को रहने दीजे सवाल
हर किसी का जवाब क्या रखना

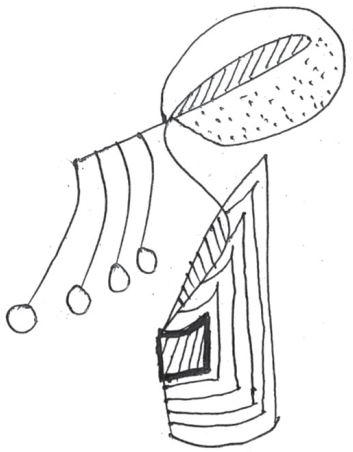

दिल के सागर में भरके रखता हूँ
बोतलों में शराब क्या रखना

जिन लबों से निकलते हों शोले
नाम उनका गुलाब क्या रखना

पार जिसके 'ऋषि' दिखे चेहरा
रुख पे ऐसा नकाब क्या रखना

६६, श्रीनाथ बँगलोज,
चांदखेड़ा, अहमदाबाद-३८२४२४
दूरभाष : ९४२८३३०४९०

कहना नहीं चाहते जो

मूल : **मनमोहन**

अनुवाद : **योगेश्वर कौर**

पंजाबी के कवि, उपन्यासकार, चिंतक। 'निर्वाश' उपन्यास पर पंजाबी में साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत। काव्य-संग्रह अगले चौराहे तक, मन महीअल, नीलकंठ आदि पुस्तकें प्रकाशित। आलोचना, शोध एवं अनुवाद की लगभग एक दर्जन पुस्तकें प्रकाशित।

और ही कुछ

देखते हैं जब चित्र कोई
तो देखते हैं वह
जो चित्र में नहीं है
देखते हैं वह जो गैरहाजिर
कोई और ही चित्र रचता सा।

सुनते हैं संगीत
तो सुनते हैं वह
जो सुनाई नहीं देता
सुनते हैं वह जो है मौन
गाया नहीं जा रहा
कोई और ही सप्तक गाते हुए।

कहते हैं जब कुछ
तो वह कहती, हाँ
कहना नहीं चाहते जो
वह जो अर्थों की सीमा से पार
एक और ही भाव बताते हुए

हम जो देखते-सुनते रहते हैं
दरअसल वह योग रहे होते हैं
जो रह जाता अव्यक्त हमारे अंदर।

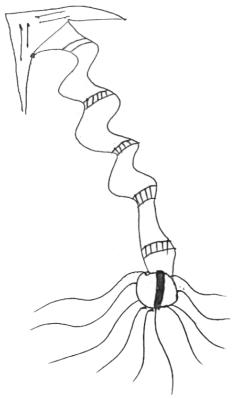

संदेश

चट्टान की दरार में से
निकला एकाकी पुष्प
घास के तिनकों संग हवा में झूलता
महज अपने लिए ही नहीं
घोषणा है वसंत की

वह तो वाहक है
उस आनंद का, जो खिलेगा
जब बर्फ की शॉल उतार रही होगी वादी
मीठी धूप के आने पर

दरवाजा

दरवाजे के अंदर या बाहर
सुरक्षित है इनसान···मालूम नहीं
डर लेकिन
बाहर है अंदर भी

दरवाजा दो डरों के बीच
मरा शहर होता
जिसमें इनसान और दरवाजा दोनों भटकते

द्वार कृत मौसम के खँडहर
जिनमें पेड़ जीवित प्रतिपल

सोने के बाद द्वार, मनुष्य की छाती में खुलता
सपनों को कर देता है अंदर बंद

सेंध लगाता द्वार नींद को
और मनुष्य के दिमाग में जंगल-सा निखर जाता, फूलकर
सोया मनुष्य बुदबुदाता, द्वार विद्रूपता से हँसता
चिटकनी नकल करती ताले दाँत चिढ़ाते

दरवाजे में बैठा जंगल जाग उठे आधी रातों में
गीदड़ की हाँक के साथ

सोया मनुष्य निश्चिंत
बाहर दरवाजा मुस्तैद
डर का साथी दर रातभर
बंद होकर भी खुला रहता है
इनसान के अंदर

२३९ दशमेश एन्क्लेव
ढकौली-१६०१०४ (मोहाली पं.)
दूरभाष : ९३१६००१५४९

तुम कब जाओगे, कोरोना!

● नरेंद्र कुमार कुलमित्र

कल मैं अपने गाँव के एक मित्र से फोन पर बात कर रहा था, तभी उसने मुझे सुझाव दिया कि मित्र, आप केवल कविता लिखते हो, कभी गद्य की विधा लेख आदि क्यों नहीं लिखते? उनकी बातों से मैं जोश में आ गया और 'कोरोना', जो कि ज्वलंत मुद्दा बना हुआ है, को विषय बनाकर लिखना शुरू किया।

अभी देश में, परदेश में यानी हर जगह कोरोना काल चल रहा है। कोरोना होम मेड नहीं है, बल्कि शुद्ध रूप से आयातित बीमारी है। जैसे इंपोर्टेड मॉल का अलग क्रेज होता, वैसे ही इस बीमारी का क्रेज भी धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा है। जैसे ही हम विदेशी वस्तुओं को इंपोर्टेड मॉल कहकर भाव देना शुरू करते हैं, वैसे ही वह शीघ्रता से पूरे देश में फैल जाता है। विदेशी चीजों का प्रयोग उच्च वर्ग से शुरू होकर मध्यम वर्ग होते हुए निम्न वर्ग तक धड़ल्ले से पहुँच जाता है। इंपोर्टेड माल सोचकर इसके प्रयोग को हम अपने गर्व (प्राउड) की भावना से जोड़ लेते हैं और जब हम इन्हीं विदेशी चीजों की आदि हो जाते हैं, फिर 'विदेशी भगाओ, स्वदेशी अपनाओ' का नारा लगाते हुए बहिष्कार करते हैं।

जैसा कि इतिहास रहा है कि विरोध का स्वर हमेशा मध्यम वर्ग से उठता है। उच्च वर्ग तो हमेशा जिसका विरोध करना है, उसमें खुद भी शामिल होता है, सो विरोध करने का सवाल ही नहीं उठता। जहाँ तक निम्न वर्ग की बात है, ये बड़े संतोषी जीव होते हैं। इन्हें न तो ऊधौ का लेना है, न माधव का देना है। इस वर्ग के लोग जितना 'प्राप्तियों' में संतुष्ट होते हैं, उतना ही 'अभावों' में भी संतुष्ट नजर आते हैं। लगता है कि इनके जींस में विरोध के गुण ही नहीं होते। हाँ, यह वर्ग भीड़ बढ़ाने में जरूर काम आते हैं, चाहे इनका उपयोग मध्यम वर्गवाले आंदोलन के लिए करें या फिर उच्च वर्गवाले अपने काम साधने के लिए करें। इन्हें तो बस पीना-खाना मिल जाए और एक दिन की रोजी, फिर जिधर चाहे जोत लो, इन्हें भीड़ या भीड़ का हिस्सा बनने में कोई परहेज नहीं होता।

खैर, मैं अपनी बात निगोड़ी कोरोना से स्टार्ट की थी और वर्गभेद वर्णन के चक्कर में उलझ गया। सबसे अहम सवाल तो यह है कि देश में कोरोना को हवाई रास्ते से ससम्मान लानेवाले 'भद्रजन' आखिर कौन थे? उन मेजबानों का आखिर क्या हुआ, जो मेहमान कोरोना को इतने बड़े देश में लाकर रास्ते पर छोड़ दिया है? कोरोना को लानेवाले चालाक लोग तो बच निकले, चंगुल में फँस गई है देश की भोली-भाली जनता। ये कोरोना

शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कवर्धा (छत्तीसगढ़) में सहायक प्राध्यापक। पूर्व में तेरह वर्षों तक जवाहर नवोदय विद्यालय में पी.जी.टी. हिंदी के पद पर कार्य कर चुके हैं।

भी ऐसा ढीठ मेहमान है कि एक बार आने के बाद जाने का नाम नहीं ले रहा है। आदरणीय शरद जोशीजी ने शायद कोरोना जैसे निपट चिपकू मेहमान के लिए ही अपना लेख 'तुम कब जाओगे अतिथि!' लिखा होगा। कोरोना दुष्ट तो हमारे अपनों में ही बड़ी चतुराई से फूट डालने का काम कर रहा है। कोई अपने घर का सदस्य ही क्यों न हो, यदि एक बार छींक मार दे तो हम उसे बड़ी संदेह भरी नजरों से देखने लग जाते हैं। भले ही वह बेचारा नाक में मच्छर घुस जाने के कारण छींक मार रहा हो!

हम इस चिपकू मेहमान के डर से दरवाजे पर कुंडी लगाकर घर में ऐसे घुसे रहते हैं कि कहीं कोरोना हमारे घर में दस्तक न दे जाए। दूधवाला भी घर की घंटी बजाता है तो यह शंका होने लगती है कि कहीं यह हरकत कोरोना की तो नहीं है। कुल मिलाकर हम अपने ही घर में कैदियों की तरह डरे-सहमे जैसे-तैसे दिन काट रहे हैं। इस समय लोगों ने डर के मारे न्यूज चैनलों को लगभग देखना ही बंद कर दिया है। जो व्यक्ति रोज शाम में न्यूज चैनल पर डिबेट सुनने का आदी था, अब वह उस समय में भी सीरियलों और फिल्मों के चैनल देखकर ही दिन बिता रहा है। मनोरंजन चैनल भी अपने ब्रेक को 'कोरोना ब्रेक' कहकर डराने लगे हैं। इसी बीच दूरदर्शन चैनल ने मौका देख जोरदार चौका मारा है। जहाँ एक ओर रामायण-महाभारत दिखाकर डरे-सहमे लोगों में धार्मिकता और आत्मविश्वास को जिंदा रखने का काम किया है, वहीं दूसरी ओर अपनी लूटी-पिटी टी.आर.पी. को भी पटरी पर ले आया है।

कवियों और लेखकों को जैसे अचानक नया विषय मिल गया है। वे कोरोना पर कविता, कहानी, लेख आदि लिखकर खूब कलम चला रहे हैं। पूरी साहित्यकार बिरादरी वही पुराने विषयों कश्मीर, अनुच्छेद-३७०, एन.आर.सी. और शाहीन बाग पर लिख-लिखकर बड़े बोर हो चुके थे। अभी हालात ऐसे हो गए हैं कि राजनीति में भी नए मुद्दों का टोटा लग गया है। राजनेताओं का मुँह खुजला रहा होगा कि उन्हें आखिर पैर खींचने

और कीचड़ उछालने जैसे शुभ अवसर कब मिलेंगे! वे मन-ही-मन कोरोना बैरी को यह सोचकर कोस रहे होंगे कि उसने सारे मुद्दों को दबाकर खुद अकेले अहम मुद्दा बन बैठा है।

कोरोना का दुस्साहस तो इतना बढ़ गया है कि अपने प्रताप से देशव्यापी लॉकडाउन तक करवा दी है, फिर भी मानने को तैयार नहीं है। देश में सभी जगह ताले लग चुके हैं। कोर्ट बंद है, दफ्तर बंद है, दुकानें बंद हैं, मोटर-गाड़ी बंद हैं, आना-जाना बंद है। यहाँ तक कि लोगों की बोलती भी बंद हो गई है। रोड पर पुलिसवाले भी बात नहीं कर रहे हैं, जरूरत के मुताबिक बस डंडा चमका रहे हैं। अस्पताल में डॉक्टर केवल इशारों से काम चला रहे हैं। अब तो जबान की कोई कीमत ही नहीं बची है, उसकी कीमत लगभग माइनस पर जा चुकी है। अब सड़कें भी बिल्कुल बेआवाज सूनी हो गई हैं, जिसके किनारे-किनारे कभी रेहड़ी, गुमटी, खोमचे और ठेलावालों के पास गरमी की शाम में गुप-चुप, पिज्जा, बर्गर, चाऊमीन और मंचूरियन का लुफ्त उठाते लोगों की भीड़ वाली रौनक बनी होती थी, वह गायब हो चुकी है।

कोरोना ने दिल्ली जैसे महानगरों में रोज की कमाई कर रोज खानेवाले मजदूरों का जीना हराम कर रखा है। फैक्टरियों के बंद हो जाने पर काम से हकाले गए मजदूर रातोरात सड़क पर आ गए हैं। दर-ब-दर भटकते इन मजदूरों को जैसे कोरोना से कोई भय ही नहीं है। ये खुलेआम बड़े आराम से सड़कों पर 'सोशल डिस्टेंसिंग' जैसे आयातित शब्द से अनजान और 'लॉकडाउन' का मखौल उड़ाते हजारों की झुंड में दिखाई पड़ते हैं। सच तो यही है कि इन मजदूरों के लिए पापी पेट के सवाल और भूख रूपी वायरस से लड़ना ही सबसे बड़ी चुनौती है, जिसके सामने कोरोना की चुनौती छोटी नजर आती है।

दिल्ली के मुख्यमंत्री को एक चीज के लिए कोरोना को जरूर धन्यवाद कहना चाहिए, वह यह कि दिल्ली के प्रदूषण को दूर करने एवं आसमान पर छाए धुएँ के गुबार को कम करने के लिए गाड़ियों को ऑड-ईवन चलाने जैसे जतन खूब किए, पर पसीने छूट गए, लेकिन धुआँ कम नहीं हुआ। वहीं कोरोना के आशीर्वाद से मात्र इक्कीस दिन का लॉकडाउन करना पड़ा और देखते-ही-देखते बीमार पर्यावरण का स्वास्थ्य एकदम से चंगा हो गया है। गंगा और यमुना को अपना साफ पानी देखकर यकीन ही नहीं हो रहा है कि यह उसका ही पानी है। दोनों को यह याद नहीं कि आखिरी बार इतना साफ पानी कब देखा था।

जाति, धर्म, भाषा और क्षेत्र की विविधतावाले इस देश को कोरोना से यह तो जरूर सीखना चाहिए कि आदमी सब एक समान होता है। हम बेवजह भेदभाव और अलगाव की बेकार बातों में पड़े होते हैं। कोरोना को देखो, वह कैसे सभी जाति और धर्मवालों को बिल्कुल समान भाव से निपटा रहा है। हम मान गए कोरोना, तुमने साबित कर दिया है कि तुम्हीं सच्ची समदर्शी हो, 'समदर्शी नाम तिहारो।'

हमारे देश का बाजार चीन से बनी हुई चीजों से भरा पड़ा है। चाइनीज मोबाइल, चाइनीज खिलौने, चाइनीज इलेक्ट्रॉनिक गुड्स, चाइनीज लाइट्स-झालरें, चाइनीज पटाखे-फुलझड़ियाँ आदि-आदि बड़े धड़ल्ले से बेचे और खरीदे जाते रहे हैं। इतना ही नहीं, चाइनीज फूड और चाइनीज मसालों के इतने दीवाने हो गए हैं कि हम अपने देशी खानों को भूलते जा रहे हैं। हमें हर चीज में चाइनीज माल प्रयोग करते देख वक्त ने उपहारस्वरूप बीमारी भी चाइनीज दे दिया है। यह बताने की जरूरत नहीं कि चीन कितना दगाबाज मुल्क है, जो पूरी दुनिया को कोरोना में झोंक दिया है और खुद 'स्वान्तः सुखाय' में लिप्त हो गया है।

यों तो कोरोना ने सारे महाद्वीपों पर अपने पाँव जमा लिये हैं, फिर भी अमेरिकी और यूरोपीय उन देशों के नाक पर दम कर रखा है, जिन्होंने विकसित राष्ट्र होने का तमगा पहन रखा था। कोरोना के वार से अमेरिका, इटली, स्पेन, ब्रिटेन जैसे दंभी देशों की हेठी निकलकर बाहर आ गई है। अपने ज्ञान-विज्ञान और आर्थिक विकास पर इतराने वाले सारे शक्तिशाली देश छोटी सी कोरोना, जो ढंग से दिखाई भी नहीं देती, के सामने असहाय दिखाई पड़ रहे हैं।

धार्मिकों ने भी अपने सारे धार्मिक क्रियाकलापों पर कुछ दिन के लिए विराम लगा दिया है। पुजारियों, मालवियों और पादरियों की दुकानें चल नहीं रही हैं। हालात देखकर उनकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई है, उन्हें लग रहा है कि कहीं लोगों के मन से धार्मिकता ही न उठ जाए। कहीं ऐसा हुआ तो उनका तो व्यवसाय ही बंद हो जाएगा। मन-ही-मन सोच रहे होंगे कि 'हम हैं तो निठल्ले, कोई काम करने की आदी भी नहीं हैं, फिर करेंगे क्या?'

ऐसे डरे-सहमे, हताश-निराश और उदासी के इस आलम में प्रधानमंत्रीजी देश की जनता को बार-बार संदेश का कैप्सूल दे रहे हैं। उन्हें यह विश्वास है कि उनका यह संदेश जनता में एनर्जी सोर्स की तरह 'सप्लीमेंट्री फूड' का काम करेगी। जनता बड़ी कृतज्ञता से घंटी-थाली बजाकर और दीये-मोमबत्ती जलाकर अपने एनर्जी लेवल का सबूत भी दे रही है। इस बीच फेसबुकी और व्हाट्सेपी ज्ञानियों द्वारा खूब ज्ञान और उपदेश बाँटा जा रहा है। वही-वही मैसेज घूम-फिरकर बार-बार पढ़ने और सुनने को मिल रहा है कि 'घर में रहिए, सुरक्षित रहिए।' इतने बार याद दिलाने से कभी-कभी खुद पर भी भ्रम हो जाता है कि कहीं मैं सचमुच घर से बाहर तो नहीं आ गया हूँ!

बहरहाल, यह बड़ी कठिन परीक्षा की घड़ी है। इस घड़ी में हमारे संकल्प और संयम दोनों को खरा उतरना होगा। वैसे तो हम भारतीय विपरीत और कठिन परिस्थितियों में भी हास्य निकाल लेने की कला में माहिर होते हैं। बस, कुछ दिन और कमरों में रहें, ताकि घरवाली की यह शिकायत भी दूर हो जाए कि 'आप तो जी हमेशा बाहर रहते हो, घर में रहते ही नहीं।' इस भौतिक संसार में हर चीज क्षणभंगुर है, अस्थायी है, परिवर्तनशील है, आनी-जानी है। अतः यह तय मानिए, जो कोरोना संकट बनकर आया है, वह एक दिन जरूर जाएगा भी। तब तक बस यही दोहराते रहिए, "तुम कब जाओगे, कोरोना!"

राजमहल कॉलोनी, कवर्धा,
जिला : कबीरधाम-४९१९९५ (छत्तीसगढ़)
दूरभाष : ९७५५८५२४७९

दरवाजे

● लवलेश दत्त

मंदिर में आरती और घंटियों का मधुर संगीत मन की गहराइयों में उतर रहा था। धूप और अगरबत्तियों की सुगंध मन-मस्तिष्क को तरोताजा कर रही थी। फरवरी की ठंडी सुबह गुनगुनी धूप का स्पर्श ऐसा था कि महेंद्र आँखें बंद किये ईश्वर के ध्यान में डूबता जा रहा था। नए शहर में नयी नौकरी की पहली तनख्वाह के बाद इतना तो बनता ही है कि आज छुट्टी के दिन ईश्वर को प्रणाम किया जाए। इसी विचार से वह अपनी पहली-पहली तनख्वाह से कुछ फल-मिठाई लेकर मंदिर आया था। सबकुछ पंडितजी के हाथों में सौंपकर वह हाथ जोड़कर ईश्वर की प्रतिमा के सामने बैठा था। मंदिर के वातावरण उसके मन के किसी कोने में आस्था का नन्हा-सा दिया टिमटिमाने लगा। वह ध्यान की मुद्रा में बैठ गया। उसका मन बाहर की दुनिया से विरक्ति पाने ही वाला था कि उसके शरीर पर ठंडा पानी पड़ते ही पूरे शरीर में सिहरन दौड़ गई, मानो बिजली का करंट उसे लग गया हो। आस्था का नन्हा-सा दिया जरा से शारीरिक विचलन में बुझ गया और वह आँखें खोलकर एकदम उठ गया, "उफ! यह कौन···" उसने अपनी जगह से उठते हुए कहना चाहा, लेकिन जैसे ही उसकी नजर नीली साड़ी पर मक्खन के रंगवाली शॉल लपेटे हुए पास खड़ी उस युवती पर पड़ी वह स्तब्ध रह गया, 'यह क्या! इतनी सुंदर लड़की' वह मन ही मन बुदबुदाते हुए अपलक उसे निहारता रहा, 'कितनी सुंदर है यह! ऐसा लगता है कि राधाकृष्ण की युगल प्रतिमा की राधा साक्षात् मेरे सामने खड़ी है।' युवती पूजा की थाली पंडितजी को दे चुकी थी और हाथ जोड़कर आँखें बंद किए चुपचाप खड़ी थी। थाली पंडितजी को देते समय जलभरा लोटा थोड़ा असंतुलित हो जाने से ही थोड़ा-सा जल महेंद्र के ऊपर गिर पड़ा था। सिर पर पड़ी मक्खनी शॉल और हलके से झुके चेहरे पर रेशमी बालों की एक झूलती लट देखकर ऐसा लग रहा था कि कमल की कोमल कली अपनी पँखुड़ी खोलने ही वाली है। उसके सुंदर और दूध से सफेद हाथ, पैरों की गोरी व चिकनी एड़ियाँ ऐसी मालूम पड़ती थीं कि किसी कुशल शिल्पी ने बहुत सूक्ष्मता से संगमरमर तराश कर बनायी हों। सिर से पाँव तक वह संगमरमर से तराशी गई एक दिव्य प्रतिमा लग रही थी। शरीर पर पड़े पानी की सिरहन तो न जाने कब की समाप्त हो चुकी थी। हाँ मन में अब आस्था के स्थान पर प्रथमदृष्ट्या प्रेम का दीया टिमटिमाने लगा था।

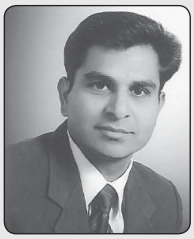

सुपरिचित कथाकार। अब तक 'भावत्रयी', 'तमन्ना'(काव्य-संग्रह), 'सपना', 'श्यामा', 'स्पर्श' (कहानी-संग्रह), 'कहानी प्रसंग', समकालीन गजल और विनय मिश्र (संपादित) तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी रामपुर से कहानी वाचन एवं प्रसारण। लखनऊ में 'बोल्ट अवार्ड', 'विद्यासागर सम्मान', 'साहित्यश्री सम्मान'।

वह उसे एकटक देख ही रहा था कि युवती ने पंडितजी से थाली वापस ली और महेंद्र की उपस्थिति से अनभिज्ञ वहाँ से चुपचाप चल दी। महेंद्र न केवल उसे निहारता रहा, बल्कि स्वयं पर नियंत्रण न रख पाने के कारण वह सबकुछ भूलकर किसी अनाजाने सम्मोहन से बँधा उसके पीछे-पीछे चल पड़ा। महेंद्र उचित दूरी पर उसके पीछे-पीछे चल रहा था। युवती मंदिर से कुछ दूर एक सँकरी गली में बढ़ गई। महेंद्र भी उसी गली में बढ़ चला। युवती उसके आने से अभी तक अनजान थी। महेंद्र ने देखा कि वह गली एक बड़े से चौक में खुलती है, जिसमें चारों तरफ एक जैसे मकान बने हैं। मकान के बाहर एक चौड़ा-सा सपाट चबूतरा उस पर ऊपर की ओर तीन दरवाजोंवाली एक खिड़की और एक तरफ एक दरवाजा। ऊपर एक छज्जा और छज्जे पर छह से आठ छोटी-छोटी खिड़कियाँ तथा छज्जे पर आने के लिए एक पतला-सा दरवाजा। महेंद्र ने नजर चारों तरफ घुमाई, सभी मकान आकार और बाहरी संरचना में एक समान थे। अंतर था तो केवल दरवाजों के रंग का—कहीं लाल तो कहीं हरे, कहीं नीले तो कहीं काले और एक-दो सफेद भी। ऐसा लग रहा था कि बड़े से डिब्बों को एक-एक करके खड़ा कर दिया गया है और उन पर दरवाजों व खिड़कियों की चित्रकारी करके बच्चों ने गुड्डे-गुड़ियों के लिए खिलौने जैसे मकान बना लिये हैं। मकानों के बाहर लकड़ी और टीन के खोखे थे, जिनमें अधिकांश बंद थे। जो दो-एक खुले थे, उनमें चाय और पकौड़ियाँ बनाई जा रही थीं। चौक में तीन-चार बच्चे खेल रहे थे। वह उस नए स्थान को आश्चर्य से देख

ही रहा था कि वह युवती सामने के एक पीले दरवाजे वाले मकान में चली गई और दरवाजा बंद हो गया। उसने सोचा कि आगे बढ़कर उस घर तक जाए, लेकिन फिर किसी अनजाने भय के कारण वह वापस हो लिया। लौटते समय उसके मन में एक प्रसन्नता भी थी कि कुछ भी हो उसने कम-से-कम उस लड़की का घर तो देख लिया। किसी दिन उससे बात करने के लिए किसी-न-किसी बहाने से उसके घर भी चला जाएगा। वह मंदिर लौटा और अपना प्रसाद लेकर वापस चला गया।

अकसर छुट्टी वाले दिन वह मंदिर जाने लगा, लेकिन अब उसका ध्यान ईश्वर के चरणों में न लगकर उस युवती की प्रतीक्षा में लगने लगा। वह हमेशा तो नहीं लेकिन कभी-कभी मंदिर आती थी और महेंद्र उसी तरह चुपके-चुपके उसके पीछे जाता था। युवती उसके पीछे आने से अनजान ही रहती। हर बार उसे देखने से महेंद्र के मन में उसके प्रति प्रेम की बेल पनपने लगी थी। उसने मन-ही-मन उस युवती से बात करने तथा उससे विवाह करने का स्वप्न देख डाला था। मंदिर पहुँचकर उसका कार्य ईश्वर को प्रणाम करके मन-ही-मन अपनी प्रेयसी के आने की प्रार्थना करना और उसकी बाट जोहना था। युवती के आने में कभी-कभी विलंब हो जाने से वह बेचैन हो मंदिर से गली तक चहलकदमी भी करता तो कभी-कभी वह ईश्वर की प्रतिमा के सामने हाथ जोड़कर मन ही मन बुदबुदाता, 'हे प्रभु! आज ऐसा अवसर मिल जाए कि उससे बात हो जाए।' एक किशोर के मन में उठी पहले प्रेम की तरंग की तरह उसका मन भी हिलोरें मारने लगा था। ऐसे ही एक दिन उसे वह अवसर मिल गया, जब उसने बहुत हिम्मत करके उसका रास्ता रोका और उससे उसका नाम पूछा, लेकिन युवती ने अपना नाम न बताकर उस पर एक नजर डाली और मुसकराती हुई चली गई। उसका मुसकराना था कि महेंद्र का दिल उस मुसकराहट के जादू से बँध गया और उसने अपने प्रेम की स्वीकृति मिलती हुई सी प्रतीत हुई। अब तो अकसर वह युवती मंदिर में बैठे महेंद्र की ओर देखती और हँसती मुसकराती हुई चली जाती। हालाँकि अब तक उससे महेंद्र की कोई स्पष्ट बातचीत नहीं हुई थी, लेकिन दोनों की आँखें मिल चुकी थीं। आँखें ही तो हैं, जो हाले-दिल बताने में नहीं चूकतीं। हमारे मन की हर बात आँखों के आईने में दिखाई दे जाती है। अगर ऐसा नहीं होता तो आँखों के उदास होने, हँसने, मुसकराने, बोलने आदि के सारे मुहावरे झूठे हो जाते। महेंद्र ने भी उस युवती की आँखों में अपने प्रेम की स्वीकृति को ढूँढ़ ही लिया। दोनों पर आँखों का जादू ऐसा चला कि दोनों के मन में प्रेम की धूनी रमने लगी।

उस दिन भी हमेशा की तरह वह उसके पीछे-पीछे जा रहा था कि चौक में पहुँचकर अचानक किसी हट्टे-कट्टे आदमी ने पीछे से उसकी गरदन पकड़ ली। वह सकपका गया। इससे पहले वह कुछ कर या कह पाता, वह आदमी बोल पड़ा, "क्यों बे..., क्या चाहिए तुझे? बहुत दिन से देख रहा हूँ कि तू काजल के पीछा कर रहा है।" महेंद्र ने उससे अपनी गरदन छुड़ाई और बहुत शालीनता से बोला, "वह लड़की कौन है? मुझे उससे बात करनी है।" आदमी मुसकराते हुए बोला, "यहाँ जो आता है उसे किसी-न-किसी से बात ही तो करनी होती है, बात हो गई तो सौदा पट गया, पर सुबह-सुबह...जाओ उससे बात करने के लिए शाम को सात बजे आना।"

उस दिन भी हमेशा की तरह वह उसके पीछे-पीछे जा रहा था कि चौक में पहुँचकर अचानक किसी हट्टे-कट्टे आदमी ने पीछे से उसकी गरदन पकड़ ली। वह सकपका गया। इससे पहले वह कुछ कर या कह पाता, वह आदमी बोल पड़ा, "क्यों बे···, क्या चाहिए तुझे? बहुत दिन से देख रहा हूँ कि तू काजल के पीछा कर रहा है।" महेंद्र ने उससे अपनी गरदन छुड़ाई और बहुत शालीनता से बोला, "वह लड़की कौन है? मुझे उससे बात करनी है।" आदमी मुसकराते हुए बोला, "यहाँ जो आता है उसे किसी-न-किसी से बात ही तो करनी होती है, बात हो गई तो सौदा पट गया, पर सुबह-सुबह···जाओ उससे बात करने के लिए शाम को सात बजे आना।"

"शाम को क्यों? अभी क्यों नहीं?" महेंद्र ने आश्चर्य से पूछा।

"क्योंकि वेश्याएँ दिन में किसी से बात नहीं करतीं···" कहकर वह आदमी जोर से हँसा।

महेंद्र को काटो तो खून नहीं। उसे लगा कि उसे सैकड़ो बिच्छुओं ने डंक मार दिया हो। उसके कान में किसी ने खौलता हुआ तेल डाल दिया हो। अभी कुछ देर पहले जो गुलाबी ठंडी सुबह उसके शरीर को भा रही थी वह सैकडों काँटों के चुभने का दर्द उसे देने लगी।"क्या बकवास कर रहे हो", उसने गुस्से में कहा।

"मैं बकवास नहीं कर रहा हूँ बाबू, यह तवायफों का चौक है। ये जो सामने के घर देख रहे हो न, इन सबमें तवायफें रहती हैं। यहाँ की रौनक देखनी हो तो शाम को आना, इस समय तो यहाँ मुरदे लोटते हैं" उस आदमी ने बीड़ी सुलगाते हुए बहुत शान्त भाव से कहा।

महेंद्र को अपने चारों ओर वे मकान घूमते हुए लगने लगे। इतने दिनों में उस युवती के लिए पनपे प्रेम को लेकर उसने जो कुछ सोचा था, वह सब धूमिल होने लगा। उसे लगा कि उसकी स्मृति खोती जा रही है। उसे अचानक बहुत गरमी लगने लगी। उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या किया जाए। वह कुछ सोच पाता कि वह आदमी फिर बोला, "मदन···मदन दलाल कहते हैं मुझे। शाम को आना, जिससे चाहोगे, उससे बात करवा दूँगा। अब फूटो यहाँ से···" अंतिम वाक्य उसने इतनी कठोरता से कहा कि महेंद्र को अपने सारे सपने चूर-चूर होते दिखने लगे, लेकिन शाम को आकर एक बार उस युवती से बात करने की इच्छा उसके मन से नहीं गई। वह थके कदमों से वापस लौटने लगा और याद करने लगा कि उस आदमी ने क्या नाम बताया था उसका 'का···ज···ल···हाँ, काजल, चलो आज शाम को ही आऊँगा' सोचते हुए वह लौट ही रहा था कि मदन ने पीछे से कहा, "सीधे मेरे पास आना बाबू···कहीं और मत भटक जाना···यह दस नंबरवाला खोखा अपना ही है।" महेंद्र ने एक बार पीछे

मुड़कर देखा और वहाँ से अपने कमरे पर लौट आया।

वापस आकर वह उस आदमी की कही बातों को दोहराता रहा। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि काजल एक वेश्या है। रह-रहकर काजल की दिव्य प्रतिमा जैसी छवि उसकी आँखों में आ रही थी, 'ऐसी सुंदर, सुशील, शांत और कोमल लड़की और वेश्या···नहीं···नहीं··· जरूर कहीं कुछ गड़बड़ है। काजल वेश्या नहीं हो सकती। लेकिन यदि सचमुच वह वेश्या हुई तो···तो क्या···मैंने उससे प्रेम किया है···मैं उसे उस गंदगी से बाहर निकालने की पूरी कोशिश करूँगा···पर मुझे यकीन है कि वह वेश्या नहीं हो सकती···उस मदन ने मुझसे झूठ कहा है···वह वेश्या नहीं हो सकती···' ऐसे न जाने कितनी बातें उसके मन-मस्तिष्क को झकझोर रही थीं। जैसे-जैसे समय बीत रहा थाकाजल से एकबार बात करने की इच्छा प्रबल होती जाती थी। उसके साथ ही उसके वेश्या होने की बात याद करके उसकी बेचैनी बढ़ती जाती। वह बेसब्री से शाम का इंतजार करने लगा। बार-बार उसकी नजर घड़ी पर जाती, पता नहीं क्यों, उसे लग रहा था कि घड़ी की सुइयाँ आज बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़ रही हैं। वह कभी अपना ट्रांजिस्टर खोलता, तो कभी अपने मोबाइल में समय देखता लेकिन समय तो अपनी ही गति से बढ़ेगा, यह और बात है कि प्रतीक्षा की घड़ियों में समय धीरे-धीरे बीतता हुआ लगता है और मिलन की घड़ियाँ उसी समय को तेजी से बढ़ाती हुई लगती हैं। शाम के इंतजार में उस उदास दोपहर में उसकी आँख लग गई। समय अपनी गति से बढ़ते-बढ़ते शाम तक आ ही पहुँचा। वह झटके से उठा तो देखा घड़ी में साढ़े पाँच बजे हैं। वह झटपट तैयार हुआ और अपने कमरे से निकल पड़ा। कमरे से मंदिर, और मंदिर से उस गली तक का रास्ता उसने कब तय कर लिया, उसे पता ही नहीं चला। उसने घड़ी देखी, पौने सात बज रहे थे।

पता नहीं क्यों आज उस गली में आगे बढ़ते हुए उसके पैर काँप रहे थे। उसका दिल जोरों से धड़क रहा था। उसके हाथ-पाँव ठंडे हुए जा रहे थे। उसका गला सूख रहा था। होंठ खुश्क हो रहे थे। कभी दो मिनट में तय हो जानेवाली कुछ मीटर की गली आज कितनी लंबी लग रही थी। एक-एक कदम मानों कई-कई मीटर लंबा हो गया था। वह जितना उस गली में बढ़ता जाता गली उतनी ही लंबी प्रतीत होती। फिर भी वह पूरी हिम्मत से गली में आगे बढ़ता जा रहा था कि अचानक एक भारी-भरकम हाथ उसके कंधे पर आया, उसने चौंककर पीछे देखा, मदन था। पर इस समय उसका हुलिया सुबह से बिल्कुल अलग लग रहा था। फिल्मों में जैसे इस तरह के लोगों का हुलिया दिखाते हैं—सिर पर टोपी, हाथ में रुमाल, आँखों में काजल और मुँह में पान, बिल्कुल उसी हुलिए में मदन ने मुसकराते हुए महेंद्र से कहा, "सबर नहीं हुआ बाबू···पंद्रह मिनट पहले ही चले आए···अभी तो बाजार जमा भी नहीं··· अरे थोड़ा रात जवान होने दो···चाँदनी का सुरूर चढ़ने दो···तब मजा है बातों का···" कहते हुए वह अश्लील इशारा करने लगा। महेंद्र का मुँह कड़वा हो उठा। उसकी इस हरकत पर उसने अपने कंधे से उसका हाथ हटा दिया और बोला, "मुझे फालतू की बातें नहीं सुननी हैं, मुझे सीधे उसके···क्या नाम है···काजल के घर ले चलो···" मदन ने यह सुना तो हँसते हुए बोला, "अरे हुजूर इतने उतावले मत होइए···उतावलेपन से बात ठीक से नहीं हो पाती और फिर···" कहकर उसने फिर अश्लील इशारा किया। महेंद्र के चेहरे पर घृणा के भाव उभरने से पहले ही वे गली पार करके चौक में आ चुके थे।

शाम को चौक का दृश्य देखते ही महेंद्र की आँखें खुली रह गईं। हर मकान रंग-बिरंगी रोशनी से दमक रहा था। पूरे वातावरण में न जाने कैसी मदहोशी छाई थी। सुबह के वक्त जो खोखे बंद थे, इस समय वे सब-के-सब खुल चुके थे। कहीं पर खाने-पीने का सामान, तो कहीं पान बिक रहा था। कहीं पर फूलों की लड़ियाँ थीं, तो कहीं पर खुलेआम शराब बिक रही थी। लगभग हर खोखे में पीछे की तरफ अर्द्धनग्न लड़कियों के चित्र टँगे थे, जिस पर गर्भनिरोधकों के विज्ञापनों के साथ वैधानिक चेतावनी 'असुरक्षित यौन संबंधों से एड्स हो सकता है' लिखी हुई थी। महेंद्र ने कुछ खोखों पर नजर डालने के बाद वितृष्णा से मुँह फेर लिया और मकानों की ओर देखने लगा। लगभग हर मकान से रिकॉर्डेड संगीत की हलकी-हलकी आवाज आ रही थी। किसी-किसी मकान में से लड़कियों की अश्लील बातें भी सुनाई पड़ रही थीं। मकानों के दरवाजे खुले थे। ऊपर खिड़कियाँ खुलीं थीं। कुछ खिड़कियों में से झाँकती तो कुछ में सिगरेट फूँकती लड़कियाँ दिख रही थीं। कुछ लड़कियाँ बैठी हुई फूहड़ इशारे कर रही थीं और कुछ खिलखिलाकर हँस रही थीं। महेंद्र ने चारों ओर एक नजर डाली और काजल के मकान की तरफ देखने लगा, जिसमें दरवाजा तो खुला था, लेकिन ऊपर छज्जे की खिड़की बंद थी। अब तक उसने सोच लिया था कि शायद काजल भी उन्हीं में से किसी खिड़की में से झाँकती हुई नजर आ जाएगी। उसकी नजरें काजल के मकान और उसके ऊपर छज्जे की ओर कुछ पल के लिए रुक गई। लेकिन वह बंद खिड़की बंद ही रही। इससे पहले वह कुछ और सोच पाता, मदन बोल पड़ा, "चलिए साहब, कहाँ चलना है, किससे बात करनी है?"

"व···वो···क···का···जल" हिचकते हुए महेंद्र ने कहा।

"ओहो···हुजूर के शौक के क्या कहने? अरे हुजूर वह तो कच्ची कली है। सबसे मँहगी है। सुना है मैडम तो उस पर नजर भी नहीं डालने देतीं और आप तो···," मदन ने महेंद्र को ऊपर से नीचे तक देखा और अपनी बात आगे बढ़ाई, "इतना मँहगा माल खरीदने की हैसियत तो

नहीं लगती हुजूरकी, फिर भी इस कँगले पर रहम कीजिए तो आपको उसकी मैडम के पास ले चलूँ? क्या पता सारे पत्ते अंदर ही खुलें?" कहते हुए उसने अपना दाहिना हाथ बढ़ाया और बाएँ हाथ से दाहिने हाथ की हथेली खुजलाते हुए पैसे माँगने का इशारा किया। महेंद्र ने चिढ़ते हुए सौ रुपए का नोट उसकी हथेली पर रख दिया। मदन ने नोट को सिगरेट की तरह गोल बनाकर अपनी कनपटी पर लगा लिया और उसे लेकर काजल के मकान की तरफ चल दिया। दरवाजा खुला था। दोनों उसमें प्रविष्ट हो गए। अंदर दाहिनी ओर एक और दरवाजा था, जिसके ऊपर 'मैनेजर ऑफिस' लिखा था। मदन, महेंद्र को ऑफिस में ले गया। ऑफिस बेले और गुलाब की भीनी सुगंध के भरा था। सामने एक बड़ी सी मेज पर एक लेपटॉप रखा था। मेज के एक किनारे गुलदस्ते में गुलाब के ताजा फूल महक रहे थे। मेज के पीछे रिवॉल्विलिंग चेयर थी, जिस पर एक मोटी सी अधेड़ औरत बैठी हुई थी। उसका चेहरा मेकअप के कारण खूब चमक रहा था। दोनों भवें बहुत पैनी बनी हुई थीं। नाक सुडौल थी। होंठों पर लिपिस्टिक और आँखों में काजल। कानों में बड़े-बड़े झुमके लटक रहे थे। उसके घने काले बालों की मोटी चोटी में बेले के फूलों की कई सारी लड़ियाँ लटक रही थीं। लगता था कि अपने ग्राहकों को रिझाने और लुभाने के लिए वह अभी-अभी बन-सँवरकर आई है। सूरत से अत्यंत क्रूर, असंवेदनशील और अशिष्ट लगनेवाली उस औरत की बदमिजाजी आँखों से ही झलक रही थी। वह बराबर रिवॉल्विंग चेयर को दाएँ-बाएँ घुमा रही थी और लेपटॉप पर कोई पिक्चर देख रही थी, जिसमें किसी लड़की के चीखने की आवाज आ रही थी और उस आवाज पर उस औरत के चेहरे के भाव बदल रहे थे।

पानी पीने के बाद महेंद्र ने कहा, "आंटी...आप जैसा समझ रही हैं, वैसा बिल्कुल भी नहीं है। मेरा नाम महेंद्र है। मैं इस शहर में एक कंपनी में नौकरी करता हूँ। माँ-बाप कोई नहीं है। एक तरह से अनाथ हूँ। जैसे-तैसे पढ़-लिखकर मैं अपने पैरों पर खड़ा हुआ हूँ। कंपनी ने मुझे नौकरी देते हुए इस शहर में भेज दिया। उस दिन मैंने काजल को मंदिर में देखा तो..." महेंद्र ने सारी बात कह सुनाई। कुछ पल मौन रहकर उसने कहा, "मैं काजल से प्यार करने लगा हूँ। उसको अपनी जिंदगी में लाने और उसे हर खुशी देने के लिए कुछ भी कर जाऊँगा।"

मदन ने हिचकते हुए कहा, "म···मैडम··· यह बाबू···"

"क्या है बे···भड़ुवे···भो···के" अश्लील गाली देते हुए उस औरत ने मदन की ओर देखा और आगे बोली, "ये नमूना कौन है? क्या चाहिए? कह दे, हम दान-वान नहीं देते। कहीं और जाकर मरे।"

"आंटी, मैं काजल से मिलने आया हूँ" बड़ी शालीनता से महेंद्र ने कहा। औरत की तीखी नजर महेंद्र पर पड़ी। उसने पिक्चर को पॉज किया और मदन को इशारे से जाने के लिए कहकर महेंद्र को सामने पड़ी कुरसी पर बैठने के लिए कहा। महेंद्र के बैठने के बाद उसने एकबार फिर बहुत गौर से उसे देखा और घंटी बजाई। कुछ ही सेकेंड्स में एक पंद्रह-सोलह साल का लड़का एक ट्रे में दो गिलासों में पानी लेकर आ गया। लड़के ने ट्रे पहले महेंद्र के आगे बढ़ाई और फिर उस औरत की ओर। पानी का गिलास उठाकर महेंद्र ने होंठों से लगाया ही था कि वह औरत बोल पड़ी, "तुम्हें देखकर ऐसा नहीं लगता कि तुम किसी बड़े बाप की औलाद हो और न ही बहुत पैसेवाले दिखते हो, जो अपना शौक पूरे करने के लिए पैसे उड़ाता है। तुम्हें देखकर तुम्हारी हैसियत भी नहीं लगती कि ऐसे शौक करो, फिर इतना बड़ा ख्वाब देखने की क्या जरूरत है?" कहते हुए उसने भी गिलास होठों से लगा लिया।

पानी पीने के बाद महेंद्र ने कहा, "आंटी···आप जैसा समझ रही हैं, वैसा बिल्कुल भी नहीं है। मेरा नाम महेंद्र है। मैं इस शहर में एक कंपनी में नौकरी करता हूँ। माँ-बाप कोई नहीं है। एक तरह से अनाथ हूँ। जैसे-तैसे पढ़-लिखकर मैं अपने पैरों पर खड़ा हुआ हूँ। कंपनी ने मुझे नौकरी देते हुए इस शहर में भेज दिया। उस दिन मैंने काजल को मंदिर में देखा तो···" महेंद्र ने सारी बात कह सुनाई। कुछ पल मौन रहकर उसने कहा, "मैं काजल से प्यार करने लगा हूँ। उसको अपनी जिंदगी में लाने और उसे हर खुशी देने के लिए कुछ भी कर जाऊँगा।" वह औरत जिसकी आँखें अब तक बहुत खूँखार लग रह थीं, महेंद्र की निश्छल आँखों में झाँकते हुए समझ चुकी थी कि महेंद्र उन लोगों में से नहीं है, जो इन दरवाजों में वासना लिए घुसते हैं और अपनी आँखों से ही औरत के जिस्म की बोटी-बोटी नोच लेना चाहते हैं। वह समझ चुकी थी कि महेंद्र एक सच्चा और नेक इनसान है। उसकी आँखों में सच्चाई की चमक है, एक निश्छलता है। अब उसने महेंद्र से बहुत सभ्यता से बोलना आरंभ कर दिया, "महेंद्र, तुम भले ही अनाथ हो, पर तुम्हारी आँखों में एक सच्चे और अच्छे इनसान की चमक है। मुझे नहीं पता कि तुमने मुझे किस रिश्ते से आंटी कहा, लेकिन मैं तुम्हें बताना चाहती हूँ कि हमारी इस दुनिया से तुम दूर ही रहो तो अच्छा है। वरना बिना वजह किसी मुसीबत में फँस जाओगे और···" कहकर वह रुक गई और गिलास में बचा पानी गटक गई।

"कैसी मुसीबत आंटी···मैं तो बस यह जानना चाहता हूँ कि क्या काजल भी वे···" महेंद्र ने कहा।

"नहीं···बिल्कुल नहीं···वह बेचारी तो एकदम निर्दोष है, निष्कलंक है और गंगा की तरह पवित्र है। वह तो भगवान् के प्रसाद की तरह माथे से लगाने योग्य है" कुछ रुकते हुए वह औरत बोली, "मेरे पापों के कारण वह अभागिन इन दरवाजों में कैद हो गई है, पता नहीं कब उसे इस कैद से छुटकारा मिलेगा?" कहते हुए उस औरत की आँखों में पानी आ गया।

कुछ पल रुककर महेंद्र ने कहा, "ऐसा क्या है आंटी···यदि आप चाहें तो मुझे बता सकती हैं। हो सकता है मैं ही कोई रास्ता बता दूँ।"

अपनी मेज की दराज से रूमाल निकालकर उसने आँखें पोंछीं और फिर बोली, "बहुत पुरानी बात है महेंद्र! लगभग बीस साल पहले तब मैं इस धंधे में नहीं आई थी और अपनी माँ के साथ यहीं इसी चौक में रहती थी। तुम्हारी ही तरह एक इनसान इस दरवाजे में आया था और मेरा दीवाना बन बैठा। जोगिंदर नाम था उसका। मुझसे शादी करके अपनी बीवी बनाना चाहता था। उसने मुझे बाहर की दुनिया के सपने दिखाए। उसके मन में बिल्कुल वैसी ही सच्चाई थी, जैसी तुम्हारे मन में है। मैं उसकी नेकदिली पर फिदा हो गई। मैंने बहुत से मर्द देखे, लेकिन मर्दांगी नहीं देखी, क्योंकि मर्दांगी के लिए केवल शरीर ही नहीं, बल्कि दिल भी देखा जाता है। शरीर और दिल का यह अनोखा जोड़ केवल मेरे जोगिंदर में था। मैं उसके लिए सबकुछ छोड़ने को तैयार थी। मैं उसके प्यार में पूरी तरह पागल हो चुकी थी और इस गंदे समाज के साथ-साथ अपनी माँ से भी बगावत करने को तैयार थी। मेरी माँ ने मुझे बहुत समझाया कि 'हम तवायफों को किसी एक आदमी से प्यार करने की आजादी नहीं है। हमें सबसे प्यार करने का हक है और उन सबमें भी उससे सबसे ज्यादा जिसकी जेब भारी हो। हमारी यही परंपरा रही है। मेरी माँ और उसकी माँ और उसकी भी माँ सब इन्हीं दरवाजों के पीछे कैद रहीं और इन्हीं दरवाजों के पीछे की रस्में और नियम मानती आई थीं। मेरी माँ ने मुझसे कहा था कि "ये दरवाजे बाहर से अंदर की ओर खुलते हैं। अंदर से बाहर की ओर नहीं। हमें बाहर की दुनिया केवल खिड़कियाँ खोलकर ही देखने का हक़ है। बाहर निकलने का नहीं। हम खुले आकाश के नीचे, नदियों के किनारे, पहाडों पर, मैदानों में अपनी इच्छा से नहीं जा सकते हमारी किस्मत में ये बंद दरवाजे ही हैं" कहकर उसने फिर अपनी आँखों में आए पानी को पोंछा। खँखार कर गला साफ किया और अपने बीते जीवन की कहानी सुनाने लगी, "···मैंने अपनी माँ की बात नहीं मानी और एक दिन उसके साथ भाग गई। वह मुझे लेकर अपने दोस्तों के यहाँ जाता रहा, क्योंकि किसी रिश्तेदारी में मुझे लेकर नहीं जा सकता था, इसलिए एक के बाद दूसरे और दूसरे के बाद तीसरे दोस्त के घर एक, दो या तीन दिन बिताते हुए हमने किसी तरह एक महीना काटा। ऐसे ही यहाँ-वहाँ जाते हुए एक रात जब हम थककर एक मंदिर में आराम करने के लिए बैठे हुए थे तो बुरी तरह घायल एक औरत मेरे पास आई, उसकी गोद में एक नन्हीं-सी बच्ची थी। उसने वह बच्ची मेरी गोद में देते हुए कहा कि "मेरी बच्ची को बचा लो, वो लोग इसे जिंदा दफन करना चाहते हैं।" उसकी बात सुनकर हम दोनों के होश उड़ गए। इससे पहले कि हम उस औरत से कुछ पूछते वह आगे भाग गई और अँधेरे में गुम हो गई। जोगिंदर ने मुझे उस बच्ची के साथ मंदिर के अंदर जाने की सलाह दी और खुद उस औरत को ढूँढ़ने चला गया। मैं बच्ची को लेकर मंदिर में आ गई। मंदिर में कोई उत्सव चल रहा था। भगवान् के भजन और कीर्तन हो रहे थे। मैं उस भीड़ में शामिल हो गई। जब बहुत देर हो गई तो मैं बाहर आई। बाहर आकर देखा जोगिंदर बुरी तरह से घायल था और अपनी अंतिम साँसें गिन रहा था। उसने मरते हुए मुझे बताया कि वह औरत पकड़ी गई। उसके गाँव के लोगों ने उसे पीट-पीटकर मार डाला। उन्हीं से हाथापाई में जोगिंदर पर भी कई वार हुए, जिससे वह बुरी तरह घायल हो गया था। मरने से पहले उस औरत ने जोगिंदर को 'भाई' कहा और उसकी बच्ची को एक अच्छा इनसान बनाने का वादा लिया। यह कहकर जोगिंदर ने वही वादा मुझसे भी लिया और हमेशा के लिए मुझे छोड़कर चला गया"

इतना कहकर वह जोर से रो पड़ी। महेंद्र की आँखें भी नम हो रही थीं। खुद को संयत करके वह पुन: बोली, "दूसरों के लिए अपनी जान दाँव पर लगानेवाले उस जोगिंदर की आँखों में उस अजनबी बच्ची के लिए प्यार और मुझ पर किए गए विश्वास का कर्ज बनकर वह बच्ची मेरे साथ इस चौक में आ गई। मेरी माँ को जब यह पता चला तो पहले तो उसने मुझे खूब खरी-खोटी सुनाई, लेकिन फिर जोगिंदर की नेक दिली और उस बच्ची को देखकर माँ का दिल पसीज गया। अब मैं फिर इस बाजार में और इन दरवाजों के पीछे आ चुकी थी, इसलिए मुझे यहाँ के नियम मानने पड़े। मैं नहीं चाहती थी कि इस धंधे में उतरूँ, लेकिन बच्ची की परवरिश और उसे अच्छा इनसान बनाने का जो वादा, मैंने जोगिंदर से किया था, उसे निभाने के लिए मुझे पैसों की जरूरत थी। उधर मेरी माँ भी बूढ़ी हो रही थी और उसे इन सफेद दरवाजों के पीछे जाने से बचाने का फर्ज भी मेरा था, इसलिए न चाहते हुए भी मुझे इस धंधे में आना ही पड़ा, पर ईश्वर साक्षी है कि मैंने उस बच्ची को अपनी बेटी की तरह पाला है और उसे बी.ए. तक पढ़ाया भी है। अब तो बस यही तमन्ना है कि किसी तरह वह इन दरवाजों की कैद से बाहर निकल जाए और एक अच्छे इनसान की जिंदगी जिए।" कहते हुए उसकी आँखों से पानी बह निकला। अपने को सँभालते हुए वह फिर बोली, "यह जो बाहर अलग-अलग रंग के दरवाजे हैं न···यही हम तवायफों की किस्मत है। मैं नहीं चाहती कि मेरी बच्ची की किस्मत में ये दरवाजें हों।"

"अलग-अलग रंग किस्मत कैसे हो सकते हैं आंटी?" महेंद्र ने रुमाल से अपनी आँखें पोंछते हुए पूछा।

"लाल रंग के दरवाजे के पीछे वे तवायफें रहती हैं, जिनका धंधा जोरों से चल रहा है और अभी कुछ सालों तक चलता रहेगा। हरे रंग के दरवाजे के पीछे वे हैं, जो एक या दो साल पहले इस धंधे में आई

हैं। नीले रंग के दरवाजें उन तवायफों के लिए हैं, जिनका धंधा खत्म होनेवाला है और उनकी लड़कियाँ इस धंधे को अपनाने के लिए तैयार हो रही हैं।" उसने कहा।

महेंद्र को याद आया कि उसने सफेद और काले रंग के दरवाजे भी देखे हैं। उसने तुरंत प्रश्न किया, "सफेद और काले रंग के···" इससे पहले कि महेंद्र की बात पूरी होती वह औरत बोल पड़ी, "सफेद रंग के दरवाजे के पीछे वे बूढ़ी तवायफें हैं, जिन्होंने न तो लड़की पैदा की और न ही किसी लड़की को गोद लेकर, चुराकर या खरीदकर अपने धंधे में डाला। उनकी बूढ़ी हड्डियों ने जिस तरह उनकी खाल को छोड़ दिया है, उसी तरह इस धंधे ने भी उन्हें छोड़ दिया है। वे यहाँ रहने और खाने के लिए भीख माँगकर पैसा लाती हैं और यहाँ जमा करती हैं, जिससे उन्हें दो वक्त की रोटी मिल सके और काले दरवाजे उन बदकिस्मत लड़कियों के हैं, जिन्होंने किसी से प्यार किया और उनके प्यार की निशानी अपने पेट में लेकर यहाँ आ गईं। उन्हें यहाँ केवल इस उम्मीद से रहने दिया जाता है कि वे कभी-न-कभी इस धंधे में उतर आएँगी। अगर समय रहते नहीं उतरतीं तो उन्हें यहाँ से बाहर फेंक दिया जाएगा या फिर अपंग बनाकर सफेद दरवाजे के पीछे धकेल दिया जाएगा और वे भीख माँगकर पैसा लाएँगी। सब बिजनेस है महेंद्र···बिजनेस।"

"लेकिन आपका दरवाजा तो शायद पीले रंग का है तो आप···" महेंद्र ने कुछ हिचकते हुए पूछा।

"मैं पहले काले दरवाजे के पीछे रहती थी···लेकिन···अब मैं यहाँ की मैनेजर हूँ। यहाँ का सारा पैसा मेरे पास आता है और सारा खर्च निकालकर बचा हुआ पैसा···मुझे इस जगह के मालिक को देना पड़ता है।" औरत ने कहा।

"जगह के मालिक···कौन है वह?" महेंद्र ने आश्चर्य से पूछा।

वह औरत थोड़ी देर तक खामोश रही फिर बोली, "रहने दो बेटा, क्या करोगे जानकर?"

"नहीं आंटी, आप बताइए ना कौन है यहाँ का मालिक?" महेंद्र ने पूछा।

"यहाँ का मालिक बहुत बड़ा आदमी है। उसके बहुत सारे बिजनेस हैं, उन्हीं में से एक बिजनेस यह भी है। मुझे डर है कि कहीं उसकी नजर काजल पर न पड़ जाए, वरना वह काजल को···" वह कह ही रही थी कि मदन हाँफता हुआ उसके ऑफिस में आया, "मैडम··· सेठ आया है।"

"क्या···ओह···चलो-चलो जल्दी करो···महेंद्र को छुपाओ जल्दी···" कहकर उसने महेंद्र को उस ऑफिस में ऊपर बनी दुछत्ती में चढ़ा दिया और बाहर से ताला लगाकर खुद ऑफिस के दरवाजे पर सेठ की अगवानी करने को खड़ी हो गई।

महेंद्र ने दुछत्ती में लगी किवाड़ के दोनों पल्लों के बीच खुली झिरी से देखा तो एकदम चौंक गया, 'अरे···यह तो मेरी कंपनी का मालिक है सेठ अमीरचंद। इसका मतलब यह यहाँ का···' महेंद्र को अपनी आँखों और कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। उसे लग रहा था कि सचमुच बाहर की दुनिया में लोग न जाने कितने मुखौटे लगाए घूमते हैं। जब जैसी जरूरत होती है, वैसा मुखौटा लगाकर दुनिया के सामने आते हैं। अपनी कंपनी के मालिक जिस अमीरचंद को कल तक वह बहुत धर्मात्मा समझता था, उसका असली चेहरा आज दिखाई दिया है। वह मन-ही-मन उसे धिक्कारने लगा और चुपचाप उन दोनों की बातें सुनने लगा। सेठ कह रहा था, "सुना है चाँदनी कि नई चिड़िया आई है···एकदम कच्ची कली···क्या सच है?"

"नहीं हुजूर···अगर ऐसा होता तो आपकी अगवानी मैं करती क्या? सबसे पहले आपकी सेवा हाजिर करती," चाँदनी ने स्वयं को सँभालते हुए कहा।

"वही तो मैं कहूँ कि मेरी चाँदनी को क्या हो गया, जो मुझसे झूठ बोलेगी? नई मुरगी आए और मुझे न पता चले, ऐसा कैसे हो सकता है? चाँदनी, मेरी जान, मुझे सच-सच बताना, वरना तुम तो जानती हो··· हम इस जगह एक बड़ा होटल बनवाना चाहते हैं।" सेठ ने आँख मारते हुए उस औरत से कहा, "और हाँ, कुछ हिसाब-किताब भी नहीं मिल पा रहा है कुछ दिनों से···देख लो···मैं दो-चार रोज इसी शहर में हूँ।"

"ज···जी हुजूर···आपकी सेवा में मैं हाजिर हूँ···आप जब कहें हिसाब लेकर आ जाऊँगी बँगले पर···" चाँदनी ने हिचकते हुए कहा।

"न···न···तुम नहीं वही कच्ची कली आएगी हिसाब लेकर, वह भी कल सुबह···हम नाश्ता उसी के साथ करेंगे और अगर नहीं आई तो···" कहकर सेठ कुरसी से उठ गया और दरवाजे की ओर जाने लगा।

"पर···पर सेठजी वह मेरी दूर की रिश्तेदार···" चाँदनी ने कहना चाहा, लेकिन सेठ वापस मुड़ा और हँसते हुए बोला, "रिश्तेदार··· एक रात के बाद तो हम भी तुम्हारे रिश्तेदार बन जाएँगे जानेमन··· हमारी रिश्तेदारी खूब जमेगी···और तुम तो जानती ही हो कि हम बहुत अच्छा रिश्ता निभाते हैं···" कहते हुए सेठ ने चाँदनी के वक्षस्थल पर अपना हाथ मारा और वहाँ से चला गया। यह देखकर महेंद्र का खून खौल उठा। उसे अमीरचंद और उसकी कंपनी में नौकरी करने से नफरत होने लगी। उसने तुरंत ही उसकी नौकरी छोड़ने का फैसला कर लिया।

सेठ की बात सुनकर चाँदनी का चेहरा सफेद पड़ गया। उसे जैसे लकवा मार गया था। वह अपनी कुरसी पर धँस गई और मन-ही-मन सेठ को कोसने लगी। कुछ देर के बाद उसने महेंद्र को उस दुछत्तीवाली कोठरी से बाहर निकाला और गिड़गिड़ाने लगी, "महेंद्र तुमने मुझे आंटी कहा है, तुम मेरा एक काम करोगे?"

"हाँ, आंटी बोलिए न" महेंद्र ने कहा।

"त···तुमने कहा था कि तुम काजल को चाहते हो···उससे शादी करना चाहते हो···उसके साथ घर बसाना चाहते हो···परिवार बनाना चाहते हो··· "

"ह···हाँ···कहा था और अब भी कह रहा हूँ।" महेंद्र ने कहा।

"तो···तुम काजल को लेकर भाग जाओ···आज ही रात में···सारा इंतजाम मैं कर दूँगी।" चाँदनी ने कहा।

"पर···मैं··· " महेंद्र थोड़ा हिचकिचाया।

"क्या सोच रहे हो महेंद्र···जल्दी बोलो···ज्यादा समय नहीं है··· तुमने सारी बातें तो सुन ही ली होंगी···वह जानवर मेरी बच्ची को···प्लीज महेंद्र बचा लो मेरी बच्ची को···सदियों से अंदर की तरफ खुलनेवाले इन दरवाजों को आज बाहर की तरफ खोल दो···जो जिंदगी मैं नहीं जी पाई, वह मेरी बच्ची की किस्मत में लिख दो···बोलो महेंद्र मेरी बच्ची को वह सारी खुशियाँ दोगे, जो मुझे नहीं मिल पाईं। महेंद्र मैंने आदमी के बहुत रूप देखे हैं। मैं आदमी को पहचानने में गलती नहीं करती, क्योंकि यहाँ हर रात अलग-अलग तरह के आदमी आते हैं। कोई सफेद पोश तो कोई वर्दीधारी, कोई नशे का परदा डाले तो कोई अपने जज्बातों का। हम सबको प्यार देती हैं, खूब प्यार, लेकिन जिस सच्चे प्यार की तलाश में हम उम्रभर तड़पती हैं, वह किसी-किसी को ही नसीब होता है। वही सच्चा प्यार तुम्हारी आँखों में अपनी बच्ची के लिए मुझे दिखा है। मुझे तुम में मेरे जोगिंदर की छवि दिखती है। जल्दी बोलो महेंद्र मेरी बच्ची की किस्मत में ये दरवाजे बाहर की तरफ खोलोगे ना··· " चाँदनी उसके सामने हाथ जोड़े गिड़गिड़ा रही थी। महेंद्र को यह देखकर आश्चर्य हो रहा था कि पहली नजर में इतनी क्रूर और कठोर लगनेवाली एक वेश्या के दिल में इतनी ममता है कि वह अपनी गोद ली हुई बच्ची की इज्जत बचाने के लिए उसके सामने भीख माँग रही है। महेंद्र सोचने लगा कि 'एक तरफ धर्मात्मा का मुखौटा पहने सेठ अमीरचंद है, जो मासूम और असहाय लड़कियों को अपनी हवस का शिकार बनाने के बावजूद भी इज्जत के साथ समाज में रहता है। दूसरी ओर समाज से तिरस्कृत, उपेक्षित व अपमानित यह ममतामयी स्त्री है, जिस पर वेश्या का लेबल चस्पा कर समाज ने उससे एक अच्छा इनसान, एक हमदर्द साथी यहाँ तक कि स्त्री होने का हक भी छीन लिया। ऐसे अमीरचंदों से बने इस समाज की दोगली नीति को धिक्कार है, जिसमें किसी मजबूर स्त्री को वेश्या बनाने के बाद उसके व्यक्तित्व के हर पहलू को अनदेखा कर दिया जाता है। वेश्या होने के बाद उसके जीवन पर, उसकी स्वतंत्रता पर और समाज में उसके स्थान पर ऐसा पूर्ण विराम लगा दिया जाता है, जिसे वह और उसकी अनगिनत पीढ़ियाँ कभी नहीं लाँघ पातीं। ये विराम-चिह्न ही तो अलग-अलग रंग के दरवाजें हैं, जिनके पीछे वे जीवन भर सड़ने को मजबूर हैं।' यही सब सोचते हुए उसकी आँखें भर आईं। चाँदनी के रूप में केवल एक स्त्री को नहीं, बल्कि एक माँ को बिलखते हुए देखकर उसका दिल रो उठा। उसने मन-ही-मन कुछ विचार किया, मानो काजल को उस गंदगी से निकालने के सारे संकल्प एक ही क्षण में ले लिये हों। उसने अपना दृढ़संकल्पित मस्तक ऊपर उठाया तथा आत्मविश्वास से हाथ बढ़ाकर चाँदनी के हाथों को अपने हाथों में लिया और उसे आश्वासन दिया कि वह काजल को लेकर किसी सुरक्षित स्थान पर चला जाएगा। उसी रात महेंद्र, काजल को उन दरवाजों की कैद से छुड़ाकर ले गया। चाँदनी ने सारी आनन-फानन में तैयारियाँ कर दीं। भारी मन और भरी हुई आँखों से काजल को विदा कर दिया।

किसको पता था कि उलझन और बेचैनी के कारण आँखों में कटी सारी रात, सुनहरी सुबह लेकर आएगी। सुबह का सूरज धीरे-धीरे ऊपर चढ़ रहा था। न जाने क्यों चाँदनी का मन बहुत खुश था। उसे अब किसी बात की चिंता नहीं थी। वह निश्चिंत थी कि जोगिंदर के साथ जिन दरवाजों को उसने बाहर की ओर खोलने का सपना देखा था, वह सच हो चुका था। चाय का प्याला लेकर वह छज्जे पर खुले आसमान के नीचे, खुली हवा में साँस ले रही थी और उगते हुए सूर्य की किरणें उसके चेहरे की मुसकराहट को बढ़ा रही थीं। एकबार उसके मन में पिछली रात सेठ की कही बात याद आई, लेकिन वह अब किसी भी मुसीबत का सामना करने को तैयार थी। उसने सोच लिया था कि अगर अपने जोगिंदर की अन्तिम इच्छा पूरी करने में उसकी जान भी चली जाए तो उसे कोई गम नहीं। उसे अपने हिस्से की आजादी और खुलापन भले ही न मिला हो, लेकिन काजल को तो मिल ही गया था। उसने जोगिंदर से ही सीखा था कि केवल खुशी पाना ही प्यार नहीं होता, बल्कि खुशी लुटाना प्यार होता है। खुशी लुटाकर जो प्यार हासिल किया जाता है तो यह सारी सृष्टि प्यार में रँगी हुई नजर आती है। उसने भी खुशी लुटाकर अपने प्यार को सिद्ध किया था। उसका सिर आत्माभिमान से उठा हुआ था। उसने चाय की अंतिम चुस्की ली ही थी कि साइकिल की घंटी की आवाज से उसने गली की ओर देखा। अखबारवाला तेजी से उसके मकान की ओर आ रहा था। उसने अखबार को गोल किया और ऊपर की ओर फेंका। अखबार ठीक चाँदनी के पैरों में गिरा। उसने अखबार उठाया और पहले ही पेज की खबर पढ़कर उसे लगा कि सुबह के सूरज की किरणों ने अपनी सुनहरी कलम से उसके हक में फैसला लिख दिया है। सचमुच यह सारी सृष्टि प्यार के रंग से रँग चुकी है और उसके जीवन के सारे बंद दरवाजों को बाहर की ओर खोल चुकी है। उसके हर्ष व आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। आँखों में आए आँसुओं के पीछे से अखबार की मुख्य खबर के धुँधले अक्षर वह साफ-साफ पढ़ पा रही थी—"कल रात हृदयगति रुक जाने से सेठ अमीरचंद का निधन।"

सा.अ.

१६५-ब, बुखारपुरा, पुरानाशहर,
बरेली-२४३००५ (उ.प्र.)
दूरभाष-९४१२३४५६७९

भूल-सुधार

'साहित्य अमृत' के नवंबर २०२० अंक में 'साहित्य का भारतीय परिपार्श्व' स्तंभ में तमिल कहानी 'गड्ढा' की अनुवादक का नाम **पद्मावती वी** है। जो भूलवश छपने से रह गया।

मौलिक गीत

● गरिमा सक्सेना

डर लगता है
अनचाहे बदलावों से
डर लगता है

हम अपने कंफर्ट जोन को
त्यागें कैसे
सीधी पटरी छोड़ वक्र पर
भागें कैसे,
छिल जाएँगे घुटने ठोकर
अगर लगी तो
हमें अभी भावी घावों से
डर लगता है।

साँचों में ढलने से पहले
गलना होगा
नए रूप में अब तो हमको
ढलना होगा,
बदली सूरत क्या पहचानेंगे
खुद ही हम
दर्पण के हावों-भावों से
डर लगता है।

मन बच्चा बन, पैर पटकता
बाल नोंचता
है जड़त्व से रुका हुआ मन
नहीं सरकता,
कब, क्यों, कैसे, कहाँ, अगर
औ, मगर सताते
बहकावों से, अलगावों से
डर लगता है।

रहा प्रकृति का नियम सदा
परिवर्तित होना,
वही बचा है जो सीखा
अनुकूलित होना
रुका हुआ जल तालाबों का
गंद लाता है
जीवन को इन ठहरावों से
डर लगता है।

क्या है अपनी भूल
राजघाट पर चढ़ा रहे हैं
हम श्रद्धा के फूल,
पर बापू को हम जीवन में
कब कर सके कुबूल।

बापू के आगे नत हो बस
फोटो खिंचवाते,
बापू के चश्मे से हम सब
देख नहीं पाते,
बापू ऐसा ब्रांड बने जो
बापू के प्रतिकूल।

चौराहों पर बापू की
प्रतिमाएँ रोती हैं,
नंगे नर्तन की प्रतिदिन
घटनाएँ होती हैं,
सत्य, अहिंसा, धर्म, न्याय
सब फाँक रहे हैं धूल।

गांधी टोपी सिर पर पहने
टोपी पहनाते,
झोंपड़ियों से छीन निवाला
कोठी बनवाते,
तना बढ़ रहा, शाख बढ़ रही
मगर कट गया मूल।

'दिखते नहीं निशान' (दोहा संग्रह), 'है छिपा सूरज कहाँ पर' (नवगीत संग्रह)-पुरस्कृत, 'दोहे के सौ रंग' (सौ रचनाकारों का सम्मिलित दोहा संग्रह) भाग-१, भाग-२। 'गुनगुनाएँ गीत फिर से', 'दोहा दर्शन', 'कवयित्री सम्मेलन', 'मीत के गीत', 'हिंदी गजल के युवा चेहरे', 'हिंदी गजल का बदलता मिजाज', 'नई सदी के नए गीत', 'दोहा मंथन', 'गुनगुनाएँ गीत फिर से-२', '१०१ महिला गजलकार', 'काव्य उपवन' कृतियाँ एवं पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रचनाओं का प्रकाशन। हिंदुस्तानी एकेडमी द्वारा युवा लेखन कविता सम्मान, नवगीत साहित्य सम्मान सहित कई संस्थाओं से सम्मानित।

बापू के आदर्श पड़े हैं
बंद तिजोरी में,
गाँठें-ही-गाँठें हैं
समरसता की डोरी में,
कहाँ, कौन यह सोच रहा है
क्या है अपनी भूल।

कागजों में सब सही है
हर तरफ दिखता रुदन पर
कागजों में सब सही है।

ग्राफ में सब ग्रीनलाइन
निम्न पिसता औसतों में
दौर है विज्ञापनों का
है सियासत राहतों में

खो रहा बैलेंस लेकिन
शीट में बैलेंस है सब
चल रहा खाता बही है

कब रजिस्टर में हुईं अंकित
व्यथाओं की कथाएँ
कौन आखिर झेलता जो
ये निरंकुश आपदाएँ

इकतरफा बैठकों में चल
रहीं चर्चा बहुत सी
व्यर्थ की जो बतकही है

कागजों औ फाइलों ने
मूँद ली हैं आँख अपनी
कलम गूँगी, प्रश्न गूँगे,
उत्तरों की मौन कथनी

जो दिखाता है निदेशक
देख लो वैसा सनीमा
देश में चलता यही है

मकान संख्या-२१२ ए-ब्लॉक,
सेंचुरी सरस अपार्टमेंट, अनंतपुरा रोड,
यलहंका, बैंगलुरु, कर्नाटक-५६००६४
दूरभाष : ७६९४९२८४४८

स्वर्ग और पृथ्वी

● धर्मवीर भारती

कल्पना ने आश्चर्य में भरकर वातायन के दोनों पट खोल दिए। सामने अनंत की सीमा को स्पर्श करता हुआ विशाल सागर लहरा रहा था। तट पर बिखरी हुई उषा की हलकी गुलाबी आभा से चाँदनी की चंचल लहरें टकराकर लौट रही थीं। प्रशांत नीरवता में केवल चाँदनी की लहरों का मंद-मर्मर गंभीर स्वर नि:श्वासें भर रहा था।

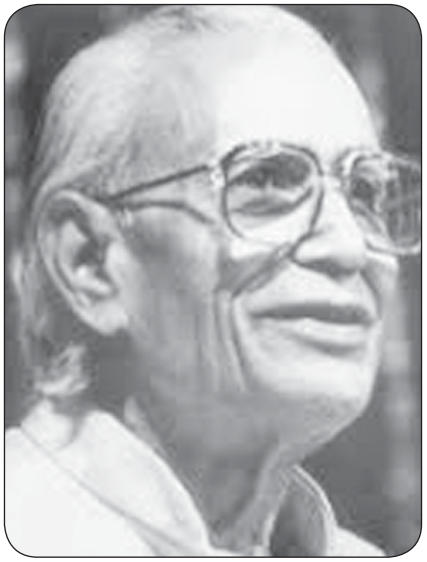

फिर यह स्वर कैसा? कल्पना विस्मय से स्तब्ध थी। यह कल्पना का पहला अनुभव था। चाँदनी के सागर के तट पर, स्वर्ग के एक उजाड़ कोने में हलके सुनहरे बादलों का एक प्रासाद था। शैशव से ही कल्पना उसमें निवास करती थी; पर वह स्वर्ग में रहते हुए भी स्वर्ग से अलग थी : वह एकांत पर विश्वास करती थी। उसके प्रासाद के चारों ओर का वातावरण इतना रहस्यमय और दुर्भेद्य था कि क्रीड़ारत चंचल देवकुमार भी उधर जाने का साहस न करते थे। कल्पना अपने सूनेपन की रानी थी। हलकी नीली आभावाले वातायन-पटों को खोलकर वह न जाने कब तक निहारा करती थी सामने फैले हुए चाँदनी के अनंत सागर को, उसमें लहराती हुई चंचल लहरों को। कभी-कभी स्वर्ग के घाटों पर देवियाँ मंगल कामना से प्रेरित होकर बहा देती थीं कुछ जलदीप, जो लहरों पर उठते-गिरते, जलते-बुझते उसके वातायन के सम्मुख से बह जाते थे और उन्हें देखते ही वह भयभीत होकर पट बंद कर लेती थी। चंचल लहरों का मंद स्वर हलके-हलके झकोरों के साथ थपकियाँ देता था। जल पक्षियों का मधुर सुकोमल संगीत उसे लोरी सुनाता था और वह पलकें मूँदकर सो जाती थी।

किंतु आज का सहसा गूँज उठनेवाला यह स्वर विचित्र था। उसने कल्पना की कि यदि इस सागर का तट उषा की हलकी गुलाबी आभा से न निर्मित होकर प्रखर धूप के काँपते हुए पीलेपन से बना होता और चाँदी की रेशमी लहरें कहीं उससे आकर टकराती तो जितना करुण क्रंदन उस वातावरण में छा जाता, कुछ वैसी ही करुणा इस स्वर में भी है, पर इस स्वर का उद्‌गम कहाँ से है? इस स्वर की लहर-लहर जैसे भिगो रही थी कल्पना के मन को एक आर्द्र उदासी से। वह वातायन से टिककर बैठ गई। उसकी आँखें शून्य गति से ढूँढ़ने लगीं—चाँदनी के अनंत विस्तार में उस अनंत रहस्य भरे गायक को। स्वर लहराता रहा। वह उसमें खो गई। धीरे-धीरे कुछ चंचल आँसू उसके नयनों से झाँकने लगे।

सखियाँ उद्विग्न हो उठीं। "कुमारी!" उन्होंने व्याकुल होकर पुकारा।

कुमारी की तंद्रा भंग हुई। उसने चौंककर उदासी से पूछा, "यह कैसा स्वर है, वेदना?"

वेदना बोली, "जाने भी दो, कल्पना! आज क्या तारों के हार न गूँथोगी?"

कल्पना बोली, "वेदना, मेरे प्रश्न का उत्तर दो। तारों के हार तो नित्य गूँथती हूँ, सखी! दुष्ट तारे कुम्हलाते भी तो नहीं। देखो न, असंख्य हार पड़े हैं। आज न जाने क्यों मन करता है कि कोई ऐसा होता, जिसके चरणों में इन हारों को समर्पित कर पाती। जाने दो इन हारों की वेदना। यह स्वर कैसा है?"

वेदना ने उत्तर न दिया।

"बोलो, वेदना! मेरे मन की उत्सुकता विकल हो रही है। ऐसा स्वर तो पहले कभी नहीं सुना था।"

वेदना ने देखा अन्य सखियों की ओर और वे एक विचित्र आशंका से भर गईं। वेदना किसी प्रकार प्रयत्न कर बोली, "यह स्वर! यह कुछ नहीं रानी! एक देवकुमार निर्वासित कर दिया गया है स्वर्ग से। वही संभवत: गाता हुआ इस ओर आ निकला है।"

"देवकुमार! कल्पना के देश की नीरवता और एकांत को भंग करने का साहस उसे कैसे हुआ?" कल्पना ने किंचित् रुष्ट होकर पूछा।

"वह ऐसा ही दु:साहसी है, कुमारी! स्वर्ग के निषिद्ध स्थानों में उसने

प्रवेश किया, तारों के फूलों में उसने अपना सौरभ भर दिया। अपने गीतों में उसने किरणों के तीर चलाने प्रारंभ किए। इसी से तो देवराज ने उसे निर्वासन का दंड दे दिया। किंतु विश्वास करो, कुमारी! उसके मस्तक पर चिंता की रेखा भी न उभरी। कुछ ठिकाना है इस दु:साहस का?"

"स्वर्ग के नियमों का उल्लंघन! मेरे एकांत को सहसा भंग करने का साहस!" कल्पना क्रोध से काँप रही थी।

एकाएक झकोरों के साथ गायक का तीव्र स्वर कक्ष में गूँज गया। कल्पना के मन का क्रोध जैसे एकाएक धुल गया हो; परंतु फिर भी प्रयत्न कर वह तीव्र स्वर में बोली, "बुलाओ उस उद्दंड देवकुमार को!"

वेदना काँप गई, "नहीं-नहीं, कुमारी! वह यों ही आया है, यों ही चला जाएगा।"

कल्पना बोली, "मैं उसे दंड दूँगी, जाओ।"

"मैं डरती हूँ, कुमारी! उसका प्रवेश अमंगलकारी न सिद्ध हो। उसके स्वरों में इंद्रजाल की लहरें नाचती हैं। उसके नयनों में जादू की ज्योति चमचमाती है।"

"कल्पना इतनी दुर्बल नहीं है। जाओ।"

□

"तुमने यह दु:साहस क्यों किया, देवकुमार?"

देवकुमार कुछ सोच रहा था।

"मेरे प्रश्न का उत्तर दो, दु:साहसी युवक!"

"पर तुम्हारा प्रश्न क्या है?" देवकुमार ने चौंककर पूछा।

"इतनी उच्छृंखलता! मैंने अभी तुमसे कुछ पूछा था।" कल्पना क्रोध से काँप गई।

"क्षमा करो, देवि! मेरा मन तुम्हारे स्वरों की मिठास में ही डूब गया था। अर्थों की ओर मैंने ध्यान ही न दिया।" देवकुमार किंचित् मुसकराया, "जिस प्रश्न की ध्वनि इतनी मीठी है, उसका तात्पर्य कितना मादक होगा! फिर से प्रश्न पूछो, कुमारी। मन होता है, तुम सदा इसी प्रकार प्रश्न पूछती जाओ और मैं अनसुनी करता जाऊँ।"

सखियाँ अपने को वश में न रख सकीं, खिलखिलाकर हँस पड़ीं। रानी के मस्तक की रेखाएँ सुलझ गईं। गालों पर दो गुलाब चुपके से खिल गए। पर वह फिर सँभल गई।

"यह दु:साहस और फिर भी यह वाचालता एक देवकुमार को शोभा नहीं देती।" कल्पना के स्वर भी जैसे उखड़ रहे थे।

"देवकुमार! अब मैं 'देवकुमार' नहीं हूँ, देवि। मेरी व्यक्तिगत संज्ञा 'प्रेम' है और प्रेम आसन को नहीं सह सकता, चाहे वह स्वर्ग का आसन ही क्यों न हो। देवराज ने अपने अधिकार को अक्षुण्ण रखने के लिए प्रेम को नियंत्रण में रखना चाहा और मैंने विद्रोह कर दिया। मुझे निर्वासन का दंड मिला। निराश्रित होकर चल पड़ा। सुना था, तुमने शैशव से ही अपने को स्वर्ग से दूर रखा है। सोचा था, तुम्हारे यहाँ आश्रय मिलेगा, पर तुम दंड दोगी। अच्छा है, दंड ही दो। तुम्हारा दंड भी कम सुखद न होगा, कुमारी!"

"देवकुमार! अब मैं 'देवकुमार' नहीं हूँ, देवि। मेरी व्यक्तिगत संज्ञा 'प्रेम' है और प्रेम आसन को नहीं सह सकता, चाहे वह स्वर्ग का आसन ही क्यों न हो। देवराज ने अपने अधिकार को अक्षुण्ण रखने के लिए प्रेम को नियंत्रण में रखना चाहा और मैंने विद्रोह कर दिया। मुझे निर्वासन का दंड मिला। निराश्रित होकर चल पड़ा। सुना था, तुमने शैशव से ही अपने को स्वर्ग से दूर रखा है। सोचा था, तुम्हारे यहाँ आश्रय मिलेगा, पर तुम दंड दोगी। अच्छा है, दंड ही दो। तुम्हारा दंड भी कम सुखद न होगा, कुमारी!" हँस पड़ी कुमारी। कब तक बाह्य कठोरता के आडंबर में मन के नवीन स्पंदन को ढाँककर रखती, "तो तुम आश्रय की इच्छा से आए हो! कल्पना तुम्हें निराश न करेगी, प्रेम!"

हँस पड़ी कुमारी। कब तक बाह्य कठोरता के आडंबर में मन के नवीन स्पंदन को ढाँककर रखती, "तो तुम आश्रय की इच्छा से आए हो! कल्पना तुम्हें निराश न करेगी, प्रेम!"

"वेदना, इनका प्रबंध करो।"

वेदना किसी भावी अमंगल की कल्पना से काँप उठी।

□

"त्रदेवराज पधारे हैं, कुमारी!"

"आने दो।"

'मैंने कहा था, प्रेम का आगमन अमंगल से पूर्ण है!' वेदना ने सोचा।

देवराज आए। नयनों में रोष था, गति में संयम।

"कल्पना, तुमने एक विद्रोही को आश्रय दिया है। उसने निषिद्ध स्थानों में प्रवेश किया है—स्वर्ग का शासन भंग किया है।"

"निषिद्ध स्थान जैसे?"

"जैसे देवबालाओं के अज्ञान हृदय, मृगशावकों के भोले नयन और तरुणों की चंचल गति···।" कल्पना केवल किंचित् मुसकरा दी, "और कल्पना, उसने तुम्हारे वातावरण की नीरवता और एकांत को भी भंग किया है।"

"कल्पना इस नवीन परिवर्तन का स्वागत करती है। स्वर्ग के इस विभाजन और अन्याय्य शासन के विरोध में प्रेम ने समता और स्वतंत्रता की पुकार की है और कल्पना उससे सहानुभूति रखती है।"

"क्या मेरा शासन अन्याय्य है?" देवराज उत्तेजित हो उठे।

"यह कहना मेरी अशिष्टता होगी और न कहना असत्य।" कल्पना शांति से बोली।

देवराज खीझ गए, "अच्छा, अभी तो प्रेम को केवल निर्वासन मिला था, कल प्रभात में उसे प्राणदंड दिया जाएगा। मैं जाता हूँ।"

कल्पना सिसक रही थी। वेदना रुँधे गले से बोली, "चुप रहो, कुमारी! मैंने पहले ही कहा था, अनजान परदेसी से इतनी ममता बढ़ानी उचित नहीं है, कल्पना!"

"वेदना!" कुमारी सिसकियाँ रोककर बोली, "कल्पना करो कि एक पक्षी, जो जन्म से निराधार अंतरिक्ष में उड़ रहा हो और दूर-दूर तक केवल शून्य ही उसके परों को सहारा दे रहा हो, गति दे रहा हो और

चुपके-चुपके उसके परों में थकान भी भर रहा हो—यदि उस पक्षी के थके हुए परों को विश्राम के लिए किसी सुकोमल टहनी का आसरा मिल जाए और दूसरे ही क्षण प्रबल झंझावात झकझोरकर उस टहनी को तोड़ दे, तब वह पक्षी क्या करेगा?"

"उसका वश ही क्या है, कुमारी! उसके थके हुए पर उड़ने में असमर्थ होंगे। उसी टहनी के साथ-साथ मुरझाए हुए फूल की भाँति वह पक्षी भी टूटकर गिर जाएगा, कुमारी!" वेदना ने निराश स्वर में कहा।

"वेदना! हाँ, ठीक है, वेदना!" कल्पना को जैसे कोई नई बात सूझ गई थी, "मेरी टहनी टूट जाएगी सखी, और मैं...मैं भी उसका साथ दूँगी।"

वेदना कुछ समझ न पाई।

□

"प्रेम!"

"हाँ, कुमारी!"

"तुम्हें अपना भविष्य ज्ञात है न?"

"ज्ञात है, रानी!" और प्रेम हँस पड़ा।

"तुम हँस रहे हो, प्रेम?" रानी के नयन भर आए।

"तुम रो रही हो, छिह। उधर देखो कुमारी!" प्रेम ने चाँदनी के सागर की ओर संकेत किया। चाँदनी की लहरें प्रासाद से टकराकर लौट रही थीं।

"मैं नहीं समझी, प्रेम!"

"नहीं समझी! देखो, युग-युगों से कितनी लहरें आकर प्रासाद के इन पत्थरों से टकराती हैं, पर प्रासाद के पत्थर अटल हैं। मुझे भी तुम एक नश्वर लहर समझना कुमारी, जो अनंत के किसी कोने से उमड़ी और टकराकर दूसरे ही क्षण लौट गई। ऐसी नश्वर लहरियों को पत्थर कभी भूलकर भी याद नहीं करते।"

"पत्थर! मैं पत्थरों की बात नहीं कर रही हूँ, प्रेम। उधर देखो, उसे भी समझने का प्रयत्न करो।"

प्रेम ने देखा। वेदना स्वर्ण-कलश में चाँदनी भरकर महल की ओर लौट रही थी। हलकी गुलाबी सिकता में उसके नन्हे-नन्हे पैरों के चिह्न बनते जाते थे।

"देखा! जो एक बार भी इसे कुचलकर चलता है, यह सिकता उसके चरण-चिह्नों को अपने हृदय में कितने स्नेह से अंकित कर लेती है, कुमार!"

"ठीक है कुमारी; पर देखना, कल तक पवन के झकोरे और चाँदनी की लहरियाँ इसे समतल कर देंगी। यदि किसी पथिक की स्मृति के पद-चिह्न कहीं सिकता पर अंकित हो गए हों तो समय के झकोरे उन्हें समतल कर ही देंगे। इसमें शोक क्यों करती हो कुमारी?"

"मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ?" कल्पना बोली।

पास के सरोवर के नीले जल में कमल खिल रहे थे। तारों के कुछ भौरे मकरंद-पान कर रहे थे। रानी ने एक कमल तोड़ा और प्रेम के पास फेंक दिया। भ्रमर उड़ा नहीं, मकरंद से चिपटा रहा।

"इसका क्या उत्तर है, प्रेम?"

"इसका उत्तर! तुम संभवत: पूछ रही हो कि कमल के टूटने पर भी भ्रमर उड़ा नहीं; पर रानी, ये तुम्हारे तारों के कमल अमर हैं। यदि ये नश्वर होते और किसी नश्वर क्षण में इन पर छा जाता पीलापन, उड़ जाता इनका मकरंद तो भ्रमर भी उड़कर दूसरे कमल पर जा बैठता। कमल सूखते रहते हैं रानी, भ्रमर सदा आश्रय ढूँढ़ लेते हैं।"

कल्पना निरुत्तर हो गई। प्रेम हँस पड़ा।

"कितनी भोली हो तुम, कुमारी! उत्तर देना भी न आया। कहो, कल्पना का सौंदर्य वास्तविकता से अधिक स्थायी होता है। कहो।"

"हाँ!" कल्पना को जैसे उत्तर मिल गया, "कल्पना का सौंदर्य वास्तविकता से अधिक स्थायी होता है। कुमार। प्रेम की लहरों से टकराने पर कल्पना के पत्थर टूट जाते हैं। कल्पना की सिकता पर प्रेम के पदचिह्न अमर होते हैं। प्रेम के कमल के सूखने पर कल्पना के भ्रमर उड़ नहीं जाते, वे उसी के साथ टूट जाते हैं, कुमार! कल्पना को प्रेम ने नया जीवन दिया है और कल्पना मृत्यु में भी प्रेम का साथ देगी।"

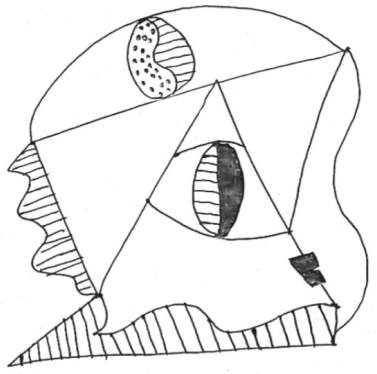

"मृत्यु? प्रेम ने न शासन में जीवित रहना सीखा है और न प्राण देना। कल्पना की शाखाओं पर किरणों की रेशमी डोर में झूलने की अपेक्षा मैं उन्मुक्त आकाश की स्वतंत्र छाया में, चाँदनी की लहरों के साथ मृत्यु-क्रीड़ा करना अधिक उचित समझता हूँ। इन लहरों को चीरकर सागर के उस पार पहुँचना कितना सुखद होगा और यदि डूब भी गया तो यह संतोष होगा कि कल्पना रानी के सागर ने ही मुझे आश्रय दिया है और तब उस पार का आनंद मुझे मझधार में ही मिल जाएगा। किंतु तुम यहीं रहो, रानी! तुम्हारा सुख मेरे साहस की प्रेरणा होगा।"

"तुम मेरे आश्रित हो न! मैं तुम्हारे साथ चलूँगी, तुम्हारी रक्षा में सन्नद्ध होकर। चाँदनी की लहरें कल्पना रानी का शासन मानती हैं। अपने कोमल स्पर्श से सहारा देकर वे तुम्हें ले चलेंगी उस पार। आओ।"

दोनों सागर की ओर बढ़े—सागर स्वागत के उल्लास में हिलोरें लेने लगा। कल्पना ने पैर बढ़ाए। सहसा प्रेम ने उसे पीछे खींच लिया और कहा, "ठहरो!"

नीचे पृथ्वी पर—

साँझ के गुलाबी बादलों में आँख-मिचौनी खेलते हुए विहगदल के रव को अनसुना करते हुए पेड़ों की काँपती छाया में चला जा रहा था एक पथिक अपने गेह को। रात घिर आई थी, बादल छा गए थे। एक घने वृक्ष के तले वह रुक गया आश्रय हेतु। हरे झुरमुट के पास, नगर के एक उच्च गृह के वातायन से झाँक रही थी एक बालिका। अँधेरा बढ़ रहा था, बादल छा रहे थे।

पर उस समय पृथ्वी पर न प्रेम था, न कल्पना।

बालिका के मन में वन-वन भटकनेवाले एक पथिक की याद तो आई; पर उसके मन में कोई पीड़ा न कसकी। उस समय पृथ्वी पर प्रेम न था।

पथिक के मन में एक अनजान पीड़ा तो कसक गई, पर उसे कोई याद न आया। उस समय पृथ्वी पर कल्पना न थी।

दोनों मूक थे। दोनों के अभाव घुटते रहे।

परछाईं

● स्वाति गौतम

नवोदित लेखिका। पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्र और विभिन्न मीडिया हाउसेस में नियमित लेखन। 'चारु रत्न' के बाद आनेवाला दूसरा उपन्यास 'रंगी लाल गली'।

कभी-कभी मेरा दिल कहता है कि मैं बहुत रोऊँ, लेकिन अगर रोऊँगी तो उसको कैसे सँभालूँगी, यही चिंता दिन-रात सताती है। उसके लिए मुझे दुगनी ताकत से खड़ा होना है। वह विशेष है, इतना विशेष कि उसके जैसे लोग बहुत कम हैं। बाहर सूरज जब उगता है तो नए दिन की शुरुआत होती है, एक ऐसे ही दिन एक सूरज उगा और उसे मैंने अपने गर्भ के अंदर महसूस किया। मैं बहुत खुश थी एक और परिवार के सदस्य के आने के बाद मेरा परिवार संपूर्ण हो जाएगा। हर खाने-पीने की कमी एक से एक बढ़कर डॉक्टरों की सलाह के अनुसार पूरी हुई थी। मैं उसे महसूस करती थी, अपने किसी जन्मजात अंग की तरह जैसे मैंने उसे बचपन से ही ओढ़ लिया था। माँ बनने के बाद मैंने जाना कि मैं हमेशा से ही माँ जैसे किरदार में ढली हुई हूँ, तृप्ति के बाद एक और बच्चे की कमी महसूस होने लगी थी। जब वो खेलने के लिए बाहर जाने की जिद करती, हर समय वह सामने वाले आहूजा अंकल के घर रहना चाहती। यहाँ तक कि उसने खाना भी छोड़ दिया था। उन्हीं के घर खाने लगी थी और खेलते-खेलते वहीं सो जाती, तब मैं अकसर खुद से सवाल करती थी, क्या मैं एक अच्छी माँ नहीं हूँ? जो वह मेरे साथ रहना नहीं चाहती, क्या मैं इतना अच्छा खाना नहीं बनाती जितना आहूजा आंटी बनाती हैं, क्या मेरे अंदर ममता की कमी है? ऐसे बहुत से सवाल मेरे मन में उठने लगे, फिर धीरे-धीरे मैंने जाना आहूजा के दो पोते और पोती, जिनके साथ तृप्ति को खेलना इतना ज्यादा पसंद था कि वह अकेली रहना नहीं चाहती थी। एक से एक महँगे खिलौनों के बीच भी मैं उसे बाँध नहीं पाती। बहुत कोशिशों के बाद मैंने आकाश को मना ही लिया दूसरे बच्चे के लिए। बच्चे को अल्ट्रा साउंड में अंदर घूमते देखकर मेरी आँखें इतनी ही नम हो जाती थीं, जितनी कि तृप्ति के समय। तब मैंने जाना कि माँ अपनी भावनाओं को दो बच्चों में बाँट नहीं सकती, उसका प्यार घड़े की तरह हमेशा भरा ही रहता है, उससे चाहे कितना भी निकालो, दुबारा लबालब हो जाएगा।

जैसे-जैसे तरुण बड़ा होने लगा, मुझे ऐसा लगता कि तृप्ति के मुकाबले वह कम हाथ-पैर से चलाता था। मैंने और अच्छे से उसकी मालिश करना शुरू किया। धीरे-धीरे समझ आया वह आवाज को सुनकर भी रियक्ट कम करता है, आँखों की पुतलियाँ अधिकतर स्थिर रहती हैं, जिस तरफ देखता है, वहीं ताकता रहता है। वह किसी चीज को पकड़ने की कोशिश नहीं करता, मुझे उसकी चिंता सताने लगी। मैं रोज अस्पतालों की चक्कर लगाती शुरुआत में डॉक्टर ने कहा कि कुछ बच्चे थोड़ा लेट बोलते हैं, लेट सीखते हैं, उसका भी इंतजार किया। पूरे दो साल का होने के बाद भी वह ढंग से चल नहीं पाया। मैं जब कोई खिलौना उसकी तरफ बढ़ाती, वह देखने के बाद भी पना हाथ नहीं बढ़ाता, तब मेरे पास आँसुओं के सिवा कुछ नहीं होता। शायद यह सस्ता खिलौना इसको पसंद न हो, मैं महँगे से महँगा खिलौना यह सोचकर उसके लिए लाई, क्या पता वह चलाए? मेरे डॉक्टरों के यहाँ चक्कर लगाने में तेजी आई, मैं सुबह घर से निकलती और शाम तक घर पहुँचती। जो कहीं भी बताता, मैं वहीं जाती। हल्की सी रोशनी की तलाश में मैंने दूर-दूर तक चक्कर लगाए। मैं जैसे अपने पूरे परिवार को भूल चुकी थी तृप्ति को भी, क्या करती? आकाश चिल्लाने लगे उनका चिड़चिड़ापन बढ़ने लगा। उन्होंने अब मेरे साथ जाना छोड़ दिया है, भाग्य समझकर, पर मैं तो माँ हूँ, अपने बेटे के लिए आखिरी दम तक भाग्य से लड़ती रहूँगी।

जब उसके साथ के सभी बच्चे स्कूल जाने लगे, तो मैंने भी उसका एडमिशन प्ले स्कूल में करवा दिया। मेरा बच्चा दो साल बाद भी नर्सरी में पढ़ने लायक नहीं हो पाया। वह सब कुछ समझता है, सब कुछ जानता है, पर कभी-कभी नहीं बोल पाता, नहीं बता पाता, उसे कब सुसु आया है, कब उसे पॉटी आई है। मैं जल्दी अपने घर का काम खत्म करके इसी इंतजार में रहती थी कि कब उसके स्कूल से बुलावा आ जाएगा?

कितना मुश्किल होता है, यह सुन लेना कि आपका बच्चा नॉर्मल नहीं है। दूसरे बच्चों की तरह उसकी ग्रोथ नहीं है। माफ कीजिएगा, लेकिन हम उसे अगली क्लास में नहीं भेज सकते। आज जब उसके साथ के बच्चों को पढ़ते, खेलते देखती हूँ तो मुझे अपने तरुण के लिए बहुत दुख होता है, इसलिए नहीं कि ईश्वर ने मुझे उसकी माँ के रूप में चुना इसलिए कि मेरे बाद उसका क्या होगा? सोचती हूँ तो अंदर तक काँप जाती हूँ, ये विचार जब भी आते हैं, रातों की नींद गायब हो जाती है। मुझे याद आती है, कौशल्या ताई जो पड़ोस में रहती थीं, उनका दस साल का बेटा, जो रोड एक्सीडेंट में अपाहिज हो गया, उसकी रीढ़ हड्डी टूट थी, पर बीस साल तक कौशल्या ताई के चलते कभी नहीं लगा वह अकेला है। एक दिन अचानक उनके जाते ही वह चार महीने भी नहीं जी पाया। मैंने देखा था उसे कड़कती धूप में खाट पर लेटे, उसके चहरे के आसपास मक्खियों को भिनकते हुए, कभी देर तक मल में पड़े चिल्लाते, कभी भूख में रोते।

चिंता का असर मुझ पर दिखने लगा, मैं खुद को बीमार महसूस करने लगी, बहुत जल्दी थकान और अचानक मेरा वजन बहुत कम हो गया। पेट फूलने लगा था, कई बार तो रोककर पड़ोसियों ने पूछा, क्या तीसरा बच्चा आने वाला है? मैंने कोई ध्यान नहीं दिया। धीरे-धीरे मेरी आँखों का रंग पीला हो गया, पूरे शरीर में खुजली, एड़ियों में एडिमा और बाथरूम का रंग बिल्कुल संतरे के रंग जैसा। टालते-टालते आकाश की जिद्द के सामने नहीं चली, मुझे डॉक्टर के पास जाना पड़ा। मुझे पहले ही पता था कि डॉक्टर के पास जाने का मतलब है? बहुत सारे टेस्ट और दिन रोज लगते चक्कर, जिनसे मैं परेशान हो चुकी थी। अगर तरुण की बात होती तो ठीक था, लेकिन अपने लिए मैं लापरवाह बन जाना चाहती थी। टेस्ट के रिजल्ट आने से पहले उसने कुछ नहीं कहा, जैसा कि डॉक्टर हमेशा करते आए हैं। सात दिन बाद रिपोर्ट आई तो मैं अंदर तक डर गई, लीवर सिरोसिस। जिस बीमारी का नाम मैंने आज तक नहीं सुना था, क्या मुझे ही होनी थी, कहते हैं ज्यादा शराब पीने से होती है, मैंने तो उसे कभी हाथ भी नहीं लगाया। क्या कहा जा सकता है, कितने दिन और जीऊँगी? आखिर जाना तो सभी को है, लेकिन तरुण को छोड़कर जाने का दिल नहीं होता। मेरे बाद उसका ध्यान कौन रखेगा? कौन कहेगा बहुत देर हो गई तुमने कुछ खाया नहीं? कौन उसके मुँह से गिरती हुई सब्जी को किसी रुमाल से पोंछेगा? कौन उसके मैले कपड़ों को बदलकर, उसे धुला और साफ पहनाएगा? वह नहीं समझ पाता कौन बताएगा उसे, कौन उसे पसंद नहीं करता? कहाँ उसे नहीं जाना चाहिए? दिन भर यही सोचती हूँ और ईश्वर से रोज प्रार्थना करती हूँ, मेरे जीवन में रोज एक दिन बढ़ा दे।

आज तरुण छह साल का हो गया। वह सीख रहा है, पर बहुत धीमी गति से। मुझे यकीन है, एक दिन वह बिल्कुल नॉर्मल हो जाएगा। सुबह से ही साफ-सफाई और आने वाले रिश्तेदारों की तैयारी में व्यस्त मैं दोनों बच्चों को देख नहीं पाई। तरुण ने सॉस की बोतल फ्रीज से निकाली और सारी नीचे गिरा दी। मैंने एक थप्पड़ उसके गाल पर लगा दिया और बाद में पछताई। कभी-कभी गुस्सा आता है और बुरे खयाल भी, बहुत बुरा तक सोच लेती हूँ, आखिर इनसान ही तो हूँ, जब दर्द इतना भारी हो जाता है कि बरदाश्त नहीं होता तब रो भी लेती हूँ। सारा काम खत्म होने के बाद मैं बच्चों को ढूँढ़ने लगी, थप्पड़ का ध्यान आया, भागकर उनके कमरे में गई, सारे खिलौने बिखरे पड़े थे। पकोड़े जो मैंने बच्चों को दिए थे, प्लेट में कुछ आधे खाए, कुछ बिना खाए सॉस लगे यों ही रखे थे। खिलौनों की अलमारी खुली थी। एक रैकेट बाहर था, दूसरा रैकेट अलमारी से आधा लटक रहा था। शायद छत पर हों, मैं भागती हुई छत पर पहुँची, आस-पास, टंकी के पीछे जहाँ अकसर ही दोनों छुपकर खेलते हैं, कहीं कोई न दिखा। मेरे पैरों की रफ्तार और तेज हो गई, दुगनी गति से नीचे आई दोबारा कमरे में गई चप्पलें ढूँढ़ीं, एक-एक चप्पल की जोड़ी गायब थी। बाहर के चौक में मैंने डस्टबिन के पीछे झाँककर देखा, जहाँ कोई छुप नहीं सकता। मेन गेट खुला था बाहर तो नहीं निकल गए? बराबर वाली सरोज के घर पहुँची, शायद वहाँ खेलने के लिए चले गए हों, पर नहीं उसका यह कहना, यहाँ तो कोई नहीं आया, जैसे मेरी जान निकाल गया, अगर उनका बेटा भी बाहर रहा होता, तो लगता सभी साथ खेल रहे हैं। कहाँ चले गए दोनों? मैं अपने काम और रिश्तेदारों पर बड़बड़ाने लगी। किशोर जिसके घर बच्चे कभी नहीं जाते, उसके घर भी मैंने इस आस से पूछ लिया, क्या पता वो हाँ कह दे? हर पड़ोसी से मैं हाँ सुनने के लिए तरस गई, दिमाग ने काम करना बंद कर दिया। फोन? जिसे मैं अपने साथ नहीं लाई थी, भागकर घर पहुँची, आकाश को फोन किया, आकाश बच्चे कहीं नहीं मिल रहे। "शांति से ढूँढ़ो, कहाँ गए होंगे? तुम चिंता मत करो, मैं अभी रवि को भेजता हूँ और थोड़ी देर में मैं पहुँचता हूँ।" तभी किशोर ने आकर कहा ,"आप पीछे गली वाले पार्क में क्यों नहीं देख आतीं? झूले लगे हैं शायद वहाँ हों?" मैं लगभग दौड़ती हुई पार्क तक पहुँची, साँस फूल चुकी थी, हर बच्चे में मैं गुलाबी फ्रॉक और काली टी-शर्ट देखना चाहती थी।

चारों तरफ निगाहें दौड़ गईं, साइकिल के पीछे, पेड़ के पीछे, उस मोटी औरत के पीछे, हर जगह नजरें ढूँढ़ती हुई बच्चों को पा लेना चाहती थीं। तभी नजर पार्क में बने छोटे से जिम पर गई, एक्सरसाइज का झूला, जिस पर तरुण बैठा था और तृप्ति उसके पास खड़ी, उसे झुला रही थी।

जाने क्यों आँखों में आँसू आ गए, जैसे कोई खजाना लुटते-लुटते बच गया, साँस-में-साँस आई, मैं अपने कदमों को आराम देते हुए आगे बढ़ने लगी, मैं पाँच-दस कदम की दूरी पर पीछे खड़ी थी और झूले के पास एक औरत अभी आकर ही खड़ी हुई थी, तरुण ने उसका हाथ पकड़ लिया, वह उसे देखकर सवालिया नजरों से मुसकराई, तृप्ति ने बिना रुके मुसकराते हुए कहा, आपका कड़ा देख रहा है, आंटी। वह थोड़ा और मुसकराई, तरुण उससे कुछ कहना चाहता था, तभी तृप्ति ने तरुण को झूले से उतारते हुए कहा, "तरुण उतर जाओ।" तृप्ति ने औरत को सफाई दी, इसे मम्मी ने कहा है, जब भी कोई आए तो उतर जाया करो। तरुण बैट बॉल खेलने के लिए रोने लगा, तो तृप्ति ने उसे समझाते हुए कहा, "रोओ मत! वो बड़े भैया हैं, अपने साथ नहीं खिलाएँगे। मैं अपनी गुल्लक फोड़ दूँगी और अपने पैसों से आपके लिए बैट-बॉल लेकर आऊँगी। आप अच्छे बच्चे हो ना?" तरुण फिर भी चुप नहीं हुआ। फिर उसने बड़े लड़कों के पास जाकर कहा, "भैया, मेरे भाई को बैट-बॉल खेलना है। वह रो रहा है, क्योंकि उसे मम्मी ने मारा।" दो बॉल खिलाने के बाद वह वापस मुड़ी तरुण का पैर कीचड़ में जा गिरा, उसने पार्क में लगी टंकी पर जाकर चप्पल धोने के बाद थोड़ा पानी हाथ में लेकर तरुण का मुँह धोया और अपने फ्रॉक के छोर से पोंछ दिया।

मेरे सामने आने पर मुझे समझ नहीं आया कि मैं किस से ज्यादा प्यार करूँ—तृप्ति या तरुण को? मैंने तरुण को गोद लेना चाहा, लेकिन वह मेरा हाथ छुड़ाकर तृप्ति के पीछे खड़ा हो गया, "गंदी मम्मी!" मैं तरुण और तृप्ति के पीछे-पीछे चलती सोच रही हूँ, तरुण के आने से पहले, छह साल की होने के बाद भी तृप्ति कितनी जल्दी जान गई थी, उसके साथ कोई खेलने वाला आ रहा है। कैसे बच्चों की जीभ में सरस्वती होती है, उसने हमेशा ईश्वर से अपने लिए एक भाई ही माँगा था। यहाँ तक कि ड्राइंग में भी जब पूरा परिवार बनाती तो, आढ़ी-टेढ़ी लकीरों के बीच इशारा करके मुझे बताती—माँ देखो, मेरा छोटा भाई और मैं उसके इसी प्यार को देखकर गद्‌गद हो जाती। जन्म से नौ महीने पहले तो मुझसे भी ज्यादा इंतजार तृप्ति ने किया था। हर पसंदीदा खिलौना वह अपने आने वाले भाई के लिए उठाकर रख देती थी। कहती होगी सृष्टि कि उसके बच्चे एक दूसरे से कुछ शेयर नहीं करते। तरुण का आना पूरी जीवन को संपूर्ण बना गया। तृप्ति की हमेशा जिद्द कि उसे उसकी की गोद में दे दूँ, दिया भी तो उसने हमेशा माँ बनने की कोशिश की।

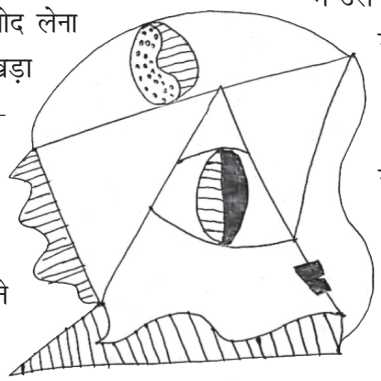

जब तरुण तीन महीने का था और तनूजा की शादी थी, मुझे माँ ने किसी काम से बाहर से भेजा था, पीछे से तरुण उठते ही रोने लगा। तृप्ति उसे कंधे से पकड़े दोनों हाथों से जकड़, अपनी नानी के पास पहुँच गई थी, नानी प्लीज मेरे भाई को चुप करा दो।

तरुण चार साल का था तो एक लड़का हमारे घर तृप्ति की शिकायत करने आया, उसके सर से खून टपक रहा था। मैंने बिना जाने ही एक चांटा तृप्ति को लगा दिया, तुम इतनी उद्‌दंड हो गई हो, मुझे पता ही नहीं चला? क्यों मारा तुमने? वो अपने गाल पर हाथ रखे सिसकती रही और मैं उसे डाँटती रही। पट्टी करवाने के बाद मैं उस लड़के को उसके घर छोड़ आई, लेकिन उसके बाद मैंने तृप्ति से बात नहीं की। वो धीरे-धीरे सिसकती हुई हल्के कदमों से रसोई में मेरे पास आई और अपने गाल पर हाथ रखते हुए उसने कहा, "हमारा तरुण पागल नहीं है। कार्तिक ने तरुण को पागल बोला था, मेरा भाई कोई पागल है?" मैंने रोती हुई अपनी बच्ची को अपने गले से लगा लिया, मैंने बिना जाने उसे मारा था, "नहीं, बेटा, वह पागल नहीं है, वह विशेष है। ऐसे बच्चों को ईश्वर किसी-किसी को ही भाई बना कर भेजता है, उसे पता था कि तृप्ति अपने भाई का बहुत ध्यान रखेगी, इसलिए ईश्वर ने उसे तुम्हारा भाई बनाया।" उस दिन के बाद तृप्ति ने उसे और लाड़, प्यार से सँभालना शुरू कर दिया। आज मैं देखती हूँ, वह मेरी परछाईं बन चुकी है। औरत के प्रेम की चरम सीमा माँ है। क्या मेरी बेटी बहन से माँ बन गई? जिस चीज के लिए मैं आज तक डरती आई हूँ क्या उस समस्या का समाधान मिल गया, मेरे जाने के बाद भी मेरी बेटी कभी तरुण को एक माँ की कमी महसूस नहीं होने देगी।

११४, डी.एल.एफ.
सेक्टर-१०, फरीदाबाद (हरियाणा)
swati.sgautam@gmail.com

इस अंक के चित्रकार

रोहित प्रसाद पथिक

कई प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानियाँ, पुस्तक समीक्षा व रेखाचित्रों का निरंतर प्रकाशन। एक काव्य संग्रह 'ईश्वर को मरते देखा है' हाल ही में प्रकाशित। संप्रति 'अनुगूँज' अर्धवार्षिक साहित्य पत्रिका के संपादक।

संपर्क : के.एस. रोड, रेल पार डीपू पाडा
क्वार्टर नंबर : (७४१/सी),
आसनसोल-७१३३०२ (पश्चिम बंगाल)
दूरभाष : ८१०१३०३४३४

निर्वाचन

मूल : **मैरी रस्सल मिटफोर्ड**

अनुवाद : **भद्रसैन पुरी**

कुछ वर्ष पूर्व डेनबई नाम का एक भद्र पुरुष नगर के गंदगी भरे इलाके में रहने के लिए आया। नगर 'विल्टशायर' में था अथवा 'कोर्नवाल' में, हमारी कहानी से इसका कोई संबंध नहीं है, चाहे दोनों प्रांतों में से संभवत: वह कथित नगर किसी एक में स्थित था। दोनों निकटवर्ती इलाके कहलाते थे और दो कुलीन परिवारों की साझा संपत्ति थे।

मिस्टर डेनबई प्रत्यक्ष रूप से काफी धनी था और वह धन उसने मुख्य रूप से व्यापार से कमाया था। उसने वस्तुत: अपनी पहली अवस्था की अपेक्षा दूसरी को अधिक नहीं छिपाया था। उसने अपने लिए, बड़ा चौकोर लाल मकान बनवाया था जो जितना उपयुक्त था उतना ही भद्दा भी। किचन गार्डन के लिए कुछ एकड़ जमीन को दीवार से घेरा था। एक घोड़े की भारी गाड़ी रखी। उसने एक पुष्ट टट्टू और भूरे शिकारी कुत्तों की जोड़ी रखी; इस तरह घर को तैयार करने तथा घरेलू मामलों का संतोषजनक प्रबंध करने के बाद उसने अपने पड़ोसियों के बारे में देखना शुरू किया। उसने वकील अत्तार और मुख्य व्यापारियों से अपनी जान-पहचान को खुरच दिया। वह वाचनालय तथा बिलियर्ड कक्ष का सदस्य बन गया। वह बाऊलिंग ग्रीन और क्रिकेट क्लब का भी सदस्य बन गया। उसने अपने नए निवास स्थान में इतनी रुचि ली, जैसे वह इसी इलाके में जनमा और पला हो।

अब यह रुचि किसी तरह, जो उसके अपने अनुकूल थी, उस स्थान की शांति और आराम के लिए सहायक नहीं थी। मिस्टर डेनबई उठी हुई नाकवाला, थोड़ा चपटा और काला आदमी था। हँसमुख स्वभाव के साथ-साथ उसके पास प्रखर काली आँखों की जोड़ी, ऊँची चंचल बोलचाल और शरीर तथा मन दोनों की विलक्षण तीव्रता थी। उसकी दृष्टि से ही उसके चरित्र का पता चलता था और वह चरित्र अंग्रेजों के मध्यवर्गी लोगों में असामान्य नहीं था।

संक्षेप में, पूरी तरह से जॉन बुल होते हुए, जिसकी वह शेखी मारता था, के साथ-साथ वह भद्र पुरुष सुधारक था। वह उत्साही था और इतना दृढ़ निश्चयी था कि उसने कभी भी क्राउन या एंकर में रात का खाना नहीं खाया था और न ही पैलेस यार्ड में जोरदार भाषण दिया था। उसने कोबेट को पढ़ा और दसवें भाग की वसूली से मुक्ति पाने की उसकी अपनी योजना थी—एक उपाय था, जिसको न समझते हुए, मुझे खेद है कि बिना किसी को क्षति या चोट पहुँचाए राष्ट्रीय ऋण से मुक्त करने के लिए, मैं उसके वर्णन की जिम्मेदारी नहीं ले सकता।

अतिरिक्त इन बड़े मामलों के, जिनको व्यावहारिक सुधार की अपेक्षा काल्पनिक कहा जा सकता था और जो पूर्णतया अवरोध-रहित थे, मिस्टर डेनबई ने उनको छोटे और अधिक पीड़ाकुल व्यवहारों में झुका दिया और वह वस्तुत: निगम और चर्च में कपड़े रखनेवाले कमरे की शुद्धता का इतना कठोर और ईर्ष्यालु रक्षक था कि अधिकारों, स्वतंत्रताओं तथा लोगों के पैसों के इस संरक्षक को हिसाब दिए बिना कोई भी सम्मानित आदमी अपनी अंगुली नहीं उठा सकता था और न ही चर्च का रखवाला पैर हिला सकता था।

वह पादरी के क्षेत्र में निस्संदेह अत्यंत कष्टकारी व्यक्ति था, ऐसा सब जगह कहा जाता था। रिपोर्टों और छानबीन के मामलों में मिस्टर ह्यूम अनोखी किस्म का आदमी था। पादरी के क्षेत्र के रात के भोज में वह कमखर्ची से काम लेता और मेयर के भोज पर काम करने की बात करता था। सड़क के आयुक्तों के लिपिक और खजांची के विरुद्ध टर्नपाइक ऐक्ट के अंतर्गत उसने कार्यवाही करवाई। खैराती स्कूल के निक्षेपधारियों के खिलाफ चांसरी में मुकदमा शुरू किया और अंतत: इलाके को खोलने की धमकी दी। कहने का अभिप्राय यह है कि उस उम्मीदवार की सहायता की जाएगी जो दो बड़े परिवारों—बिगज और टोरी—के मनोनीत उम्मीदवार का विरोध करने का वायदा करेगा। विग और टोरी परिवारों के पास पार्लियामेंट की दो सीटें इस प्रकार पक्की थीं जैसे उनकी पैतृक संपत्ति हो—एक परीक्षण जिसने दूसरे स्थानों में हुए सफल विरोध में हाल की घटनाओं ने कुलीन मालिकों को जरा भी भयभीत नहीं किया था।

जिन चीजों ने डेनबई की कष्टकारक छानबीन में बढ़ोतरी की, वे थीं—एक व्यक्ति की सामान्य चतुराई, उसकी योग्यता और जानकारी। उसकी शिक्षा उच्चकोटि की नहीं थी और न ही वह पुस्तकों के बारे में कुछ जानता था, परंतु चीजों की विशेष रूप से जानकारी थी। भले ही यह निश्चित था कि मिस्टर डेनबई व्यापार करता रहा था, परंतु कोई भी व्यक्ति अनुमान नहीं लगा सकता था कि वह व्यापार क्या और कैसा था। कोई भी व्यक्ति कभी से उसके पास नहीं आया। उसने कानून और बाड़े के मामलों को एक जैसी दक्षता से संभाला। चरबी को गाढ़ा करने के रहस्य के बारे में अपने निरीक्षण से कसाई को विस्मित किया और चीनी तथा कॉफी के बाजार की अपनी अच्छी जानकारी से पंसारी को हैरानी में डाला। एक दक्ष लेखाकार के कौशल से पादरी की पुस्तकों में हिसाब-किताब को देखकर व्याकुल जनता की व्यग्रता को दूर किया। वह कानून के बिंदुओं पर बहुत निपुण था—रिपोर्टों, मामलों और पूर्व दृष्टांतों के उद्धरण में सदा तैयार और अचूक था। वह वास्तव में सरकारी वकील

के रूप में अवकाश प्राप्त करता, परंतु अपनी फुरती और जोश के कारण अपने खर्च पर मुकदमेबाजी के लिए टूट पड़ता था।

उपद्रव के लिए अद्‌भुत कल्पनाशक्ति के साथ यह शंका नहीं की जा सकती कि मिस्टर डेनबई कई विशिष्ट और शुद्ध गुणों के बावजूद अपने लिए काफी घृणा जुटाने में सफल हो गया। सरकारी तौर पर सब निगमवाले उसके शत्रु बन गए। उसका मुख्य विरोधी, या कहो कि जिस आदमी को वह अपना विरोधी समझता था, चर्च का पादरी मिस्टर कॉर्डोनेल था, जिसके साथ उसके कई आपसी झगड़े लटक रहे थे। (एक विशिष्ट झगड़ा चर्च के बाजे को उचित स्थान पर न रखने को लेकर था। उस सुरीले साज को वर्तमान स्थान पर रखने के कारण गत बारह महीनों से नगर में विरोध चल रहा था।) उसने 'बी' के नवाब, जो इलाके का संरक्षक भी था, की बहन लेडी एलिजाबेथ से विवाह किया था; उसकी पत्नी होने के साथ-साथ वह सुशील और लोकप्रिय थी। इसलिए मिस्टर डेनबई ने ठीक ही विचार किया, वह उसके आयोजित सुधारों के मुख्य बाधकों में से एक थी, जबकि हमारा सुधारक देशप्रेम से प्रेरित होकर मिस्टर कॉर्डोनेल से घृणा करके अच्छा या बुरा कर रहा था। उनको पास-पास लाने के लिए विभिन्न प्रकार की घटनाएँ घटनी आरंभ हो गई थीं।

मिस्टर डेनबई के परिवार में उसकी पत्नी थी जो शांत स्वभाव और दुर्बल स्वास्थ्यवाली महिला थी। वह केवल अपनी चारपाई से सोफे तक जाने के अतिरिक्त कुछ नहीं करती थी, वह केवल माँड़ और सोडा वाटर पीती थी। केवल एक बेटी थी उसकी, जिसको यदि एक शब्द में कहा जाए तो वह अपने पिता की आँखों का तारा थी।

रोज डेनबई वास्तव में ऐसी बेटी थी जिसपर कोई भी पिता गर्व कर सकता था—मध्यम कदवाली, अति उत्तम, सुडौल शरीर, गहरे काले चमकते रंग के साथ सुंदर बालों की चमकीली घनी लटें, प्यारी-प्यारी आँखें और एकदम मधुर और प्रसन्नचित्त चेहरा, जिसका बड़ा प्रभाव था—दूसरे चेहरों को मुसकराहट प्रदान करना।

उसका स्वभाव और सूझबूझ भी उसके चेहरे के अनुरूप थे—खिलाड़ी, सुशील, चतुर और दयालु। उसकी सिद्धियाँ एवं अभ्यास अत्यंत उच्च श्रेणी के थे। जब उसके पिता ने अपने नए निवास स्थान में प्रवेश किया था, तभी उसने अपने पंद्रह वर्ष पूरे किए थे। पिता ने अपने साथ रखने की इच्छा के कारण उसको लंदन के पास उस अति उत्तम स्कूल से अपने पास बुला लिया था जहाँ वह अब तक पढ़ रही थी तथा उसने निश्चय किया कि अब घर पर अध्यापकों के द्वारा उसकी शिक्षा पूरी की जाएगी।

इस छोटे नगर में एक प्रसिद्ध कलाकार रहता था—नृत्य का प्राध्यापक, जो युवा महिलाओं के लिए एक साप्ताहिक स्कूल चलाता था, जिसमें इलाके के कुलीन परिवारों में से आधे की युवतियाँ वहाँ उपस्थित होती थीं। एम ला ग्रांड (वह नृत्य सिखानेवाला उत्साही फ्रांसीसी था) रोज के साथ अति प्रसन्न था। उसने घोषणा की कि वह उसकी श्रेष्ठ शिष्या है, ऐसी अन्य शिष्या जीवन में उसे नहीं मिली।

"मेस वेइज, डोंक मोनश्योर?" उसने एक दिन उसके पिता से कहा, जिसने 'कहिए, क्या हाल है' के लिए फ्रांसीसी शब्दों को जानने के लिए घृणा की। 'वेइज कामे ऐले मेट डे ल एपलोम्ब डे ला फार्से, एट पैट्रे डे ग्रेसिस ला पेटाइट।'

और मिस्टर डेनबई ने यह समझते हुए कि कलाकार उसकी प्यारी बेटी की प्रशंसा कर रहा था, दृढ़ता से कहा 'मोनश्योर अच्छा आदमी था' और अभिवादन का उत्तर अंग्रेजी ढंग से दिया। उसने अगले दिन उसके पास हिरन की टाँग भेजी।

परंतु सिर्फ एम ला ग्रांड ही रोज का प्रशंसक नहीं था, जिसको वह नृत्य के स्कूल में मिली थी। दैवयोग से कॉर्डोनेल की भी एक ही बेटी थी लगभग उसी आयु की, जिसका पालन-पोषण माँ की आँखों तले हुआ और जो प्राध्यापक के स्कूल में निरंतर उपस्थित होती थी। दोनों लड़कियों का एक-सा कद था और दोनों अच्छी नर्तकी थीं। दोनों की जोड़ी बना दी गई थी। दोनों का व्यक्तित्व और ढंग एक जैसा होने के कारण (क्योंकि मैरी कॉर्डोनेल मधुर, कोमल, सुंदर थी, उसकी हलकी नीली आँखें हर एक को आकर्षित करती थीं जिसको भी वह देखती थी) दोनों में शीघ्र ही एक-दूसरे के लिए अनंत रुचि पैदा हो गई। मिलते या जुदा होते समय जब भी उनकी नजरें मिलतीं तो हाथ भी मिल जाते। शीघ्र ही नृत्य के मध्यांतरों में कुछ मधुर शब्दों की अदला-बदली उनमें शुरू हो गई और नृत्य की समाप्ति पर खुलकर बातें होने लगीं।

लेडी एलिजाबेथ रोज से लगभग उतनी ही मोहित हुई थी, जितनी उसकी लड़की, यह देखते हुए कि उसमें हर चीज पसंद आनेवाली थी और कोई भी चीज ऐसी नहीं थी जिसको अस्वीकार किया जाता। जब भी वर्षा होती तो वह उसके चोगे और शाल का माता सदृश्य ध्यान रखकर उसे गाड़ी में अपने घर ले जाती थी और अंतत: मिस्टर डेनबई, जो स्वयं अपनी प्यारी बेटी को लेने आया करता था, को एक तरफ हटना पड़ता। एक दिन उसने विनीत मुसकराहट से मिस डेनबई से प्रार्थना की कि वह पार्टी में पधारें जो वह अपनी बेटी के जन्मदिन के उपलक्ष्य में युवा लोगों को देने वाली थी। मुझे डर है कि कठोर सुधारक 'नहीं' कहने वाला था, परंतु रोज का 'ओ, पापा' कहना अप्रतिहत था और वह पार्टी में गई।

इसके पश्चात् युवा लोग प्रतिदिन और सुपरिचित हो गए। लेडी एलिजाबेथ श्रीमती डेनबई से मिलने जाती और श्रीमती डेनबई उसका रूपांतर करती, परंतु उसकी अस्वस्थता मिलने-मिलाने में बाधक होती थी और उसका पति निरंतर कठोरता से अपने पर क्रोध करता था तथा पादरी के मित्रतापूर्वक आगे बढ़ने और उसके निमंत्रणों को टालता था, भले ही यह उसके दयालु स्वभाव के लिए एक प्रकार का उत्पात था।

दोनों लड़कियाँ किसी तरह आपस में प्रतिदिन मिलती थीं। यह उनकी रोजालिंड एवं सीलिथा जैसी मित्रता थी और स्वभाव तथा चरित्र में प्रत्येक दूसरी के अनुरूप थी—रोज के पास एक बहन को भड़कानेवाला प्रमोद था और मैरी के पास दूसरी बहन का सौम्य और लचीला आकर्षण। दोनों मिलकर घुड़सवारी करतीं, सैर करतीं और गाना गातीं तथा जुदा होकर कभी प्रसन्न न होतीं। वे एक जैसा संगीत बजातीं, एक-सी पुस्तकें पढ़तीं, एक जैसे कपड़े पहनतीं, एक-दूसरे का काम करतीं और अपने सस्ते गहनों की छोटी संपत्ति और फूलों का आदान-प्रदान करतीं। यह सब उनकी उदारता का प्रतीक था, जिससे समानता को बढ़ावा मिलता था।

पादरी के प्रति रोज के स्नेह की बाबत पहले तो डेनबई ईर्ष्या करता था, परंतु वह उन लोगों को इतना चाहती थी और उनकी प्रसन्नता के लिए इतनी सचेत थी कि डेनबई उसे रोक नहीं सका; और मैरी की लंबी तथा

भयानक बीमारी के बाद, जिससे वह हमेशा प्रभावित होती थी, मिस्टर कॉर्डोनेल अपनी आँखों में आँसू भरकर डेनबई के पास गया और उसे अपने विश्वास से बताया कि ईश्वर की इच्छा के अनुसार उसकी बेटी का जीवन रोज के अनथक ध्यान पर निर्भर करता था, तो पिता की ईर्ष्या दूर हो गई। उसने अच्छे पादरी का हाथ सिकोड़ा और फिर कभी उनकी लंबी मुलाकातों की बाबत दु:खी नहीं हुआ।

भावनाओं में परिवर्तन उत्पन्न करने में लेडी एलिजाबेथ का भी योगदान था। वह बदले में आड़ुओं, खरबूजों और अंगूरों से भरी कई टोकरियाँ भेजती थी (जिसकी संस्कृति के बारे में वह हैरान था) और उसने उनके साथ रोज का चित्र भी भेजा, जो उसने स्वयं बनाया था और जो पूरी सुंदरता के साथ उसके अनुरूप था। चित्र में उसका भूरा शिकारी कुत्ता भी उसके पाँव के पास बैठा दिखाया गया था। वह ऐसा चित्र था कि आकार के परिवर्तन के लिए भी वह उसे बदलना नहीं चाहता था।

संभवत: डेनबई अपने आपको जितना अधिक दृढ़ समझता था, वास्तव में वह उतना था नहीं, विशेषकर जन्म और स्थान के प्रति जिनसे घृणा करने का वह बहाना करता था और कम-से-कम वह बेटी की उस प्रशंसा पर गर्व करता था जिसने विशेष अधिकारयुक्त समाज को उत्तेजित किया था, जैसेकि उसने अपने आपको अकेला रखकर अपनी प्रबल स्वतंत्रता का प्रदर्शन किया था। यह निश्चित था कि सुधार के प्रति उसका जोश अब ढीला पड़ गया था, विशेषकर पादरी की तरफ से; और उसने न केवल बाजे के विवाद को समाप्त कर दिया था बल्कि चर्च के मंच के ऊपर लटकाया जानेवाला शानदार झाड़-फानूस भी चर्च को उपहार के रूप में दे दिया।

समय बीतता गया। रोज ने नगर और पड़ोस के शिष्टाचार के आधे प्रस्तावों को ठुकरा दिया था। उसका हृदय अभेद्य प्रतीत होता था। उसकी सादगीपसंद सहेली के बारे में प्राय: समझा जाता था (क्योंकि रोज ने इसका विरोध नहीं किया था, इसलिए इसे निश्चित माना गया) कि उसकी सगाई उसकी माँ के भतीजे सर विलियम फ्रेम्पटोन से होने जा रही थी। सर विलियम फ्रेम्पटोन एक भद्र युवक था और अच्छी-खासी संपत्ति का मालिक था। उसने पड़ोस के अपने सुंदर स्थान पर काफी समय गुजारा था।

समय गुजरता चला गया और अब रोज उन्नीस वर्ष की हो गई। तब एक घटना घटी, जिसने उसकी प्रसन्नता में पीड़ादायक बाधा पहुँचाई। नवाब बी का सदस्य मर गया। उसके भतीजे सर विलियम फ्रेम्पटोन ने अपने चाचा की शक्तिशाली सुविधाओं की सहायता से अपने आपको इलाके की सदस्यता के लिए पेश किया। उसी समय उसका स्वतंत्र प्रत्याशी भी निर्वाचन में खड़ा हो गया और मिस्टर डेनबई ने अपनी वृथाभिमानी दृढ़ता से विवश होकर अपनी बेटी को पादरी के घर न जाने के लिए जोर दिया—कम-से-कम उस समय तक, जब तक निर्वाचन की प्रक्रिया समाप्त नहीं हो जाती। रोज ने व्यर्थ बहस की और रोई। उसका पिता हठी था; वह मैरी कॉर्डोनेल को एक प्यार भरा पत्र लिखकर अत्यंत दु:खी मन से अपने शयनकक्ष में चली गई। संभवत: अपने जीवन में वह पहली बार इतना दु:खी हुई थी।

लगभग आधे घंटे के पश्चात् सर विलियम और मिस्टर कॉर्डोनेल लालघर पर आए।

"हम आ गए हैं, मिस्टर डेनबई।" पादरी ने कहा—"तुम्हारी रुचि को उपलब्ध करने के लिए।"

"नहीं-नहीं, मेरे अच्छे मित्र!" सुधारक ने कहा—"तुम जानते हो, मेरी रुचि वचनबद्ध है और मैं अपनी दृढ़ता से नहीं···।"

"रोज, मैं तुम्हारी रुचि के लिए···" पादरी ने कहना जारी रखा।

"रोज से!" मिस्टर डेनबई ने टोका।

"ऐ, उसके दिल और हाथ उपहार के लिए—ऐसा होते हुए मैं विश्वास करता हूँ कि मेरा भतीजा यहाँ का वोट लेने के लिए अत्यंत उत्सुक है।" मिस्टर कॉर्डोनेल ने प्रत्युत्तर दिया।

"रोज से!" मिस्टर डेनबई पुन: एकाएक बोल उठा—"क्यों, मैंने सोचा था कि तुम्हारी बेटी...।"

"तो उस छोकरी ने तुम्हें नहीं बताया?" पादरी ने उत्तर दिया।

"क्यों, विलियम और वह गत छह महीनों से रोमियो और जूलियट का अभिनय करते आ रहे हैं।"

"मेरी रोज," डेनबई ने पुन: हैरानी से पुकारा—"क्यों, रोज, मैं कहता हूँ, रोज···" और विस्मृति की-सी स्थिति में शीघ्रता से कमरे के बाहर चला गया और दूसरे ही क्षण शरमाती लड़की को हाथ से पकड़कर उसने पूछा—"रोज, क्या तुम इस युवक से प्रेम करती हो?"

"ओ पापा!" रोज ने कहा।

"क्या तुम इससे विवाह करोगी?"

"ओ पापा!"

"क्या तुम चाहती हो कि मैं इससे कह दूँ कि तुम इससे विवाह नहीं करोगी?"

रोज ने इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया। वह गहराई से शरमा गई और मुसकराकर नीचे देखने लगी। "फिर ले जाओ इसको।" मिस्टर डेनबई ने पुन: कहा—"मैं देखता हूँ कि लड़की तुम्हें प्यार करती है। मैं तुम्हें वोट नहीं दे सकता, भले ही मैंने वचन दिया है। तुम जानते हो, मेरे अच्छे श्रीमान्, कि एक ईमानदार आदमी का शब्द···।"

"मैं तुम्हारा वोट नहीं चाहता, मेरे प्यारे श्रीमान्।" सर विलियम फ्रेम्पटोन ने टोका—"मैं तुमसे वोट माँगता भी नहीं, भले ही इससे मेरे चाचा का इलाका और मेरी सीट हाथ से निकल जाए। यही निर्वाचन है, जिसका मुझे ध्यान है और मेरे लिए केवल यही निर्वाचन ध्यान देने योग्य है। क्या यह मेरी मधुर रोज नहीं? निर्वाचन, जिसका उद्देश्य जीवन भर चलता है और जिसका परिणाम प्रसन्नता है। ऐसा ही निर्वाचन ध्यान रखने योग्य है। ऐसा नहीं है क्या, मेरी अपनी रोज?"

और रोज ने शरमाकर 'हाँ' कहा; और मिस्टर डेनबई ने अपने होनेवाले दामाद से हाथ मिलाया। तब तक मिलाया, जब तक वह सिकुड़ नहीं गया। वह बार-बार कहता रहा—"मैं तुम्हें वोट नहीं दे सकता, क्योंकि आदमी को दृढ़ रहना चाहिए, परंतु तुम संसार में सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति हो और तुम मेरी रोज के अच्छे जीवनसाथी बनोगे तथा रोज एक महान् महिला बनेगी।" प्रसन्न पिता ने कहना जारी रखा—"अंतत: मेरी रोज एक महान् महिला होगी!"

बाल-कहानी

पानी रे पानी

● ललित शौर्य

विक्रम गरमी से बहुत परेशान था। उसका किसी भी काम में बिल्कुल मन नहीं लग रहा था। आज संडे होने के बावजूद वह दोस्तों के साथ खेलने भी नहीं गया। विक्रम की सुबह नहाने की आदत थी। वैसे तो यह आदत बहुत अच्छी है, पर विक्रम ने इसे बुरा बना लिया था। बुरा इसलिए कि नहाने में वह एक घंटे का समय लगाता। तब तक नहाता जब तक मम्मी-पापा डाँट न लगा दें। डाँट खाना अब उसकी आदत हो चुकी थी। उसे नहाने के लिए कम-से-कम दस बाल्टी पानी की जरूरत पड़ती।

गरमी चरम पर थी। आज नल में एक भी बूँद पानी नहीं था। छत की टंकी खाली हो चुकी थी। बार-बार टोंटी के कान खींचने से टोंटी हाँफने लगी थी। विक्रम यह देखकर बहुत दुःखी हो रहा था। उसका पूरा बदन चिपचिपा हो चुका था। पसीने की धार बह रही थी। वह बार-बार चिल्ला रहा था। मम्मी से पानी लाने को कह रहा था।

मम्मी ने कहा, ''जब पानी होता है तो तुम्हें उसकी बिल्कुल भी कद्र नहीं होती। आज पानी नहीं आया तो परेशान हो रहे हो?''

''अरे कैसी कद्र मम्मा! मुझे नहाना है, टंकियों में पानी खत्म हो चुका है। कुछ करो। यह गरमी सही नहीं जाती।'' विक्रम ने परेशान होते हुए कहा।

''टंकियों में पानी खत्म नहीं हुआ। तुमने खत्म कर दिया है।'' मम्मी ने विक्रम से कहा।

''मैंने कब खत्म किया। मैं तो एक घंटे पहले ही उठा हूँ। कब से पानी का वेट कर रहा हूँ। पानी आ ही नहीं रहा। आप मुझसे कह रही हैं कि मैंने पानी खत्म कर दिया। आप पापा से पूछ सकती हैं। मैंने पानी खत्म नहीं किया, मम्मा।'' विक्रम ने बड़ी मासूमियत से कहा।

''पानी तुम्हीं ने खत्म किया है। आज नहीं नहाए तो क्या हुआ। तुम रोज नहाने में इतना पानी जो बरबाद करते हो।'' मम्मी ने कहा।

''मम्मा, मैं पानी बरबाद नहीं करता। आपको पता है न, मुझे रोज नहाने की आदत है। फिर नहाना तो अच्छी बात है न। अगर मैं रोज न नहाऊँ तो क्या आपको अच्छा लगेगा।'' विक्रम ने कहा।

''अरे, मैं ये थोड़ी बोल रही हूँ कि नहाना नहीं चाहिए या नहाना गंदी बात है, बल्कि रोज नहाना तो बहुत अच्छी आदत है। लेकिन तुम रोज दस-दस बाल्टी पानी से नहाते हो। बिना डाँट खाए बाथरूम से बाहर नहीं निकलते। यह गलत बात है। यही बुरी आदत भी है।'' मम्मी ने समझाते हुए कहा।

''मम्मा, जब पानी आता है, तभी तो नहाता हूँ। फिर एक बाल्टी से नहाओ या दस से, क्या फर्क पड़ता है।'' विक्रम बोला।

''फर्क पड़ता है बेटा। अगर फर्क नहीं पड़ता तो आज टंकी में पानी होता। तुम यों परेशान नहीं होते। पानी का बड़ा महत्त्व है। अगर हम पानी का अपव्यय करेंगे तो परेशानी भी हमें ही उठानी पड़ेगी। हमें पानी को बचाने की आदत डालनी चाहिए। पानी के अनेक रूप है। पानी हर रूप में महत्त्वपूर्ण है। चाहे वह पीने का पानी हो या नहाने अथवा कपड़े धोने का। हमारे अधिकांश काम पानी पर ही निर्भर हैं। हमारे देश में कई राज्य पानी की किल्लत से जूझ रहे हैं। हमारा देश ही क्यों, पूरा विश्व जल संकट से घिरा हुआ है। मैं और तुम्हारे पापा इसीलिए तो तुम्हें समझाते हैं कि पानी बरबाद मत करो। आज तुम्हें समझ आ रहा है न, पानी कितना जरूरी है। जब कोई चीज हमारे हाथों से निकल जाती है, तब हमें उसका महत्त्व महसूस होने लगता है।'' मम्मी ने समझाया।

''मम्मा, आप ठीक कह रही हैं। मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए था। पानी सच में अमूल्य है। आज मुझे महसूस हो रहा, पानी कितना जरूरी है। मैं आज और अभी संकल्प लेता हूँ कि पानी की बरबादी नहीं करूँगा। अपने दोस्तों से भी कहूँगा, हमें पानी की बचत करनी चाहिए।'' विक्रम ने कहा।

मम्मी को विक्रम का संकल्प सुनकर बहुत अच्छा लगा। अभी वे बात ही कर रहे थे। बाथरूम से पानी की आवाज आने लगी। नल में पानी आने लगा था। विक्रम उछलता हुआ बाथरूम की ओर बढ़ने लगा। मम्मी ने हँसते हुए कहा, ''विक्रम, संकल्प तो याद है न?'' विक्रम ने कहा, ''हाँ मम्मा, आज से बस एक बाल्टी पानी।'' विक्रम ने एक बाल्टी पानी भरा और नहाते हुए गुनगुनाने लगा, ''पानी रे पानी···।''

सुपरिचित रचनाकार। छह संयुक्त काव्य-संकलनों का संपादन; एक कविता-संग्रह तथा एक बाल-कहानी-संग्रह के साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं में कविता, बाल-काहनी, व्यंग्य आदि प्रकाशित एवं आकाशवाणी से कविताओं का प्रसारण।

सा.अ.

ग्राम+पोस्ट-मुवानी
जिला-पिथौरागढ़
(उत्तराखंड)
दूरभाष : ७३५१४६७७०२

सोमनाथ मंदिर : दिव्यता कण-कण में व्याप्त है

● सुमन बाजपेयी

गुजरात एक ऐसा राज्य है, जहाँ एक बार जाकर मन नहीं भरता। इसीलिए कई बार वहाँ जा चुकी हूँ। २०१९ के दिसंबर के महीने में जब गिर नेशनल पार्क जाने का प्रोग्राम बना तो सोमनाथ मंदिर तो जाना ही था, जो वहाँ से केवल दो घंटे की दूरी पर ही है। 'बहुत बार लूटा गया और बहुत बार बना', इस मंदिर के बारे में जब भी कोई बात करता है तो यही कहता है। इसकी संपदा को आक्रमणकारियों ने लूटा, इसे बार-बार ध्वस्त किया और आज भी यह शान से खड़ा है। कहा जाता है १७ बार इसे लूटा गया था।

इसकी भव्यता और महिमा का एहसास मंदिर में प्रवेश करने से पहले ही हो गया था। भारत के पश्चिमी तट पर सौराष्ट्र के वेरावल के पास प्रभास पाटन में स्थित हिंदू धर्म के उत्थान-पतन के इतिहास का प्रतीक सोमनाथ मंदिर भगवान् शिव के १२ ज्योतिर्लिंगों में से पहला ज्योतिर्लिंग है। मंदिर नगर के दस किलोमीटर में फैला है और इसमें ४२ मंदिर हैं। माना जाता है इसका निर्माण स्वयं चंद्रदेव ने किया था, जिसका उल्लेख ऋग्वेद में भी मिलता है। साथ ही यह भी का जाता है कि श्रीकृष्ण ने यहीं देह त्याग की थी। भालुका तीर्थ पर श्रीकृष्ण विश्राम कर रहे थे कि तभी एक शिकारी ने उनके पैर के तलुए में पद्मचिह्न को हिरण की आँख समझकर तीर मार दिया। बस इसी तीर से घायल होकर श्रीकृष्ण ने देह त्यागकर बैकुंठ की ओर गमन किया। मंदिर बार-बार ध्वस्त और इसका जीर्णोद्धार होता रहा, पर शिवलिंग यथावत् रहा।

साँसों में घुलने लगती है दिव्यता

शिल्प, भव्यता और विस्तार···वहाँ पहुँचने पर मन में पहला खयाल यही आया। एक तरफ जहाँ आस्था का बहाव आंदोलित कर रहा था, वहीं दूसरी ओर उसकी बनावट, उसके पत्थरों और दीवारों पर उकेरी गई आकृतियाँ और पूरे मंदिर का वास्तुशिल्प प्रभावित कर रहा था।

पिछले ३२ सालों से कहानी, कविता व महिला विषयों तथा बाल-लेखन में संलग्न। 'खाली कलश', 'ठोस धरती का विश्वास', 'अग्निदान', 'एक सपने के सच होना' और 'पीले झूमर' (कहानी-संग्रह) समेत ८०० से अधिक कहानियाँ ७०० से अधिक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। हिंदी व अंग्रेजी में लेखन।

अंदर प्रवेश करने से पहले सुरक्षा जाँच के बाद भी एक लंबा रास्ता पार करना पड़ता है और जहाँ स्वर्ण के शिव विराजमान हैं, वहाँ भी जाने के लिए कतार में खड़ा होना पड़ता है। इसलिए बिना धक्का-मुक्की के सब एक-एक कर दर्शन कर सकते हैं। उस विराट् शिव के सौंदर्य को निहार सकते हैं, जिनकी प्रार्थना करने के लिए यह विशाल मंदिर गर्व से खड़ा है। चाँदी की दीवारें सी जड़ी हैं आसपास। फूलों का शृंगार शिव के रूप को और आलोकित कर रहा था।

मंदिर में सबसे पहले शिव के वाहन नंदी के दर्शन होते हैं, मानो नंदी भगवान् के हर भक्त का स्वागत कर रहे हों। मंदिर के अंदर पहुँच कर एक अलग ही दुनिया में होने का एहसास होता है, जिस तरफ भी नजर पड़ती है भगवान के चमत्कार का कोई-न-कोई रूप नजर आता है। शिव का अद्भुत रूप और अनुपम शृंगार-वहाँ से हटने का मन कर ही नहीं रहा था।

मस्तक पर चंद्रमा को धारण किए देवों के देव महादेव का सबसे पंचामृत स्नान कराया जाता है। स्नान के बाद उनका अलौकिक शृंगार किया जाता है। शिवलिंग पर चदंन से ॐ अंकित किया जाता है और फिर बेलपत्र अर्पित किया जाता है। भगवान सोमनाथ की पूजा के बाद मंदिर के पुजारी भगवान् के हर रूप की आराधना करते हैं। अंत में उस महासागर की आरती उतारी जाती है, जो सुबह सबसे पहले उठकर अपनी लहरों से भगवान के चरणों का अभिषेक करता है। जाते-जाते नंदीजी की कान में

अपनी मनोकामना कहने से मैं भी स्वयं को रोक न पाई। मंदिर के पृष्ठ भाग में स्थित प्राचीन मंदिर के विषय में मान्यता है कि यह पार्वतीजी का मंदिर है।

बाहर निकलते ही हरियाली का विस्तार मन को छू लेता है। एकदम स्वच्छ वातावरण घेर लेता है और साँसों में दिव्यता घुलने लगती है। सामने समुद्र का फैलाव बाँहें पसारे स्वागत कर रहा होता है और सूर्यास्त देखने के लिए मैं भी जाकर खड़ी हो गई। डूबते सूरज की एक-एक किरण मंदिर के हर कोण पर कुछ इस तरह पड़ रही थी कि लगता था कि वास्तव में यह अब भी स्वर्णजड़ित है। आभा ही वह तिलिस्म है, जो निर्जीव चीजों में भी प्राण डाल देती है। मंदिर का उज्ज्वल स्वरूप मुझे अभिभूत कर रहा था और थकान, जो सफर के दौरान हावी हो गई थी, वह छिटककर मुझसे दूर जा चुकी थी।

कथा और आख्यान

मंदिर के अलग-अलग भाग हैं। शिखर, गर्भगृह, सभा मंडप व नृत्य मंडप। पूरे मंदिर का चक्कर लगा अरब सागर को निहारती हुई मैं मंदिर के परिसर में लगे बैंच पर आकर बैठ गई। मंदिर पर लगा त्रिकोणीय ध्वज हवा में उड़ रहा था, जो २७ फीट ऊँचा है। मंदिर के शिखर पर स्थित जो कलश है, उसका वजन १० टन है। कुछ सफेद हंस नीले पानी के ऊपर उड़ रहे थे। लोगों का आना जारी था और अपनी-अपनी तरह से वे आस्था को व्यक्त कर रहे थे। सूरज धीरे-धीरे मंदिर के पीछे अस्त हो रहा था, उसकी किरणें समुद्र की उठती-गिरती लहरों पर इंद्रधनुषीय आकृतियाँ बना रही थीं। लग रहा था कि सोमनाथ मंदिर शांति के आवरण से ढक गया है। यहाँ समुद्र अपनी गूँज और ऊँची-ऊँची लहरों से साथ सदैव शिव के चरण वंदन करता प्रतीत होता है। यहाँ तीन नदियों हिरण,कपिला और सरस्वती का महासंगम होता है। इस त्रिवेणी स्नान का विशेष महत्त्व है। प्राचीन हिंदू ग्रंथों के अनुसार सोम अर्थात् चंद्र ने, दक्ष प्रजापति राजा की २७ कन्याओं से विवाह किया था। लेकिन वह अपनी पत्नी रोहिणी से अधिक प्यार करते थे। इस कारण अन्य २६ दक्ष कन्याएँ बहुत उदास रहती थीं। उन्होंने जब इस बात की शिकायत अपने पिता से की तो दक्षराज ने चंद्रमा को समझाया, लेकिन उन्होंने जब इस पर ध्यान नहीं दिया तो दक्ष ने चंद्रमा को 'क्षयी' होने का शाप दे दिया। अब से हर दिन तुम्हारा तेज क्षीण होता रहेगा। शाप से विचलित और दुखी सोम ने भगवान् शिव की आराधना शुरू कर दी। भगवान् शिव ने उन्हें आश्वस्त किया कि शाप के फलस्वरूप कृष्ण पक्ष में प्रतिदिन तुम्हारी एक-एक कला क्षीण होती जाएगी, लेकिन शुक्ल पक्ष में उसी क्रम से एक-एक कला बढ़ती जाएगी और प्रत्येक पूर्णिमा को तुम पूर्णचंद्र हो जाओगे। चंद्रमा शिव के वचनों से गदगद हो गए और शिव से हमेशा के लिए वहीं बसने का आग्रह किया। चंद्र देव एवं अन्य देवताओं की प्रार्थना स्वीकार कर भगवान् शंकर भवानी सहित यहाँ ज्योतिर्लिंग के रूप में निवास करने लगे। इसीलिए यह जगह कहलाई सोमनाथ, यानी सोम के ईश्वर का स्थान।

पुराणों में लिखा है कि चंद्रमा ने एक स्वर्ण मंदिर का निर्माण किया था और मंदिर की पूजा और रख-रखाव का काम सोमपुरा ब्राह्मणों को सौंपा था। आज भी सोमनाथ में सोमपुरा ब्राह्मणों का एक समुदाय रहता है, जो स्वयं को चंद्रमा का वंशज मानता है। जब स्वतंत्रता के बाद सोमनाथ मंदिर का पुनर्निर्माण किया गया था, तो इसे आकार देने वाले राजमिस्त्री और कलाकार सोमपुरा सलत समुदाय से थे, जो सोमपुरा ब्राह्मण समुदाय की एक शाखा है और अपने स्थापत्य और कलात्मक कौशल के लिए जाना जाता है।

किंवदंती है कि चंद्रमा भगवान् द्वारा मंदिर बनाए जाने के बाद, रावण ने चाँदी में मंदिर बनाया था, और बाद में द्वापर युग में श्रीकृष्ण ने सोमनाथ में लकड़ी का मंदिर बनवाया था।

बहुत सारे पड़ाव देखे हैं

१०२४ में भीम प्रथम के शासनकाल के दौरान अरब यात्री अल-बरुनी ने अपने यात्रा वृत्तांत में इसका विवरण लिखा, जिससे प्रभावित हो महमूद गजनवी ने सन् १०२६ में कुछ ५००० साथियों के साथ सोमनाथ मंदिर पर हमला किया, मंदिर की संपत्ति लूटी और उसे तोड़ दिया। कहते हैं कि महमूद गजनवी के लूट के समय ५०,००० लोग मंदिर में पूजा कर रहे थे। महमूद गजनवी ने जब मंदिर का विध्वंस किया तो उससे शिवलिंग नहीं टूटा। तब उसके पास भीषण अग्नि प्रज्वलित की गई। मंदिर के अमूल्य हीरे-जवाहरात लूट लिये गए। उसके बाद राजा भीमदेव ने सिद्धराज जय सिंह की मदद से मंदिर का निर्माण किया। उसके बाद पुन: अलाउद्दीन खिलजी और औरंगजेब ने मंदिर को तहस-नहस कर डाला। यह नया मंदिर पुराने मंदिर के भग्नावशेष को हटाकर बनाया गया था। स्वाधीनता मिलने के बाद सरदार पटेल ने इस मंदिर का निर्माण करवाया।

आजादी से पहले, वेरावल जूनागढ़ राज्य का हिस्सा था। जिसका शासक १९४७ में पाकिस्तान चला गया था। १९४८ में प्रभासतीर्थ, 'प्रभास पाटण' के नाम से जाना जाता था। इसी नाम से इसकी तहसील और नगर पालिका थी। यह जूनागढ़ रियासत का मुख्य नगर था। लेकिन १९४८ के बाद इसकी तहसील, नगर पालिका और तहसील कचहरी का वेरावल में विलय कर इसे भारत में मिला दिया गया था। तत्कालीन उप प्रधानमंत्री सरदार पटेल ने १२ जुलाई, १९४७ को जूनागढ़ में ही सोमनाथ मंदिर के पुनर्निर्माण का आदेश दिया था। यह चालुक्य वास्तु शैली में बना है, जिसमें गुजरात के राजमिस्त्रियों की कड़ी मेहनत व शिल्प कौशल स्पष्ट दिखाई देता है।

इतनी संपत्ति लुटने के बाद भी हर बार सोमनाथ का शिवालय उसी वैभव के साथ खड़ा रहा, लेकिन केवल इस वैभव के कारण ही सोमनाथ का महत्त्व नहीं है। सोमनाथ का मंदिर भारत के पश्चिम समुद्र तट पर है और विशाल अरब सागर प्रतिदिन भगवान् सोमनाथ के चरण पखारता है और गत हजारों वर्षों के ज्ञात इतिहास में इस अरब सागर ने कभी भी अपनी मर्यादा नहीं लाँघी है! न जाने कितने आँधी, तूफान आए, लेकिन किसी भी तूफान से मंदिर की कोई हानि नहीं हुई। इस मंदिर के प्रांगण में एक स्तंभ (खंभा) है, इसे 'बाणस्तंभ' कहा जाता है! यह स्तंभ कब से

वहाँ पर है, बता पाना कठिन है, लगभग छठी शताब्दी से इस बाणस्तंभ का इतिहास में नाम आता है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं की बाणस्तंभ का निर्माण छठवें शतक में हुआ होगा, उसके सैकड़ों वर्ष पहले इसका निर्माण हुआ होगा! यह एक दिशादर्शक स्तंभ है, जिस पर समुद्र की ओर इंगित करता एक बाण है इस बाणस्तंभ पर लिखा है—'आसमुद्रांत दक्षिण ध्रुव पर्यंत अबाधित ज्योर्तिमार्ग'—यानी 'इस बिंदु से दक्षिण ध्रुव तक सीधी रेखा में एक भी अवरोध या बाधा नहीं है।' अर्थात् इस समूची दूरी में जमीन का एक भी टुकड़ा नहीं है! सोचकर अचरज हुआ कि यह ज्ञान इतने वर्षों पहले हम भारतीयों को था।

इस पंक्ति का सरल अर्थ यह है, कि 'सोमनाथ मंदिर के इस बिंदु से लेकर दक्षिण ध्रुव तक (अर्थात् अंटार्टिका तक) एक सीधी रेखा खिंची जाए, तो बीच में एक भी भूखंड नहीं आता है!

मान लें कि सन् ६०० ई. में इस बाण स्तंभ का निर्माण हुआ था, तो भी उस जमाने में पृथ्वी का दक्षिणी ध्रुव है, यह ज्ञान हमारे पुरखों के पास कहाँ से आया? दक्षिण ध्रुव ज्ञात था, यह मान भी लिया तो भी सोमनाथ मंदिर से दक्षिण ध्रुव तक सीधी रेखा में एक भी भूखंड नहीं आता है, यह 'मैपिंग' किसने की? इसका अर्थ यह है कि 'बाण स्तंभ' के निर्माण काल में भारतीयों को पृथ्वी गोल है, इसका ज्ञान था! इतना ही नहीं, पृथ्वी का दक्षिण ध्रुव है (अर्थात् उत्तर ध्रुव भी है) यह भी ज्ञान था!

मन में बहुत सारे सवाल और विश्वास व आस्था सी भरी ऊर्जा के साथ मैं जब बाहर निकलने लगी तो जगमगाती रोशनी में दिपदिपाता मंदिर मुझे और भव्य लगा। यहाँ बार-बार लौटकर आना है, बस यही खयाल मुझे वापसी की अपनी यात्रा में घेरे रहा।

१२, एकलव्य विहार, सेक्टर-१३,
रोहिणी, दिल्ली-११००८५
दूरभाष : ९८१०७९५७०५
sumanbajpai@yahoo.co.in

खरा सोना

लघुकथा

● **माधव नागदा**

हमेशा की तरह रिटायर्ड तहसीलदार देवीप्रसाद हाथ में छड़ी लिए अकड़ के साथ चल रहे थे। साथ निभा रहे थे मास्टर रामलाल। विनम्र किंतु आत्मविश्वास से भरपूर। दोनों छह बजे ही प्रात:कालीन भ्रमण पर निकल पड़ते। देवीप्रसाद दरवाजे पर खड़े रहकर रौबदार आवाज लगाते, "मास्टर जी, चलो।"

"आया, सर।" रामलाल बरसों की आदत से लाचार शिष्टता से उत्तर देते।

"मास्टर जी, पास में पैसा है तो सब कुछ है वरना कोई नहीं पूछता।" देवीप्रसाद ने चलते-चलते एकाएक रुककर कहा और कुछ-कुछ हिकारत से मास्टर जी की ओर देखा।

"जी, सर।"

"आपको विश्वास नहीं होगा, आज की तारीख में मेरे लॉकर में दो किलो सोना है। सुना? पूरे दो किलो।" वे एक खास अंदाज में मुसकराए, होठों को बायीं और फैलाकर। "आपके पास?" सवाल पूछते ही वे हो हो कर हँस दिए, "माफ करना मास्टर जी, मैंने भी क्या बेवकूफी भरा प्रश्न पूछ लिया।"

"जी सर।" मास्टर जी बोले। देवीप्रसाद की त्योरियाँ चढ़ गईं, "क्या कह रहे हो?"

"तहसीलदार साहब आपको भी विश्वास नहीं होगा, मेरे पास दो सौ किलो सोना है। वह भी लॉकर में नहीं बल्कि खुले में।"

देवीप्रसाद जी की आँखें सिकुड़ गई, "मास्टर जी, आपने पहली बार मेरे सामने मजाक किया है। क्या आप अपना खुले में रखा सोना मुझे दिखा सकते हो?"

"नेकी और पूछ-पूछ। आज शाम को ही घर आ जाइए। मेडम को भी लेते आना। भोजन साथ ही करेंगे।"

मेडम और तहसीलदार साहब की खूब आवभगत हुई। मास्टर जी की दोनों बहुओं और बेटों ने दौड़-दौड़कर किचन और डाइनिंग रूम एक कर दिया। इतना प्रेम, इतना आदर। पति-पत्नी अभिभूत हो गए। उन्हें रह-रहकर अपने बेटे याद आने लगे जो ऊँची नौकरी पाकर विदेश चले गए थे। घर-बार भी वहीं बसा लिया।

खाना खाकर देवीप्रसाद जी ने एक लंबी डकार ली, इधर-उधर नजरें घुमाईं फिर थोड़ा झिझकते हुए बोले, "मास्टर जी, अब अपना वो दो सौ किलो सोना भी दिखा दो। मेडम भी बहुत उत्सुक है।"

"सर, सोना आपके सामने ही है। मेरे दोनों बेटे और दोनों बहुएँ। ये जितने मनोयोग से आपकी खातिरदारी कर रहे थे उतनी ही तन्मयता से हमारी भी सेवा करते हैं। है न खरा सोना? चारों मिलाकर पूरे दो सौ किलो।"

लालमादड़ी (नाथद्वारा)-३१३३०१
दूरभाष : ९८२९५८८४९४

बाल-कहानी

मन्नत और लड्डू

● अमिताभ शंकर राय चौधरी

सभी कश्मीर घूमने आए हैं।

श्रीनगर की हजरत बल मसजिद के कुएँ की बगल में खड़े होकर नितिन ने सबसे कहा, ''जिसकी जो मन्नत है, यहीं माँग लो। हर मन्नत की फीस एक रुपया।''

''मतलब?'' उसकी पत्नी नैना और बहन मिताली ने एक साथ पूछा, ''इस कुएँ में सिक्का डालकर मन-ही-मन कुछ माँग लो तो रहमत खुदा तुम्हारी जरूर पूरी करेंगे।''

''मम्मी, मुझे एक सिक्का दो।'' बच्चों में होड़ लग गई।

सभी हँसते हुए, आँखें बंद करके कुएँ में सिक्का डाल रहे थे। मगर अपने बेटे साहिल को देने के लिए मिताली के पास पाँच का ही एक सिक्का बचा था। तो पाँच साल के साहिल ने जिद करके उसे ही डाल दिया। एक सेकेंड के लिए आँखें बंद कीं। फिर कहने लगा, ''देखो भगवान्, मैंने पूरे पाँच दिए हैं, एक साथ। बस क्लास फाइव तक मुझे मैथ में पास करवा देना। बार-बार मुझे डाँट न खानी पड़े।''

सभी हँसने लगे।

प्रफुल्ल ने बेटे का कान पकड़ लिया, ''पढ़ना-लिखना है नहीं। खुदा को घूस देने चला है, नालायक!''

''छोटे मामा ने ही तो बताया कि जो चाहे माँग लो। भगवान् सुन लेंगे।'' नन्हे साहिल का क्या दोष?

'म' से मैथ, 'म' से मुसीबत। साहिल को तो इसी से डर लगता है। क्यों भाई, थ्री सिक्स आर एट्टीन के बदले अगर सिक्सटीन या ट्वेंटी लिख दें तो किसका क्या बिगड़ जाएगा?

कश्मीर से लौटने के बाद कॉलोनी में गणेशोत्सव की धूम थी। फूलमाला के साथ-साथ न जाने कितने क्विंटल बड़े-बड़े लड्डुओं से गणेशजी को और उनके सिंहासन को सजाया गया था। बिलार से भी बड़ा एक मूषक महाराज भी हाथों पर मिट्टी का लड्डू उठाए बैठा था। प्रभु की बगल में।

पंडितजी माइक से मंत्र पढ़कर अंजलि दिला रहे थे। भक्तजन फूल चढ़ाकर आँखें मूँदकर प्रणाम कर रहे थे। अचानक साहिल ने कहा, ''देखो, गणेशजी महाराज, लड्डू तुम्हें पसंद होंगे। मुझे बिल्कुल नहीं। मैथ के रिजल्ट में मैं इन्हें नहीं पाना चाहता, समझे? तुम खूब लड्डू खाओ, पर मुझे इनसे बचाओ।''

सामने रखे माउथपीस से उसकी बात चारों ओर फैल गई। सभी ने सुना। खूब हँसी हुई। मगर मिताली तो मारे शर्म के गड़े जा रही थी। लौटकर शुरू हो गई ठुकाई, ''ऐसे कोई कहता है, तूने तो मेरी इज्जत की मैगी बनाकर रख दी।''

सुपरिचित साहित्यकार। बँगला एवं हिंदी की अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कहानी, कविता एवं नाटक तथा किशोर साहित्य प्रकाशित। सी.बी.टी. द्वारा आयोजित बाल साहित्य लेखन प्रतियोगिता (२००१) में दो कहानियाँ पुरस्कृत।

''मैं क्या करूँ। जो सच है, मैंने तो वही बताया?'' साहिल रूठ गया। एल.के.जी., यू.के.जी. में उसे मैथ में जो नंबर मिले थे, उसे देखकर मिताली की आँखों में आँसू आ गए थे और साहिल को अपने ऊपर गुस्सा। ''हाय! मैंने माँ को रुला दिया।''

देखते-देखते छमाही परीक्षा आ गई। रोज ठाकुरजी को प्रणाम करने के बाद दादा-दादी और पापा-मम्मी सबके पैर छूना, फिर माँ दही का तिलक लगा देती है। तब दौड़ो ऑटोवाले अंकल के पास···

मैथ के दिन उसने दादा से साफ कह दिया, ''दद्दू, जरा ठीक से आशीर्वाद दो। मैथ में लड्डू न मिले।''

''सब ठीक होगा, बेटा।'' दादाजी ने हिम्मत बढ़ाई।

''खयाल रखना, अगर लड्डू ही मिला तो फिर तुम्हारे आशीर्वाद का क्या फायदा?''

''ओह, इस लड़के की जबान से तो भगवान् ही बचाए!'' मिताली दौड़कर आई और हलके से एक चाँटा जमा दिया, ''दादा से कोई ऐसे बात करता है?''

ऑटो की ओर जाते-जाते फिल्मी विलेन के अंदाज में वह नन्हा शेर दडाड़ा, ''दद्दू, खयाल रखना। जब पूजा में बैठिएगा तो मेरे लिए वर माँग लीजिएगा।''

दादाजी आँखें बंद करके इष्टदेव का स्मरण करने लगे, ''हे प्रभु! जब सब कहते हैं कि पोते का चेहरा, उसका मिजाज बिल्कुल मुझ पर गया है, तो कितनी खुशी होती है। फिर भी मैथ का जो डर मुझमें था, वह इसके दिल में भी भर देना जरूरी था? यह डर खानदान में बना रहेगा? हे विघ्नविनाशक, तुम्हीं पार लगाना!''

सा.अ.

सी-२६/३५-४०
रामकटोरा, वाराणसी-२२१००१
दूरभाष : ०९४५५१६८३५९

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक पढ़ा। इस बार का संपादकीय खूब पसंद आया। रिपोर्ताज 'आफत भरे दिन', 'लेखक का लॉकडाउन, लॉकडाउन में लेखक', व्यंग्य 'कोरोना बनाम सोना', कोरोना पर पाँच लघुकथाएँ, 'निजी अस्पतालों ने नहीं निभाई जिम्मेदारी', 'कोरोना चिल्ला', 'टीकों पर टिका कोरोना' सभी रचनाएँ खूब पसंद आईं। मगर इस अंक में बच्चों का बाल-संसार न देखकर मन दु:खी हो गया। अगले अंक में आप हमें शिकायत का मौका नहीं देंगे।

—बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान', गोरखपुर (उ.प्र.)

साहित्य अमृत का अक्तूबर अंक मिला। बहुत खुशी हुई कि कोरोना काल में भी 'रजत जयंती अंक' के बाद नियमित अंक भी समय पर आया। संपादकीय बहुत प्रेरक लगा। प्रेमचंद की कहानी 'दुर्गा का मंदिर' बहुत अच्छी लगी। 'कश्मीर के इतिहास में रिंचन भोट की भूमिका' आलेख जानकारी बढ़ानेवाला रहा। कोरोना काल में सुरक्षा हेतु सटीक जानकारी पाठकों के लिए सुंदर उपहार लगा। पंडित जसराज पर स्मरण आलेख उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि है।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' का नवंबर २०२० अंक मिला। वरुण कुमार का आलेख 'कोरोना का द्वंद्व : ईश्वर या विज्ञान' समसामयिक है, जो आज के इस कोरोना काल में कई प्रश्नों को खड़ा करता है। आलेख 'स्वामी विवेकानंद और हिंदी काव्यधारा में राष्ट्रीय चेतना' में लखेश्वर चंद्रवंशी 'लखेश' ने स्वामी विवेकानंद के बरक्स चल रही राष्ट्रीय चेतना को रेखांकित किया है। अमेरिकी कवयित्री लुइस ग्लिक, जिनके पूर्वज हंगरी से आकर अमेरिका में बस गए थे, को स्वीडिश अकादेमी द्वारा वर्ष 2020 का साहित्य का नॉबेल पुरस्कार मिला, जो एक आह्लादक व स्त्री-सापेक्ष घटना है। लुइस ग्लिक की कविताएँ स्त्री-विमर्श को धार तो देती ही हैं, साथ ही जीवन के अंतर्संघर्षों के कई आयामों से परिचित भी कराती हैं। 'लोक-साहित्य' का स्तंभ जनोन्मुखी, अच्छा व सांस्कृतिक है। चित्रकार सिद्धेश्वर के रेखाचित्र बहुत कुछ कहते हैं, जिनमें दर्शन का भाव तो रहता ही है, समाज के यथार्थ और वास्तविकता का भी अंकन होता है।

—रवींद्र प्रसाद सिंह, नई दिल्ली

लंबे समय से मैं 'साहित्य अमृत' का पान कर रही हूँ, यह पत्रिका न होकर हमारे परिवार की सदस्य बन गई है। कोरोना के कारण चार महीने के अंतराल से प्राप्त रजत जयंती विशेषांक ढेरों उत्सुकताएँ और तृप्तिदायक सामग्री लेकर आया। संपादकीय में श्री लक्ष्मीशंकर वाजपेयी ने अपने घर में हिंदी भाषा की विवशताओं पर सारगर्भित विचार व्यक्त किया है। प्रतिस्मृति में रेणुजी की कहानी 'ठेस' दिल को छू गई। बोध-कथाओं ने अंक को और अधिक मूल्यवान बना दिया है। विद्यानिवास मिश्रजी द्वारा लिखित प्रवेशांक का 'संपादकीय' साहित्य अमृत के प्रकाशन के उद्देश्य को भलीभाँति प्रतिपादित करता है। हिमांशु जोशी की कहानी 'दाह' गाँव के शहर बनने की विभिषिका को बखूबी चित्रित करती है। मॉरिशस के लेखक रामदेव धुरंधर की कहानी 'धागे मजबूत' विचारोत्तेजक एक श्रेष्ठ कहानी है। 'कड़वी रोटी' अभिमन्यु अनत की वर्तमान समय की परख करती एक अच्छी कहानी है। प्रेमपाल शर्मा का संस्मरण साहित्य अमृत का 'अमृत' है; अपने शिक्षकों का पुण्य स्मरण हमें अपनी जड़ों से जोड़े रखता है, उनकी यादों के साथ ही जुड़ी होती हैं हमारे निर्माण की प्रकिया, जिसे स्मरण रखकर हम अपने वर्तमान को और सही ढंग से जी सकते हैं। ज्ञानवर्धक आलेखों, सरस कविताओं, रोचक उपन्यास अंशों, चुटीले व्यंग्यों से सुसज्जित रजत जयंती अंक पठनीय और संग्रहणीय है।

—तुलसी देवी तिवारी, बिलासपुर (छ.ग.)

साहित्य अमृत के नवंबर अंक में अपना संस्मरण 'अध्यापक नहीं शिक्षक' प्रकाशित देखकर खुशी हुई। एक बार फिर से अपने आपको शाबाशी दी कि वाह, क्या लिख गए हो! पर जैसे ही आदरणीया सरस्वती मिश्रजी का संस्मरण 'चौथी बेटी' पढ़ा कि स्वयं को दी गई शाबाशी वापस लेने की नौबत आ गई। सरस्वतीजी ने कुल जमा डेढ़ पन्ने में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, उनकी सहधर्मिणी, उनके बेटे, उनकी बेटी और कविजी, यानी अपने पतिदेव रामदरश मिश्रजी का व्यक्तित्व जिस सहजता के साथ सरलतम शब्दों में पाठकों तक पहुँचाया, उतने वर्णन के लिए मैं न जाने कितने पन्ने रँगता, फिर भी इतना कुछ संप्रेषित न कर पाता।

—वीरेंद्र जैन, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का रजत जयंती विशेषांक मिला। अंक को आद्योपांत पढ़कर प्रसन्नता का अतिरेक नहीं रहा। सभी नामी साहित्यकारों की रचनाएँ एक ही अंक में समाहित कर आपने अपनी संपादकीय कुशलता का परचम फहरा दिया है। संपादकीय में आम को मेंगो नहीं कहने पर पिता द्वारा नन्हे पुत्र की पिटाई, कथित इंग्लिश मीडियम स्कूलों में हिंदी बोलने पर विद्यार्थियों को सजा तथा आँख, नाम, कान, मुँह आदि को आईज, नोज, ईअर व माउथ बोलना सिखानेवाली आधुनिक माताओं की मानसिकता, हिंदी के प्रति हमारे दृष्टिकोण व मानसिकता को प्रदर्शित करती है। प्रवेशांक के संपादकीय में आदरणीय मिश्रजी का यह कहना युक्तियुक्त है कि लेखों की भाषा रचना का माध्यम नहीं है अपितु रचना संदेश का अविभाज्य अंग है।

अंक में साहित्य की सभी विधाओं यथा गीत-कविता-गजल-कहानी लघु उपन्यास, लघुकथा, यात्रा वृत्तांत, संस्मरण, साक्षात्कार, आलेख, प्रतिस्मृति, बाल-संसार, व्यंग्य, पाठकों की प्रतिक्रिया, वर्ग पहेली, साहित्यिक आयोजनों व संगोष्ठियों आदि के समाचारों को समाहित किया गया है, जो सराहनीय व प्रेरक हैं। आवरण भी सुंदर व आकर्षक है। कुल मिलाकर यह संयुक्तांक व रजत जयंती विशेषांक हर दृष्टि से प्रशंसनीय व पठनीय है।

—श्यामसुंदर नंदवाना, उदयपुर (राज.)

विशेषांकों की फलित आभा से सुशोभित मुखपृष्ठ लिये 'रजत जयंती विशेषांक' प्राप्त हुआ। विशेषांकों की गौरवशाली परंपरा को अग्रगति देता हुआ यह अंक हमारी 'धरोहर' है और 'विरासत' भी। 'गौरवपूर्ण साहित्यिक शब्द-यात्रा' शीर्षक लिये संपादकीय एक ओर जहाँ सहज-सरल महसूस होता है, वहीं दूसरी ओर वह पाठक को बड़े इत्मीनान से लक्ष्योन्मुख करने की क्षमता भी रखता हुआ अपनी सार्थकता स्वयं सिद्ध कर देता है।

यह अंक 'प्रवेशांक संपादकीय' एवं 'विवेकानंद विशेषांक के संपादकीय' के साथ 'स्मृति शेष' में निरंतर साधनारत साहित्यकारों को विनम्र श्रद्धांजलि देता हुआ साहित्य का संवाहक बन जाता है। संपादक मंडल ने पच्चीस वर्षों की साहित्यिक रचनाओं को उदात्त मनोवृत्ति के साथ सँजोकर सौंपा है, ताकि वह अपनी आभा से जीवन की हर साँस को रोशन करते हुए जगत् को प्राणवान रख सके।

—प्रमिला मजेजी, कोरबा (छत्तीसगढ़)

वर्ग पहेली (१७९)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ दिसंबर, २०२० तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते फरवरी २०२१ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१७७) का शुद्ध हल

१ क	पो	२ त	■	३ स	४ मा	नां	५ त	६ र
थो	■	७ म	८ त	दा	ता	■	९ नु	ति
१० प	११ थ	गा	मी	■	१२ म	१३ ह	रा	■
१४ क	ल	■	१५ ज	१६ ग	ह	ज	ग	१७ ह
थ	■	१८ अं	■	ह	■	म	■	वा
१९ न	२० म	क	२१ ह	रा	२२ म	■	२३ भा	ई
■	२४ क	न	की	■	२५ क	२६ म	र	ख
२७ घा	स	■	२८ क	२९ स	र	त	■	ब
३० त	द	नं	त	र	■	३१ ली	ड	र

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री शिवानंद सिंह 'सहयोगी'**
'शिवाभा', ए-२३३, गंगानगर
मेरठ-२५०००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४१२२१२२५५

२. **श्री वाई.के. श्रीवास्तव**
१३९२ जयनगर, यादव कॉलोनी
जबलपुर-४८२००२ (म.प्र.)
दूरभाष : ९८२७६८३३५७

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १७७ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री विजयपाल सेहलंगिया, खुशी खिच्ची, ब्रह्मानंद खिच्ची, राजकुमार राव (महेंद्रगढ़), रुक्मणी संगल (पटियाला), रमेश उत्प्रेती (गढ़वाल), भूपसिंह (हरिद्वार), जयनारायण प्रसाद (रायबरेली), लीला शाह (पटना), रामप्रकाश राय (गोरखपुर), अजीत कांडपाल, रिसाल सिंह (फरीदाबाद), देव चौरसिया (कटनी), जीतराम, मोनिका सिंह (दिल्ली)।

बाएँ से दाएँ—

१. बुरा एवं निकृष्ट कर्म करनेवाला (४)
४. बड़े आकार का (४)
७. कमरा (२)
८. क्रुद्ध होना (३)
१०. ज्वालामुखी उद्गार द्वारा मैग्मा का धरातल पर प्रकट होना (२)
११. सफाई करना (२,३)
१३. हृदय में गहरा आघात (३)
१५. पक्षियों के सिर पर निकला हुआ बालों का गुच्छा (३)
१७. उपस्थित (३)
१८. घमंड, शेखी (३)
१९. रास्ता, पथ (३)
२१. 'ट' वर्ण (३)
२३. व्यंग्य कसना (२,३)
२६. संसार (२)
२८. खोदने का काम (३)
२९. कील पर घूमनेवाला गोलाकार पत्थर, जिसपर कुम्हार मिट्टी का बरतन बनाता है (२)
३०. तबाही, विध्वंस (४)
३१. खबर (४)

ऊपर से नीचे—

१. व्यर्थ की बात (४)
२. कुशल, प्रवीण (२)
३. सभ्य व्यक्ति (३)
४. स्वर्ण मुद्रा (३)
५. श्याम, स्याह (२)
६. विदाई (४)
९. समस्त, कुल (३)
११. सामाजिक होने का भाव (५)
१२. बदनामी होना (२,३)
१४. किसी भयंकर जंतु का घोर शब्द (३)
१६. बालक (३)
१९. सम्मिश्रण, बिल्कुल (४)
२०. तैयार, तत्पर, उद्यत (३)
२४. समुद्र (४)
२४. अप्रसन्न, नाराज (३)
२५. सेठ, धनवान (३)
२७. स्वाभिमान (२)
२९. पिता का छोटा भाई (२)

वर्ग पहेली (१७९)

१	२		३	■	४		५	६
७		■	८	९		■	१०	
	■	११				१२	■	
१३	१४		■		■	१५	१६	
■	१७			■	१८			■
१९			■	२०	■	२१		२२
	■	२३	२४		२५		■	
२६	२७	■	२८			■	२९	
३०				■	३१			

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१७८) का हल अगले अंक में।

साहित्यिक गतिविधियाँ

कार्यक्रम संपन्न

२० अक्तूबर को नई दिल्ली में भारतीय जन संचार संस्थान द्वारा आयोजित हिंदी पखवाड़े के दौरान हुई विभिन्न प्रतियोगिताओं के पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर महानिदेशक प्रो. संजय द्विवेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। सर्वश्री सतीश नंबूदिरीपाद, आनंद प्रधान एवं नवनीत कौर भी कार्यक्रम में उपस्थित रहे। प्रो. द्विवेदी ने विजेताओं को प्रमाण-पत्र देकर सम्मानित किया। भारतीय जन संचार संस्थान में हिंदी पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं की प्रदर्शनी लगाई गई, साथ ही निबंध, हिंदी टिप्पणी एवं प्रारूप लेखन, हिंदी काव्य पाठ, हिंदी टंकण प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। संचालन श्रीमती विष्णुप्रिया पांडेय ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्रीमती रीता कपूर ने किया। □

वेबिनार संपन्न

विगत दिनों दिल्ली के हिंदू कॉलेज में हिंदी विभाग द्वारा गांधीजी पर एक वेबिनार का आयोजन हुआ, जिसमें श्री रमाशंकर सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। छात्रों के साथ प्रश्नोत्तर सत्र चला, जिसका संयोजन श्री श्रेयस श्रीवास्तव ने किया। डॉ. नौशाद अली ने लेखक परिचय दिया। विभाग के अध्यापक, विद्यार्थी और शोधार्थियों के साथ अन्य महाविद्यालयों के अध्यापकों ने सहभागिता की। श्री राहुल कसौधन ने आभार व्यक्त किया। □

अनुशंसाएँ आमंत्रित

श्री मध्यभारत हिंदी साहित्य इंदौर द्वारा प्रतिवर्ष साहित्यकारों को 'समिति शताब्दी सम्मानों' से विभूषित किया जाता है, जिसके अंतर्गत एक लाख रुपए की सम्मान राशि देश के किसी प्रतिष्ठित साहित्यकार को और एक लाख रुपए की राशि प्रदेश के साहित्यकार को उनके समग्र साहित्यिक अवदान के लिए भेंट की जाती है। साहित्यानुरागियों से इस हेतु सुझाव आमंत्रित हैं। अपनी स्तुतियों के साथ संबंधित साहित्यकार के संपूर्ण साहित्यिक अवदान की जानकारी व अनुशंसाएँ संयोजक, श्री मध्यभारत हिंदी साहित्य समिति, ११ रवींद्रनाथ टैगोर मार्ग, इंदौर-४५२००१ पर ३१ दिसंबर, २०२० तक भेज सकते हैं। □

जयंती समारोह संपन्न

२१ अक्तूबर को लखनऊ में डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' के आवास पर उनके जयंती समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें डॉ. कमला शंकर त्रिपाठी ने अध्यक्षीय संबोधन दिया। इस अवसर पर सर्वश्री योगींद्र द्विवेदी, आलोक मिश्र, मुकुल मिश्र तथा अनिल मिश्र उपस्थित रहे। डॉ. निशंक द्वारा रचित वाणी वंदना की प्रस्तुति सुश्री अंजना मिश्र द्वारा की गई। अभ्यागतों का स्वागत डॉ. आलोक मिश्र ने किया। श्री योगींद्र द्विवेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। डॉ. निशंक के प्रसिद्ध गीत 'मेरे गीत न गा पावोगे, मेरे करुणा-कलित कंठ से अपना स्वर न मिला पावोगे' का सस्वर पाठ श्री मुकुल मिश्र ने किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिंदी भवन, भोपाल द्वारा प्रतिवर्ष अखिल भारतीय स्तर पर साहित्य की विभिन्न विधाओं पर पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं। इस वर्ष भी लेखकों से प्रविष्टियों हेतु पुस्तकें आमंत्रित करने के साथ ही पुरस्कार के लिए अनुशंसाएँ भी आमंत्रित हैं, जिसमें इक्यावन हजार रुपए का 'श्री नरेश मेहता स्मृति वाङ्मय सम्मान' साहित्येतर ज्ञान विषयों जैसे इतिहास, दर्शन, अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र, विज्ञान, पुरातत्त्व आदि में हिंदी में मौलिक योगदान के लिए दिया जाएगा। इक्कीस हजार रुपए का 'श्री शैलेश मटियानी कथा सम्मान' पचास वर्ष से कम आयु के लेखक को दिया जाएगा। इक्कीस-इक्कीस हजार रुपए के 'श्री वीरेंद्र तिवारी रचनात्मक सम्मान', 'श्री सुरेश शुक्ल 'चंद्र' नाट्य पुरस्कार' एवं 'डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय आलोचना पुरस्कार' दिए जाएँगे। सम्मानों तथा पुरस्कारों के लिए लेखक अपनी प्रविष्टि अथवा लेखकों के नामों की अनुशंसा के साथ ही कृतियों की दो-दो प्रतियाँ, छाया-चित्र, परिचय तथा फोन और इ-मेल की पूरी जानकारी ३१ दिसंबर तक मंत्री संचालक, म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिंदी भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल-४६२००२ पर भेज सकते हैं। □

हेलो फेसबुक कवि सम्मेलन संपन्न

२८ अक्तूबर को पटना में भारतीय युवा साहित्यकार परिषद् के तत्त्वावधान में फेसबुक के 'अवसर साहित्यधर्मी पत्रिका' के पेज पर 'हेलो फेसबुक कवि सम्मेलन' का आयोजन श्री सिद्धेश्वर के संचालन में किया गया, जिसमें सर्वश्री किसन लाल अग्रवाल, शरद नारायण खरे, पूजा गुप्ता, सतेंद्र नाथ वर्मा, घनश्याम, मधुरेश नारायण, प्रियंका श्रीवास्तव 'शुभ्र' समेत लगभग दो दर्जन से अधिक रचनाकारों ने अपनी कविताओं का पाठ किया। अध्यक्षता श्रीमती संतोष गर्ग ने की तथा मुख्य अतिथि श्री शैवाल सत्यार्थी थे। □

सम्मान समारोह संपन्न

१४ सितंबर को प्रयागराज में हिंदी दिवस के अवसर पर साहित्यिक पत्रिका 'साहित्यांजलि प्रभा' द्वारा सम्मान-समारोह आयोजित किया गया। इस अवसर पर छत्तीसगढ़ की कथाकार श्रीमती तुलसी देवी तिवारी के कथा-संग्रह 'इंतजार एक औरत का' को 'हिंदी साहित्य सेवी सम्मान' से विभूषित किया गया। इस सम्मान के लिए देशभर से कथा-कृतियाँ आमंत्रित की गई थीं। □

कार्यक्रम संपन्न

१० नवंबर को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा हिंदी साहित्य मंच कार्यक्रम का वर्चुअल लाइव आयोजन किया गया, जिसमें श्री पंकज सुबीर और श्रीमती लक्ष्मी शर्मा ने अपनी कहानियाँ प्रस्तुत कीं। संचालन साहित्य अकादेमी के हिंदी संपादक श्री अनुपम तिवारी ने किया। □

डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल सम्मानित

१२ अक्तूबर को डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल को विधि एवं न्याय मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा उनकी पुस्तक 'भारत का संविधान' के लिए

बीस हजार रुपए की राशि पुरस्कारस्वरूप प्रदान की गई। साथ ही उन्हें हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा 'साहित्य महोपाध्याय' तथा बुंदेलखंड विश्वविद्यालय द्वारा बुंदेलखंड रत्न सम्मान से भी सम्मानित किया गया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

१४ जनवरी को पं. विद्यानिवास मिश्र के जन्म-दिवस समारोह के अवसर पर विद्याश्री न्यास एवं 'साहित्य अमृत' पत्रिका के संयुक्त तत्त्वावधान में युवा समवाय के अंतर्गत निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। विद्याश्री न्यास द्वार प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया जाएगा तथा चयनित निबंध का 'साहित्य अमृत' पत्रिका में प्रकाशन भी होगा। १४ जनवरी, २०२१ तक ३५ वर्ष तक के प्रतियोगी अपनी मौलिक रचना दयानिधि मिश्र, सचिव विद्याश्री न्यास, अभिलाषा कॉलोनी वरुना पुल, नदेसर-२, वाराणसी को अथवा संपादक, 'साहित्य अमृत' को स्वप्रमाणित आयु प्रमाण-पत्र सहित ५ जनवरी, २०२१ तक डाक से या इ-मेल dayanidhimishra@gmail.com पर भेज सेकते हैं। □

'यह आम रास्ता नहीं है' कृति विमोचित

विगत दिनों गुरुग्राम में 'व्यंग्य यात्रा' व इंडियानेट बुक्स के संयुक्त तत्त्वावधान में श्री कमलेश भारतीय के नव प्रकाशित कथा-संग्रह 'यह आम रास्ता नहीं है' के विमोचन में श्री राहुल देव ने अपने विचार रखे। सर्वश्री प्रेम जनमेजय, संजीव कुमार, अनूप लाठर, आशा कुंद्रा ने कृति का विमोचन किया। मुख्य अतिथि श्री राहुल देव तथा अध्यक्षता डॉ. प्रेम जनमेजय ने की। मुख्य वक्ता श्री अनूप लठार थे। कार्यक्रम के आयोजक डॉ. संजीव कुमार थे। श्रीमती रेणु हुसैन ने अपनी गजलें प्रस्तुत कीं। श्रीमती आशा कुंद्रा ने संस्कृत श्लोकों के साथ कार्यक्रम का संचालन किया। □

साहित्यिक क्षति

सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्रीमती मृदुला सिन्हा नहीं रहीं

१८ नवंबर को हिंदी की सुप्रसिद्ध साहित्यकार एवं गोवा की पूर्व राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा का देहांत हो गया। वे ७८ वर्ष की थीं। उनका जन्म २७ नवंबर, १९४२ को मुजफ्फरपुर (बिहार) में हुआ। वे सुविख्यात लेखिका के साथ-साथ गोवा की राज्यपाल रहीं; भाजपा महिला मोर्चा की राष्ट्रीय अध्यक्ष एवं केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड की अध्यक्ष भी रहीं। विभिन्न विधाओं में ६५ से अधिक पुस्तकें, जिनमें 'राजपथ से लोकपथ पर' (राजमाता विजयाराजे सिंधिया की जीवनी), 'नई देवयानी', 'ज्यों मेहँदी को रंग', 'घरवास', 'सीता पुनि बोली', 'अहिल्या उवाच', 'अतिशय', 'विजयिनी' (उपन्यास), 'यायावरी आँखों से', 'आईने के सामने', 'मानवी के नाते' (लेख-संग्रह), 'देखन में छोटे लगें' (कहानी-संग्रह), 'बिहार की लोककथाएँ' (दो भाग) अत्यंत चर्चित रहीं। मासिक पत्रिका 'पाँचवाँ स्तंभ' की वे संस्थापक संपादक थीं। अनेक राजनीतिक एवं सामाजिक जिम्मेदारियाँ सफलतापूर्वक निभाईं। उनकी विभिन्न कृतियों पर पाँच टेली फिल्में बनीं। देश के प्रतिष्ठित पुरस्कार एवं सम्मानों से वे अलंकृत की गईं। □

साहित्य अमृत परिवार की ओर से
दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।

स्वयं पढ़ें, औरों को भी पढ़ाएँ।

साहित्य अमृत
(मासिक)
साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक

संस्थापक संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

संपादक
लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

पूर्व संपादक
स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी • स्व. श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

विशेषांकों की समृद्ध परंपरा

हिंदी पाठकों में पठन-रुचि विकसित करने तथा उन्हें संस्कारप्रद साहित्य उपलब्ध कराने के उद्देश्य से अगस्त 1995 से निरंतर प्रकाशित होकर बहुचर्चित-बहुप्रशंसित। नए तथा पुराने साहित्यकारों की श्रेष्ठ और मौलिक रचनाएँ हर माह आपके लिए, जिनमें आप पढ़ेंगे– उपन्यास अंश, कहानी, व्यंग्य, कविता, यात्रा-वृत्तांत, निबंध तथा अन्य स्थायी स्तंभ; साथ में ईनामी वर्ग पहेली।

सदस्यता शुल्क
भारत में
एक अंक—₹ 30
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ 300
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ 400
विदेश में
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$ 4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$ 45)

बैंक का विवरण
साहित्य अमृत
खाता सं. - 600120110001052
बैंक ऑफ इंडिया
IFSC Code - BKID0006001

कृपया यहाँ से काटें

साहित्य अमृत सदस्यता-प्रपत्र

साहित्य अमृत की वार्षिक सदस्यता हेतु ..... रुपए का NEFT/ड्राफ्ट/चैक क्र. .....
दिनांक ..... बैंक ..... भेज रहे हैं। कृपया वार्षिक सदस्य बनाने का कष्ट करें।
नाम : .....
पता : .....
फोन : ..... मोबाइल : ..... इ-मेल : .....

भारत सरकार (गृह मंत्रालय) के राजभाषा विभाग के पत्रांक 11014/8/96-रा.भा. (प) द्वारा केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/स्वायत्त निकायों/संस्थानों आदि के लिए अनुमोदित।

पत्रिका मँगाने के लिए शुल्क 'साहित्य अमृत' के नाम 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002 पर भेजें।
इ-मेल : sahityaamritindia@gmail.com
फोन : 011-23257555, 8448612269

भारत की सांस्कृतिक अस्मिता और जातीय सभ्यता की संवाहिका संस्कृत

• विनोद कुमार मिश्र

सदियों से संस्कृत भाषा भारत की राष्ट्रीय अस्मिता की आधारशिला व प्राणवायु रही है। प्राय: सभी राष्ट्र अपनी सांस्कृतिक ऊर्जा को अपने देश की शास्त्रीय भाषाओं से सक्षम बनाते हैं। संस्कृत भारत की एकमात्र शास्त्रीय भाषा है, जिसने भारतीय मनीषा को उदात्त और उदग्रीव बनाया और पूरा विश्व भारतीय मनीषा का ऋणी बना। वेद, आगम-निगम-पुराण, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, गीता, व्याकरण, आयुर्वेद, ज्योतिष, गणित, खगोल विज्ञान, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, न्यायशास्त्र, रसशास्त्र, कामशास्त्र, वास्तुशास्त्र सहित अनेक उत्कृष्ट महाग्रंथों का प्रणयन दुनिया की सबसे वैज्ञानिक और सक्षम देवभाषा संस्कृत में हुआ। ये ग्रंथ भारतीय मनीषा के अनवरत चिंतन और मनन के सुपरिणाम हैं। भारत द्वारा इन ग्रंथों के रूप में संपूर्ण विश्व जन-मन को दी जाने वाली अब तक की श्रेष्ठतम सौगात है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि हर कृति के मूल में राष्ट्र की हित चिंता रही है। समाज इतिहास, भाषा, संस्कृति, परंपरा और विचार के पंच नद से ही संस्कृत की रचनात्मक धारा का प्रवाह सदियों से प्रवाहित होता रहा है। इन धाराओं को हमेशा किसी न किसी भगीरथ की प्रतीक्षा रहती है, ताकि उन्हें सौंप कर अपने कर्तव्य व दायित्व के अनुपालन से मुक्त हो सकें। फिर आगे का दायित्व निर्वहन संस्कृत के भगीरथ को करना होगा, फिर भगीरथ उस धारा को अक्षुण्ण बनाते हुए संस्कृति और भारतीय सभ्यता के गंगा के प्रवाह को निरंतरता प्रदान करेंगे। माँ भारती का दुर्भाग्य रहा कि हम भगीरथों ने उस माँ की परवाह किए बगैर उसकी धारा को सूख जाने दिया।

संस्कृत भाषा शिक्षा की मजबूत बुनियाद रखती है और एक नए युग में प्रवेश कराती है। यह भाषा मात्र विचारों को आगे नहीं ले जाती, वरन् वह स्वयं संस्कृति के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जातीय सभ्यता का प्रतीक गढ़ती है और सामाजिक चेतना का विराट् सांस्कृतिक इतिहास भी लिखती है तथा शिक्षित कर मानव-मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है—'सा विद्या या विमुक्तये' का स्वर मुखरित कर राष्ट्र-निर्माण में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है व जातीय सभ्यता की सार्वभौमिक पहचान बनाने का मार्ग भी प्रशस्त करती है। संस्कृत की कड़ाही में पककर कुंदन बन भारतीय शिक्षा मृण्मय से चिन्मय की यात्रा कराती है। संस्कृत ऐसी ही भाषा है, जो मानव मात्र को चिन्मय बनाती है और हाँ, किसी भी भाषा का आधार केवल भाषाई संप्रेषण और उसकी रचना की समसामयिकता से नहीं बनता। भाषा के सांस्कृतिक आधार की गौरवशाली परंपरा की निर्मिति ऋषियों द्वारा अनवरत की गई तपश्चर्या व साधना की देन होती है और संस्कृति की संरचना के पीछे सांस्कृतिक परंपरा की सर्जनात्मक शक्ति पूरी सक्रियता के साथ खड़ी रहती है। भाषा की शक्ति, संप्रेषण व शिक्षा के व्यावहारिक विस्तार भाषा को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में सर्वोच्च स्थान प्रदान करते हैं। संस्कृत ने तमाम विघ्न-बाधाओं के बावजूद हजारों वर्षों की ऐतिहासिक यात्रा में संप्रेषण से शास्त्रीय भाषा तक की यात्रा में उपलब्धियों के कई महत्त्वपूर्ण मानकों का निर्माण तो किया ही है, साथ ही मजबूत बंधन का भी निर्माण किया है, जो अनंत काल तक राष्ट्र को बिखरने व टूटने के खतरे से बचाते हुए एक सूत्र में बाँधकर रखने की शक्ति से सुसंपन्न बनाया है। संस्कृत कवच बन समूची मानवता को वैचारिक पराधीनता से मुक्त भी कराने की शक्ति रखती है। हम यह जानते हैं कि सांस्कृतिक पराधीनता राष्ट्र को खंड-खंड कर देती है और खंडित राष्ट्रीयता भाषा और शिक्षा को नहीं बचा सकती है। भाषा से शिक्षा और शिक्षा से संस्कृति बचेगी, फिर संस्कृति की मदद से राष्ट्र को अचल और अटल बनाए रखने से कोई रोक नहीं सकता। अत: हर हाल में संस्कृत भाषा के संरक्षण व संवर्धन की दिशा में सार्थक पहल की जानी ही चाहिए और स्वभाव के स्तर पर, संस्कार के स्तर पर और चिंतन

सुपरिचित लेखक-अध्यापक। अब तक ५ पुस्तकें, ३० आलेख प्रकाशित। पूर्व में प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, त्रिपुरा केंद्रीय विश्वविद्यालय। २० राष्ट्रीय व १२ अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी, सम्मेलन, २० कार्यशाला विभिन्न विषयों पर। विभिन्न विश्वविद्यालयों/संस्थाओं की अकादमिक समितियों के सदस्य। संप्रति महासचिव, विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस।

के स्तर पर संस्कृत शिक्षा को जीवन और जगत् के व्यवहार के अनुकूल बनाना भी अपरिहार्य है अन्यथा सांस्कृतिक स्वाधीनता को प्राप्त करना और उसे बचाए रखना दुष्कर हो जाएगा। इतिहास हमें कदम-कदम पर याद दिलाता है कि हम शस्त्र-ज्ञान के अभाव में नहीं बल्कि शास्त्र-ज्ञान के अभाव में अपनी राष्ट्रीयता को खोते चले गए। देश खंड-खंड होता चला गया। आर्यावर्त की सीमाएँ सिमटती चली गईं। शस्त्र के अभाव में मिली हार को फिर से जय में बदल सकते हैं, क्योंकि शास्त्र हमें अतीत के गौरव का अहसास और वर्तमान के संघर्ष को मजबूती और भविष्य के लिए अखंड राष्ट्र के सपने को साकार बनाए व बचाए रखने के लिए दिशानिर्देश भी देते हैं। पिछले ५-६ वर्षों में भारत का सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक परिवेश बदला है, भाषा और संस्कृति के बसंत की आहट भी सुनाई दे रही है, किंतु आवश्यकता प्रत्यक्ष दिखाई देने की है, परिवर्तन दिखना भी चाहिए। हम शास्त्र की ताकत को समझें और संस्कृत के संरक्षण और संवर्धन के लिए संघ-बद्ध प्रयत्न करें। हजारों वर्षों की दासता के बाद हम संकुचित होते गए और राष्ट्रीयता का स्थान क्षेत्रीयता ने ले लिया। विनम्रता का त्याग कर स्पष्ट रूप से कहना चाहूँगा कि पाश्चात्य के छद्म दृष्टिकोण के प्रभाव में गढ़ी गई मैकाले वाली शिक्षा व्यवस्था से साक्षरों के साथ-साथ मानसिक गुलामी से उपजे अंग्रेजीदाँ कुपढ़ों की संख्या भी खूब बढ़ी, जिन्हें सुधारकर समाज और देश के लिए उपयोगी बनाया न जा सका। तथाकथित मुट्ठी भर शिक्षित व पश्चिमी वैचारिकी का लबादा ओढ़े लोगों ने अवसरवादी सुविधाओं की लालसा में हमारा इतिहास और भूगोल बदलकर रख दिया। हमारी शास्त्रीय व सनातन चिंतन और शिक्षण की परंपरा को नकारते हुए पश्चिम के चश्मे से हमें जैसा दिखाया, हमने वैसा ही देखा। कर भी क्या सकते थे? आज भी हम उस मनोदशा से मुक्त कहाँ हो पाए हैं? किंतु सहनशीलता की कोई सीमा तो होनी ही चाहिए। कम-से-कम अब हमें तथाकथित धर्मनिरपेक्ष शिक्षा के नाम पर परोसने वालों को कठघरे में खड़ा करना होगा और विरोध के स्वर को ऊर्ध्वगामी बनाना होगा। काश! आजादी के बाद से ही इस तरह की प्रतिरोधी संस्कृति विकसित की गई होती, प्रतिवाद किए गए होते। खैर, अब पूर्व में जो कुछ घटा उसे भूलकर भविष्य की ओर—सतत अग्रसर होने का सही वक्त आ गया है।

खैर, राष्ट्र नायकों की नींद तो टूटी और शिक्षा के नीति-नियंताओं ने कम-से-कम नई शिक्षा नीति की घोषणा तो की। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति, जिसका माध्यम संस्कृत थी, संस्कृति के प्रति सजग और उदार रही है। जिसका परिणाम यह रहा कि शिक्षा और संस्कृति दोनों अपने-अपने अतीत, वर्तमान व भविष्य के साथ सजग और साक्षी भाव से खड़े दिखे। किंतु ध्यान रहे, जब-जब शिक्षा और संस्कृति अपनी सनातन परंपरा के साथ खड़ी दिखी, परंपरा श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर बनती चली गई। यद्यपि हम सभी जानते हैं कि हमारी सनातन परंपराएँ अतीत के प्रति विनम्रता और भविष्य के प्रति आदर का भाव रखती हैं।

वर्तमान परिदृश्य में बदलते सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास परिलक्षित होता दिखाई दे रहा है। एक नए किस्म की अपसंस्कृति के भयावह चेहरे को हम देख पा रहे हैं। सामाजिक-सांस्कृतिक सरोकारों से जन-मन को दूर किया जा रहा है तथा भोगवादी जीवन-दृष्टि की जकड़न को सहज ही महसूस किया जा रहा है। अनेक विकृतियाँ जन्म ले विस्तार पा रही हैं। तथाकथित आधुनिकता एवं झूठे विकास का बेसुरा ढोल पीट रही हैं और भ्रमित सुसभ्य और सुसंस्कृत समाज आज सामाजिक ताने-बाने को तोड़कर फेंक चुका है, मर्यादाएँ थक कर मौन हो गई हैं। भूमंडलीकृत पूँजीवादी अहंकारी चेहरा और अनैतिकता के घाल-मेल से एक नई अपसंस्कृति का जन्म हुआ है। इससे तब मुक्ति संभव होगी, जब सक्षम भाषा में मूल्यपरक शिक्षा सामाजिक व सांस्कृतिक सरोकारों को सामने रखकर अपनी सक्रिय उपस्थिति दर्ज करेगी। फिर उसके लिए एकमात्र सक्षम भाषा संस्कृत ही हो सकती है, साथ में समृद्ध भारतीय भाषाओं का एक मजबूत समूह भी तो है, जिसका उत्स भी संस्कृत ही है। तब कहीं जाकर शायद अपसंस्कृति के मुखौटे को फेंक शिक्षा के नए मानक भारतीयता से संपृक्त जीवन-मूल्यों को केंद्र में रखकर तय किए जा सकेंगे। कहा गया है—

'सबकुछ लुटा के होश में आए तो क्या हुआ?'

खैर, राष्ट्र नायकों की नींद तो टूटी और शिक्षा के नीति-नियंताओं ने कम-से-कम नई शिक्षा नीति की घोषणा तो की। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति, जिसका माध्यम संस्कृत थी, संस्कृति के प्रति सजग और उदार रही है। जिसका परिणाम यह रहा कि शिक्षा और संस्कृति दोनों अपने-अपने अतीत, वर्तमान व भविष्य के साथ सजग और साक्षी भाव से खड़े दिखे। किंतु ध्यान रहे, जब-जब शिक्षा और संस्कृति अपनी सनातन परंपरा के साथ खड़ी दिखी, परंपरा श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर बनती चली गई। यद्यपि हम सभी जानते हैं कि हमारी सनातन परंपराएँ अतीत के प्रति विनम्रता और भविष्य के प्रति आदर का भाव रखती हैं। संस्कृति का संसार सदैव सकारात्मकता और नैतिकता के घेरे में रहता है। युगीन दबाव से ऊपर उठने की अनवरत चेष्टा और छटपटाहट संस्कृति की सत्ता का एक विशेष उद्देश्य होता है। मूल्यों की धारा टूटन, घुटन और विघटन के रास्ते बहती अवश्य है, किंतु इस बहाव में प्रतिसंस्कृतियों को भी स्थान मिलता है। सांस्कृतिक प्रवाह जब-जब अपने आवेग की तीव्रता को शांत करता है, अमृतमयी धारा बन बसुंधरा को रससिक्त बनाने का उपक्रम भी करता है।

धीरे-धीरे वह सामुदायिक जीवन पद्धति का अंग भी बनता है। धारा का वह प्रवाह, मात्र संस्कारों, व्यवहारों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि उसमें सांस्कृतिक संभावनाओं के श्रेष्ठ तत्त्व भी विद्यमान रहते हैं। आदर्श की संकल्पना संभावनाओं को चिह्नित करती है, परिणामस्वरूप

सांस्कृतिक संपन्नता शिक्षा को भी संपन्न बनाती है और फिर उसके सहारे हमारी वैचारिकी युग धर्म के अनुसार अपनी यात्रा को पूरी करती है। यह सर्वविदित है कि सदियों से मानव-मन प्रतीकों और मिथकों में ही जीता रहा है। प्रतीकों और मिथकों से हमारे संस्कृत के ग्रंथ भरे पड़े हैं। शिक्षा उन प्रतीकों और मिथकों के सहारे सृजन का माध्यम बन लोक-मानस की संवेदना को आकर देती है। क्योंकि लोक-मानस ही संस्कृति पर वैचारिकी की मुहर लगाता है तथा संस्कृति को परिभाषित करने की क्षमता केवल शिक्षा से ही प्राप्त की जा सकती है। जब समुन्नत संस्कृति होगी, तब शिक्षा प्रांजल व समृद्ध और राष्ट्र सचेतन और उद्‌बुद्ध होगा और भाषा, शिक्षा और संस्कृति तीनों के अन्योनाश्रित संबंध को मजबूती भी मिलेगी, किंतु जैसे ही संस्कृति में उपभोक्तावादी मूल्यों की मिलावट हुई, शिक्षा उसके हाथ की कठपुतली बन जाएगी। फिर तथाकथित विकास के औपनिवेशिक चरित्र के साथ भाषाई अस्मिता को बचाए रखना कठिन हो जाएगा, साथ ही साथ सांस्कृतिक वैविध्य को भूमंडलीकृत अर्थव्यवस्था से क्षत-विक्षत होने का खतरा भी और बढ़ जाएगा और तब असंवेदनशील और अर्थ के इर्द-गिर्द घूमती दुनिया के कई हिस्से के रूप में तब्दील होने की आशंका भी बढ़ेगी ही। इस प्रकार हठपूर्वक सृजित नए परिवेश में जीने की अनिवार्यता एक विवशता भी बन जाएगी, फिर सांस्कृतिक गुलामी की पृष्ठभूमि तैयार होने में देर नहीं लगेगी और स्वाधीन देश की स्वाधीन चेतना के दूषित होने का खतरा कई गुना बढ़ जाएगा। तब नए सिरे से उक्त बंधनों से मुक्ति के लिए पुन: आंदोलन धर्मी सोच को उठ खड़ा होना होगा, तभी भाषा, शिक्षा और संस्कृति के महत्त्वपूर्ण घटकों के सहारे राष्ट्र की बुनियाद को मजबूती प्रदान की जा सकेगी।

विगत कई सदियाँ संस्कृत की रचनाधर्मिता की गौरवशाली व उत्कृष्ट परंपरा की संवाहिका रही हैं और इसके साहित्य ने सर्वदा भौगोलिक सीमाओं को अतिक्रमित कर बंधन से मुक्ति की महायात्रा को सातत्य प्रदान करने में सफलता भी पाई है। श्रेष्ठ साहित्य ही संस्कृति को अधिष्ठाता बनाता है। जो समाज अथवा समूह अपनी भाषिक संपदा से सुसंपन्न शिक्षा और साहित्यिक समृद्धि पर गर्व और गौरव का अनुभव करता है, वह अपनी संस्कृति और सभ्यता के प्रति हीनता-बोध का शिकार होने से बचाता है और जातीय छवि को प्रतिबिंबित न होते देख पाने की पीड़ा का शमन भी करता है।

भाषिक संपदा से सुसंपन्न साहित्य सत्य की साधना-भूमि पर शिवत्व की वैश्विक कामना करते हुए सौंदर्य की व्यापक दृष्टि विकसित करता है। साहित्य समय सापेक्ष होता है और समय विमर्श के सहारे साहित्य को निरंतर संघर्ष के पथ पर आगे बढाता है, ताकि वह अपने भीतर प्रतिरोध की क्षमता विकसित कर ज्ञान, सत्य एवं प्रतिभा के सहारे श्रेष्ठतम कृतियाँ रच सके। इतना ही नहीं, यह एक और आश्वस्ति के भाव से अतीत की श्रेष्ठता को वर्तमान की झोली में डाल 'हित' और 'सहित' भाव का उद्‌घोष करते हुए अपने कर्तव्य-बोध की अनुभूति कराते हुए समाज को पारंपरिक आचरण के अनुपालन की सीख देता भी है। साहित्य और समाज के इस मजबूत संबंध को सर्जक विश्व जन-मन की आशाओं और आकांक्षाओं से परिपूर्ण करता है तथा भाषा, रंग और नस्ल की संकीर्णताओं से काफी दूर 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की सनातन भाव-भूमि का दर्शन कराता है, फिर एक नए सांस्कृतिक वैश्विक मंच की स्थापना का मार्ग भी प्रशस्त होता है, संसार के सारे भेद तिरोहित हो जाते हैं। प्रेम, सौहार्द व भाई-चारे से ओत-प्रोत लोकतांत्रिक मूल्यों और मानव अधिकारों की गूँज पूरी वसुधा में सुनाई देने लगती है। साहित्यिक ऊर्जा के अभाव में प्राय: स्मृति के घने वन में खो जाने तथा उसके नष्ट होने का भय बना रहता है। संस्कृति और साहित्य की वैचारिकी एक ही धरातल पर स्थित होती है, अपनी भाषा में रचा गया साहित्य व्यक्ति और समाज दोनों को स्वाधीनतापूर्वक जीने की उर्वर जमीन तैयार करता है। जातीय एकता, समरसता, समानता और सौहार्द का वातावरण जिन कारणों से सृजित हो पाता है, उनमें से महत्त्वपूर्ण है—आध्यात्मिक चिंतन। आध्यात्मिकता की भावभूमि पर रचा गया साहित्य शाश्वत व कालजयी होता है और वह अपनी प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति के माध्यम से समाज को दिशा-निर्देश देता है। साहित्य सुषुप्त ज्वालामुखी भी होता है, जो अपने भीतर क्रांति के बीज छिपाए रहता है। समय पाकर वही विशाल वटवृक्ष बन सार्वभौम स्वीकृति प्राप्त करता है। वैदिक साहित्य से लेकर लौकिक साहित्य की सहस्त्रों वर्षों की अनवरत यात्रा, वाल्मीकि से शुरू होकर महर्षि व्यास, बुद्ध व शंकराचार्य तक अनवरत जारी रही। अनगिनत कालजयी ग्रंथों के रूप में समूचे विश्व को ज्ञान, कर्म, भक्ति, वैराग्य और राज-धर्म की सर्वोत्तम कृतियाँ प्राप्त हुईं, जिनके वास्तविक प्रकाश से सुसंस्कृत समाज के निर्माण की महत्त्वपूर्ण पीठिका तैयार हुई और एक सुसभ्य और मजबूत लोकतंत्र वाला राष्ट्र बना और भारतीय जनमानस को भारतीयता से ओतप्रोत किया। ध्यान रहे, भारतीयता मात्र संकल्पना नहीं बल्कि आध्यात्मिकता से ओतप्रोत एक विशेष जीवन शैली है। यह कोई पोटली में रखी हुई वस्तु नहीं, बल्कि वह रस से परिपूर्ण घट है, जिसमें बूँद-बूँद संचित वैचारिकता तथा वह भारतीय लोक-मानस है, जिसमे प्राकृत जन की शाश्वत उपस्थिति है, सनातन की कालातीत भावना से ओत-प्रोत स्वीकार की भावना है। भारत के कई संस्कृति कर्मियों ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की जो धारा बहाई, उसकी याद में पूरा भारत एकात्म हो पुन: जाग्रत् हो गया। भारत के खोए हुए गौरव व आत्मसम्मान को पुनर्स्थापित करने में सफलता भी प्राप्त की। यह तब हो सका, जब संस्कृत भाषा एक सशक्त आधार बनी।

आज फिर एक बार वक्त ने दस्तक दी है। अब हमें गढ़ों-मठों को तोड़, इतिहास की धारा को मोड़ पुन: उस प्राचीन ऋषि-परंपरा की ओर मोड़ना होगा, जहाँ हमारी देव भाषा संस्कृत गद्‌गद हो मुक्त हस्त से हमें साहित्य संस्कृति और कला से परिपूर्ण हमारा गौरवपूर्ण अतीत वर्तमान की झोली में डाल भविष्य के लिए दिशा-निर्देश दे हमारा मार्ग प्रशस्त करती हुई अपने सर्वोच्च सिंहासन पर आरूढ़ हो एक बार फिर विश्व-जन-मन की संवाहिका बनने के लिए प्रस्थान करे।

सु.अ.
महासचिव
विश्व हिंदी सचिवालय,
मॉरीशस
e-mail : sg@vishwahindi.com